संगीत नाटक अकादेमी की त्रैमासिक पत्रिका

ISSN 2454-8456

संगना

अप्रैल - सितम्बर, 2017 (संयुक्तांक)
मूल्य 100 रुपये
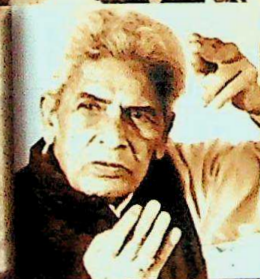
अभिलेखों में प्रदर्शन कलाओं का संसार

कला विभूतियों की जन्म-शताब्दी पर

संगीत नाटक अकादेमी, नयी दिल्ली की प्रणति

1917 - 2017

रामगोपाल
(नृत्य)
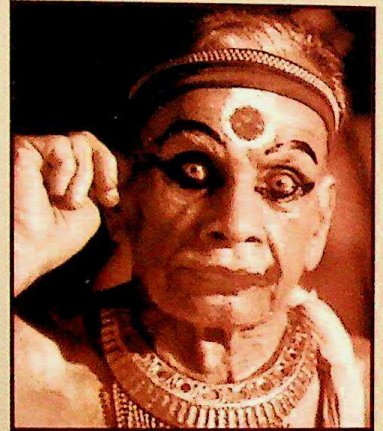
अम्मानुर माधव चाक्यार
(कूटियाट्टम)

बिजान भट्टाचार्य
(नाट्य लेखन)

राधिका मोहन मैत्रा
(वाद्य संगीत : सरोद)

वर्ष 7 : अंक 26-27 (अप्रैल-जून, 2017-जुलाई-सितंबर, 2017)

संगीत नाटक अकादेमी की त्रैमासिक पत्रिका

प्रकाशक

ऋतास्वामी चौधरी

सचिव

संपादक

यतीन्द्र मिश्र

संगीत नाटक अकादेमी

संगना
वर्ष 7 : अंक 26-27 (अप्रैल-जून, 2017-जुलाई-सितंबर, 2017)

प्रकाशक : सचिव, संगीत नाटक अकादेमी

संपादकीय कार्यालय :
संगीत नाटक अकादेमी,
रवीन्द्र भवन, 35 फिरोजशाह रोड,
नई दिल्ली-110001

टेलीफ़ोन : 23387246, 23387247, 23382495
एक्सटेंशन : 136, 122
फ़ैक्स : 23385715/ 23382659

ई-मेल : rajbhasha@sangeetnatak.gov.in
sangana.sna@gmail.com
वेब साइट : http://www.sangeetnatak.gov.in

आवरण : राजीव

साधारण अंक का मूल्य : 100 रुपये

SANGANA :
Rabindra Bhavan
35, Feroze Shah Road, New Delhi 110 001

सचिव, संगीत नाटक अकादेमी द्वारा प्रकाशित तथा विकास कम्प्यूटर एण्ड प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032 में मुद्रित।

अनुक्रम

सम्पादकीय

संगीत नाटक अकादेमी की त्रैमासिक हिन्दी पत्रिका 'संगना' का यह अंक, अकादेमी के अभिलेखों में संरक्षित प्रदर्शनकारी कलाओं के वृहत्तर संसार पर एक आभार-ज्ञापन की तरह प्रस्तुत है। सन् 1952 में जब यह अकादेमी स्थापित हुई, तब से आज तक संगीत, नृत्य, नाटक तथा अन्यान्य लोक-कला रूपों के मूर्धन्य और महान कलाकारों के जीवन और कृत्तित्व को बातचीत के माध्यम से रेकॉर्ड करते हुए संरक्षित करती आ रही है। इस सार्थक प्रयास में उन कलाकारों की कलाओं से सम्बन्धित प्रदर्शनों को भी उस विषय के आधिकारिक विद्वानों के साथ बातचीत करते हुए संग्रहीत किया गया है। इस बहाने इस ऐतिहासिक दस्तावेज़ निर्माण में इस अकादेमी के विगत छह दशक गये हैं, जिनसे गुजरकर हमें इतिहास की कुछ अमिट रचनात्मक उपस्थितियों के बारे में पता चलता है। हमने उसी दुर्लभ खजाने से चुनकर कुछ महान कलाकारों के जीवन और कला-यात्रा की बानगी को 'संगना' के इस अंक की सामग्री बनाया है। यह अंक, इस अर्थ में ऐतिहासिक भी है कि प्रदर्शनकारी कला रूपों के महान किरदारों का लेखा-जोखा उन्हीं की जुबानी प्रस्तुत करने में हम गौरवान्वित अनुभव करते हैं।

यह देखना सुखद है कि इन ग्यारह साक्षात्कारों के माध्यम से हम भारतीय शास्त्रीय संगीत, रंगमंच और शास्त्रीय व लोकनृत्य रूपों की एक बानगी भर पेश कर पा रहे हैं। इस अंक में भेण्डी बाज़ार घराने की दिग्गज गायिका अंजनीबाई मालपेकर से लेकर पटियाला घराने की अत्यन्त जीवन्त उपस्थिति और दिग्गज कलाकार उस्ताद बड़े ग़ुलाम अली ख़ाँ का साक्षात्कार मौजूद है। इसी के साथ, इसकी सह-यात्रा में बेगम अख़्तर, बड़ी मोतीबाई और उस्ताद ग़ुलाम तक़ी ख़ाँ जैसे स्वनामधन्य गायक-गायिकाओं की उपस्थिति प्रभावी ढंग से देखी जा सकती है। रंगमंच के क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करते हुए पारसी थियेटर के मशहूर और महान कलाकार मास्टर फ़िदा हुसैन नरसी का इण्टरव्यू अलग से रेखांकित किये जाने योग्य है, जिसमें उनके जीवन-संघर्ष, कला-तप और साधना से अर्जित ऊँचाई के दर्शन किये जा सकते हैं। इनसे अलग, उस्तार अमीर हुसैन ख़ाँ साहब, गुरू कार्तिक राम और छऊ के पर्याय माने जाने वाले केदारनाथ साहू के साक्षात्कार भी अंक की उपलब्धियों सरीखे हैं। इसी के साथ कथक की महान कलाकार सितारा देवी से राजेन्द्र गंगानी की बातचीत भी अभिलेखों के अध्याय में कुछ सुनहरे अर्थ जोड़ती है। कहने का आशय यह है कि 'संगना' का संयुक्तांक हमारी उस महान विरासत पर केन्द्रित है, जिसे वर्तमान समय में धीरे-धीरे सूचना और संचार के ढेरों माध्यम अनायास ही बिसरा दे रहे हैं। इस लिहाज से भी, अकादेमी अपना दायित्व समझते हुए कुछ नये प्रयोगों के साथ इस पत्रिका के माध्यम से आप सभी के समक्ष इतिहास का वह उजाले-भरा दौर प्रस्तुत कर रही है, जिनके कारण पिछली शताब्दी में भारतीय प्रदर्शनकारी कलाओं को अन्तरर्राष्ट्रीय पहचान और घर-घर व्याप्ति मिली। इस अंक में दिये गये समस्त साक्षात्कारों के अभिलेखों का प्रमाण, साक्षात्कार के अन्त

में दिया गया है, जो इन कलाओं के शोधार्थियों के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। साथ ही, प्रत्येक कलाकार का संक्षिप्त जीवन-परिचय भी दिया गया है, जिसके साथ साक्षात्कारकर्त्ता के बारे में भी सूचनाएँ दर्ज़ हैं।

'संगना' के इस अंक से इसके सम्पादन का दायित्व मैं संभाल रहा हूँ, जो मेरे लिए बड़े गौरव की बात है। मैं इस सम्पादकीय के माध्यम से 'संगना' के पाठकों और उसके सहयोगियों, इसमें लिखने वाले विद्वानों और संगीत, नाटक व अन्य कलाओं के कलाकारों से विनम्रतापूर्वक निवेदन करता हूँ कि पूर्व की भाँति 'संगना' को आपका सहयोग मिलता रहे। साथ में यह भी अपील करता हूँ कि यदि कोई त्रुटि आपकी निगाह में आती है, तो उसे बताने का कष्ट करेंगे, जिससे इस पत्रिका को आगे कुछ और बेहतर बनाने के लिए सुधार किये जा सकें। पिछले अंक तक यह पत्रिका वरिष्ठ हिन्दी कवि और कला-आलोचक प्रयाग शुक्ल जी के संपादन में निकल रही थी। उसके बाद इस अंक से 'संगना' उसी परम्परा में खुद को सार्थक ढंग से जोड़ने का प्रयास कर रही है, परन्तु एक नये व्यक्ति और एक नयी सोच के साथ। हमने इस अंक से 'संगना' के कलेवर को एक नया रंग दिया है, जिसके बारे में विश्वास है कि वह आपको पसन्द आएगा। भविष्य में निकलने वाले आगामी अंकों की तैयारी भी एक समावेशी परिवेश में आरम्भ की जा चुकी है, जिसके लिए हम जल्दी ही आपके समक्ष नये विचारों, नयी सामग्री और कुछ दुर्लभ ऐतिहासिक दस्तावेज़ों के साथ उपस्थित होंगे।

हम अप्रैल-सितम्बर, 2017, अंक 26-27 का यह संयुक्तांक आपके हाथों में सौंपते हुए प्रसन्नता और गौरव दोनों का अनुभव कर रहे हैं, जिस पर आपकी प्रतिक्रियाओं की उत्सुकता से प्रतीक्षा रहेगी। मूर्धन्य कलाकारों के जीवन-वृत्तों के ऐतिहासिक अभिलेखों से सजा 'संगना' का यह अंक आपके बहुत सारे कौतूहलों, जिज्ञासाओं और प्रश्नों का समाधान करने में सक्षम होगा, ऐसी कामना का बीज मन में है। स्वप्नों और विचारों के पार जो एक प्रति संसार मनुष्य के अपने मानस में जन्म लेता है- सुन्दर... सार्थक... और विराट... वैसी किसी अभिव्यक्ति के लिए संगीत नाटक अकादेमी की धरोहर से निकाली हुई और पहली बार समेकित रूप से 'संगना' के माध्यम से प्रस्तुत यह दुर्लभ बातचीत के अंश, गहरे सागर से ज्ञान के मोती चुन लाने सरीखे साबित होंगे, ऐसा विश्वास है।

साभार,

-यतीन्द्र मिश्र

क़द्रदानी तो उस वक़्त बहुत ज़्यादा थी आज से...

अंजनीबाई मालपेकर से **नैना देवी** की बातचीत

माई नमस्कार, माफ़ कीजिए, आज आपको बहुत तकलीफ़ दे रही हूँ। आज आपकी जुबानी आपके जीवन और संगीत साधना के संबंध में कुछ सुनना चाहती हूँ। माई, सबसे पहले आप अपनी वंश परंपरा और उसका संगीत से संबंध कब से और कैसा रहा? यह बताने की कृपा करें।

मेरा जो घर, समझो संगीत का ही घर था। मेरे नाना तो गाते ही थे और नाना की माँ पंडिता थीं, उनका नाम गूदाबाई था। गूदाबाई संस्कृत की पंडित थीं, बड़े-बड़े विद्वान उनके शागिर्द थे। उनके तीन लड़के और एक लड़की थी, उन तीन लड़कों में एक का नाम रामबा, एक का नाम वामन, और एक का नाम वासुदेव। वासुदेव की पोती हूँ मैं। रामबा की दो लड़कियाँ और तीन लड़के थे। उनकी एक लड़की तबला इतना अच्छा बजाती थी! हमारे घराने में पाँच-छह पीढ़ी से संगीत क़ायम है..... और हमारी माँ थीं छह बहनें। एक तो तेरह-चौदह बरस की उमर में गुज़र गई, बाक़ी पाँच थीं, पाँचों ही गाती थीं, लेकिन उनमें मेरी माँ की आवाज़ बड़ी सुरीली थी।

अच्छा, आपकी संगीत शिक्षा कब से शुरू हुई माई?

आठ बरस से। आठवाँ बरस लगा था हमको कि शिक्षण...पहले तो स्कूल में ही जाते थे न!

अच्छा।

तो स्कूल में भी जाना, और संगीत में भी ध्यान देना होता था।

अच्छा माई, अपने गुरू घराने के बारे में कुछ बताइए।

मेरे गुरूजन थे नज़ीर ख़ाँ, ख़ादिम हुसैन, और छज्जू ख़ाँ।

अच्छा, वो कहाँ के रहने वाले थे?

वो थे मुरादाबाद के...और यहाँ आकर कम से कम आठ बरस में [नज़ीर ख़ाँ ने] जो मेरा गंडा बांधा, उससे पहले वो कब आए मेरे को ध्यान नहीं। लेकिन कम से कम हमको यह मालूम होता है कि [मृत्युकाल में नज़ीर ख़ाँ की उम्र] एक सौ दस बरस होना चाहिए; सौ बरस तक तो वो बम्बई में रहे। वो चार भाई थे। उन्होंने छोटे भाई को इंग्लिश पढ़ाया मैट्रिक तलक़ और ये तीन भाई गाते थे।

सबसे बड़े छज्जू ख़ाँ साहब थे?

हाँ, सबसे बड़े और उनके पीछे नज़ीर ख़ाँ।

अंजनीबाई मालपेकर

जी।

और उनके पीछे ख़ादिम हुसैन ख़ाँ।

जी।

और उनके पीछे विलायत ख़ाँ।

अच्छा।

ऐसे ये चार भाई थे। तो मेरा जो शिक्षण–पहला जो गंडा बांधा– तो नज़ीर ख़ाँ साहब थे। हम तो उनको भैयाजी ही कहते थे क्योंकि मेरे पिता के वो बड़े दोस्त थे; उनको हम चाचा के तरीक़े से जानते थे। और हमारी माँ को वो भाभी बीबी कहते थे; बड़ा ही दोस्ताना सम्बन्ध था।...छुटपन से मेरी इच्छा यह थी कि मैं डॉक्टर बनूँ।

अच्छा?

हाँ, डॉक्टर।

कहाँ डॉक्टर और कहाँ गायिकी?

जब नज़ीर ख़ाँ साहब मेरी बहन को सिखाते थे... शुरू में... तब बारह बरस की उम्र में सवा सौ, डेढ़ सौ तराने और सरगम उसने याद किया था। बम्बई में बहुत से लोग उसे जानते थे। हज़ार, दो-दो हज़ार लोगों में यह लड़की गाई है, जब-जब उसको लोग सुनते थे, बड़ा होनहार बच्चा है, सबके मुँह से यही निकलता था।...

लेकिन यह ज़बान हमारी नहीं। तो भईया जी ने, नज़ीर ख़ाँ ने, जिस दिन गंडा बांधा उसके दूसरे दिन उन्होंने एक मुंशी भी रखा, क्योंकि हमारी ज़बान यह नहीं।

जी।

हाँ, क्योंकि हमारी ज़बान तो गोवा की ज़बान थी– मराठी ज़बान। हमको उन्होंने जो ख़्याल बताया तो उसका मायने तो समझना चाहिए कि नहीं? वो क्या कहते थे कि जब मायना न समझा तब तलक़ संगीत के ऊपर जो प्रभाव होने का, वो कभी बन नहीं सकता।

अच्छा माई, अपनी तालीम के बारे में कुछ बताइए?

जैसा कि मैंने बताया, [नज़ीर ख़ाँ ने] सिखाना शुरू किया था मेरी बहन को। पर जब वो सिर्फ़ बारह बरस की थी, तभी उसकी मृत्यु हो गई। उसे गायिका बनाने की इतनी इच्छा थी मेरे माँ-बाप की–और हमारे घर में यह काण्ड! तो फिर मुझे इतना रियाज़ करवाया गया कि 'न भूतो न भविष्यति'। हमें नहीं लगता कि आजकल बच्चे कोई ऐसा रियाज़ कर लेंगे।

कितने घंटे आप रियाज़ करती थीं माई?

पहले तो समझो कि पंद्रह-पंद्रह...जैसा नुस्ख़ा वैसा, पीछे आठ-आठ, दस-दस तलक़।...और रियाज़ में तो क्या पूछना, आजू-बाजू के लोग परेशान हो गए थे– साढ़े तीन बरस तलक़ हेमन्त और डेढ़ बरस भैरवी...बराबर ऐसा, और कुछ नहीं। जब उन्होंने ये दोनों राग सिखाए तो उसके पीछे पाँच बरस हो गए।...पीछे वो जो भी राग सिखाए, तो बांधकर सिखाए। कभी वो काम पर जाते हुए कहते थे, बेटा काग़ज़ लाओ, पेन लाओ, यह लिख लो; इसमें ये बातें हैं– यह वादी, यह संवादी– इस तरह से करके... ख़याल पीछे बताऊंगा, लेकिन यह समझ लो। पीछे जब जब राग सिखाए, हमको कभी बड़े बोल नहीं सिखाए। कहते थे, चल आ बैठ तो सही। तो जो ध्यान में आया समझो वही बोल दिए हैं। ऐसे राग सब मेरे पास थे। समझने में जो कमी थी बैठकर, वो सिखाते थे।

और, माई, सुना कि आपको वह चिड़िया कहकर पुकारा करते थे?

जी, चिड़िया। सब गवैये भी चिड़िया कहते थे। आप कहते थे चिड़िया, हमको कभी बेटी कहा ही नहीं : मेरा बेटा है– हमेशा यह कहते थे। जैसे ही मैं गाकर आई, तो 'मेरे बच्चे!' उनका तो उस वक़्त बच्चा नहीं था, पीछे लड़का हुआ और लड़की भी। उनके बड़े भाई के दो लड़के थे– अमान अली ख़ाँ साहब और फ़िदा

हुसैन ख़ाँ साहब। मगर वो कहते थे, दरिया में फेंक दो इन लड़कों को। जिससे नाम बढ़े, वही लड़का।...जब तलक़ अमान अली ख़ाँ ज़िंदे थे, तब तलक़ यह बात आएँ तो रोते थे, सच कहते हैं।

हम इतना रियाज़ करते थे, फिर भी हमारे उस्ताद कहा करते थे, हम में चिड़िया अभी न भरी, अभी न भरी। हमारे दिल में यह होता था कि ये क्या कहते हैं? जो सिखाते हैं वो ही गाते हैं, सब कुछ...क्या अभी न भरी? तो हमको, आपको कहूँ, बड़ा रंज होता था। लेकिन जिस दिन से वो गए, आज हमको मालूम होता है, अभी तलक़ हमारे सबौ न भरी न खाने पूरी।

...सुर में क्यों थे हम? तो आपको कहूँ, मिनिट में सत्ताइस सांस पड़ते हैं न डॉक्टरी के हिसाब से? इन्होंने एक मिनिट तक मेरा सांस बढ़ा दिया था।...एक बरस में एक मिनट का मैंने सांस बढ़ाया था, मेरे को हिन्दुस्तानी नहीं आता, अफ़ग़ानी मेरे ज़बान के ऊपर है...आप तो हंस देंगे।

नहीं, नहीं, नहीं। बिल्कुल नहीं, बिल्कुल नहीं।

हमको, गोवा के आदमी को, हिन्दुस्तानी नहीं आती, लेकिन आप पूछते हैं तो इस वास्ते कहना पड़ता है।...एक मिनिट का जिस आदमी का सांस होगा, उस आदमी का सुर कैसा होगा, न हिलना न कुछ। हमारे ख़ादिम हुसैन ख़ाँ साहब का चालीस सेकंड का सांस था, चालीस सेकेंड, और इन्होंने मेरा साठ सेकंड का बना दिया। पंचम लगाते मालूम होता कि दो-तीन पेटियाँ बज रही हैं।

वाक़ई आपकी तालीम पर बहुत ही ज़ोर दिया गया है, परंतु उसका असर अभी तक आपकी गायकी पर पाया जाता है।

नहीं। गायकी में पाना...अब तो हमारी बयासी बरस की उम्र हो गई, अब क्या गाएंगे, लेकिन इतना ज़रूर है कि मैं जो कहूँ, वो दूसरा करे तो आज भी उसी तरह से गवैया बन सकता है।

आपने किस तरह से स्वर को साधा, इसके मुताल्लिक़ ज़रूर कुछ बताइए, और ज़रा-सा गाकर भी आप बताइए, स्वर को किस तरह आप दम लगाती हैं?

वो तो मैं बता नहीं सकती हूँ; आज वो स्वर लगे न लगे वो मैं कह नहीं सकती, क्योंकि मैं काँप रही हूँ। ख़ाली बोलती हूँ, तो भी बोलना कँपा हुआ आता है। तो मैं यह दिखा नहीं सकती हूँ आपको कि स्वर जो लगाया तो... आवाज़ काँप जाती है.....

अच्छा माई, आपका घराना तो भेण्डी बाज़ार घराना कहकर मशहूर है।

भेंडी बाज़ार का घराना? नहीं!

नहीं? वैसे थे तो न इसी [नाम] से मशहूर लोग...

मुरादाबाद के।

मशहूर इस घराने के...

बाक़ी भेण्डी बाज़ार वाले जो, भेण्डी बाज़ार वाले...एक ही मकान में रहे। यह भी आपको कह दूँ...

पर आम लोग तो उसे भेंडी बाज़ार घराना ही कहते हैं?

हाँ।

और इसी नाम से ही...

भेण्डी बाज़ार में मुरादाबाद के गवैये ही रहे हैं।

हाँ, मुरादाबाद के तो थे, पर नज़ीर ख़ाँ साहब भेण्डी बाज़ार करके कहे जाते हैं।

हाँ।

अच्छा माई, अब एक अर्ज़ है, भेण्डी बाज़ार घराने की गायकी की क्या-क्या ख़ुसूसियात, यानी विशेषताएँ हैं, इस पर कुछ रोशनी डालें तो बड़ी नवाज़िश होगी।

उनकी यह थी कि पहले सुर का ध्यान, उसके बाद...मेरे गुरु हुए तो कहना ही पड़ता है तीनों की आवाज़ बढ़िया थी...पर जिस वक़्त मेर गुरू गाने को बैठते थे, जो सुर लगा तो एक आदमी भी नहीं जिसके आँखों में से पानी नहीं आया।

जी।

हमने सीधी आवाज़ वाले गवैये उन दिनों दो ही सुने, समझो एक अली हुसैन ख़ाँ उस वक़्त के, और दूसरे रहमत ख़ाँ... दोनों ही गवैयों के यहाँ सीधी आवाज़ में खाली 'आ...' करके गायन नहीं होता था .... करके गायन नहीं होता था.....

अच्छा माई, आपने तैयारी किस तरीक़े से हासिल की? और आपकी राय में तैयारी की जगह संगीत में क्या है? इसके ऊपर आप कुछ ग़ौर फ़रमाइए।

तैयारी के ऊपर तो मैं आपको, आप बुरा मत मानना...

जी नहीं।

मैं बूढ़ी हूँ, बयासी बरस की, लेकिन...पहली बार ऐसा गवैया एक ही सुना, तैयारी में स्वर रखने वाला। कौन? रहमत ख़ाँ, हद्दू ख़ाँ के बेटे। बाक़ी जितने गवैये हमने सुने,...कहाँ बकरे की तान निकालेंगे तो कहाँ कुछ कुछ। तैयारी मायना क़ायदे से होना चाहिए।

आपके तैयारी हासिल करने का तरीक़ा?

तरीक़ा यही कि ये पलटे करना है, वो कैसे– स, रे, ग, म, प, ध, नि, सा– यही करना है तो चार लय में...

अच्छा माई, आपके घराने की गायकी दूसरे जाने-माने घरानों से किस तरह अलग है, इस पर कुछ रोशनी डालेंगी?

हम तो अलग...अच्छी और बुरी यह तो नहीं कह सकती, लेकिन हमारे घर की जो गायकी वो विलंबित कहते हैं।

जी।

यहाँ बंदे अली ख़ाँ साहब आए।

जी।

उनके साथ चुन्ना बाई थीं।

जी।

क्या कहूँ मैं... वो जो हॉल में गाईं, तो नीचे से जो सुना तो मालूम होता था कि बंदे अली ख़ाँ साहब की बीन बजती है यह। इस क़िस्म की इनकी गायकी थी।...[नज़ीर ख़ाँ ने] मेरे को ही नहीं तैयार किया, तीन लड़कियाँ और तैयार की, और एक लड़का। लेकिन वो अपने-अपने तक़दीर से मिट गए; ज़रा कुछ हुआ तो उस्ताद से कहे कि तू क्या जानता है! वो बातें छोड़ो, लेकिन और भी मेरे जैसे, मेरे से अच्छी गायिका उन्होंने तैयार किए थे, मेरे से ज़्यादा गुणी तानी बाई करके थीं। एक बाबली बाई थीं, जो हमसे बहुत तारीफ़ की बाई थीं।

तो आपके घराने में जो विलंबित है उसके ऊपर ज़्यादा ज़ोर दिया गया।

हमारे यहाँ तैयारी बहुत थी, बिल्कुल जी, हाँ! ख़ादिम हुसैन ख़ाँ साहब के बारे में यही कहते थे कि वो पाँव से चलते ही नहीं, वो चलते हैं सिर से।

माई,...सुना कि सरगम आपके घराने का बहुत मशहूर है, उसके बारे में कुछ बताइए?

जी, हम लोगों का सरगम के ऊपर ही जो कुछ है।...बड़े भैया [छज्जू ख़ाँ] के दो लड़के थे, फ़िदा हुसैन ख़ाँ साहब और अमान अली ख़ाँ साहब; और नज़ीर ख़ाँ की एक लड़की और एक लड़का। तो यह लड़का मुबारक अली ख़ाँ, भोपाल में पुराने साहब उसे लेके गए, वो क्या कहते हैं...लेकिन आपको कहूँ, जो आज यह लड़का होता तो सरगम का बादशाह कहलाता, लोग समझते सरगम क्या चीज़ है। ग़ुलाम अली ख़ाँ साहब की तान इतनी तेज़ नहीं थी, उसकी सरगम जितनी तेज़ थी।

उनका नाम मुबारक अली ख़ाँ साहब था?

मुबारक अली ख़ाँ।

और नज़ीर ख़ाँ साहब के साहबज़ादे थे?

यह अकेले लड़के थे।

अच्छा।

लेकिन आपको क्या कहें, सरगम उन्होंने की तो मालूम होता था कि दरिया प्रवाह चल रहा है।

अच्छा माई, सुना है कि आपके घराने में चन्द-एक रागें बहुत मशहूर हैं? वैसे तो सभी राग गाये जाते हैं, पर कुछ रागों पर ज़्यादा ध्यान दिया गया है– वो कौन-कौन से राग हैं?

बहुत हैं–हमीर, गुनकली, तोड़ी, भैरव, बिहाग और बारह कल्याण है न? बारह कल्याण हमको कैसे बताया गया मालूम है? अभी श्री राग गाया तो उसके औरत हैं सात,...भैरव गाया तो भैरव की औरतें हैं सात वग़ैरह।

पर आपके घराने की भैरवी तो बहुत मशहूर है?

मैंने पहले ही कहा न आपको, कि भैरवी और यमन दोनों हमने पाया अपने घराने में, जैसे सरगम पाया...यमन की भी सरगम और भैरवी की भी सरगम, और वो सरगम हो गई हमारी। हमारे गुरू हमसे ...सरगम बहुत

करवाए। हाँ, और हमारे बहन को उन्होंने सवा सौ, डेढ़ सौ– बहादुर हुसैन ख़ाँ, इनायत हुसैन ख़ाँ, उनके गुरू ख़ाँ बहादुर हुसैन ख़ाँ के यहाँ सरगम तराने सिखाए थे। सब राग में सरगम, सब राग में तराने वो गाती थीं। लेकिन हमको उनसे सरगम का ही सबक़ मिला; तराने तो सुनाए, समझो गा भी सकते हैं, लेकिन हाँ, हमने जो पाया है, सो है सरगम। आज भी कोई करके दिखाए तबले की थाप के साथ जोश में बोलते हुए!

जी।

हम जैसा कहते हैं, वैसा अभ्यास किया जाए, तो आज भी पाँच सात बरस में गवैये आपको देखने में आएंगे।

अच्छा माई, आपने तो बहुत ज़माना देखा और अच्छे-अच्छे लोगों को सुना, उनके बारे में कुछ फ़रमाइए?

उन दिनों चुन्नी बाई को सुना था। हमारी तो उम्र रही होगी कोई तेरह–चौदह बरस। हमें तो समझ कुछ ख़ास थी नहीं; भोले–भाले पशु–पक्षियों की तरह, हिरण की तरह–हैरान होकर बस एकटक देखने वाले। एक बार जो उन्हें सुना तो मुँह खुला रह गया। उस वक़्त वहाँ सुर के सब समझदार लोग बैठे थे। बदन अली ख़ाँ साहब भी थे। एक बार...बम्बई में जे.के. बैरिस्टर करके थे। उनका जन्मदिवस था या कोई और अवसर, मुझे ध्यान में नहीं आ रहा है। सिर्फ़ तेरह–चौदह बरस की तो थी मैं। उस दिन चुन्नीबाई ने गाया तो मेरे गुरु रोने लगे। मैंने कहा, भैया जी, क्या हो रहा है? बेटा, क्या कहूँ, उन्होंने ऐसा कहा; बेटा, गाना इसको कहते हैं। तानसेन जी जब दीपक गाते थे, तो बत्ती जल उठती थी, मेघ गाएं तो बरसात होती थी। तो समझो यही हो गया।...पत्थर पिघल सकता है पर आदमी एक चीज़ ऐसी है जो पत्थर से ज़्यादा कठोर है।

हाँ [हंसते हुए]!

...आँखों से पानी आए तो समझो पत्थर पिघल गया। कहते हैं, दीपक गाया तो बत्ती जलती थी। भैया जी कहते थे, बड़े भैया, समझो कि हम अंधेरे में बैठे हैं और एक इलेक्ट्रिक की हज़ार पावर की बत्ती जले [एक झटके से बोलीं], करंट जैसा...

अच्छा माई, और कौन-कौन गवैये थे? आपने पहले बताया था चन्द्रावली बाई एक थीं, जिसके बारे में आपको पता है।

हाँ...अतिशयोक्ति होगी हमारी, लेकिन अभी तरफ़ हमने ऐसा गवैया नहीं सुना। भातखंडे साहब ने हमको बुलाया....

अच्छा, और कौन-कौन थे?

हाँ, चुन्नी बाई सुनी हमने, एक चन्द्रावली बाई सुनी, और तीसरी हमारी बाबली बाई। बाबली बाई बंबई की नथ्थन ख़ाँ की शागिर्द थीं; नथ्थन ख़ाँ की नहीं थीं– वो पीछे हो गई नथ्थन ख़ाँ की–पहले मेरे गुरू की शगिर्द थीं चार बरस। चार बरस मेरे गुरू ने सिखाई, और जैसा अभी केशवराय का हुआ–बारह बरस तो बरकतुल्लाह ने सिखाया और नाम के वास्ते वो अल्लादिया ख़ाँ के शागिर्द कहलाए–ऐसा हो गया।

अच्छा, और?

और सो कहती हूँ न–पहले चुन्नीबाई, चन्द्रावलीबाई, बाबलीबाई, और अभी के ज़माने में ज़ोहराबाई।

अच्छा, आपके ज़माने में?

हाँ, ज़ोहराबाई और हैदराबाद की रेशमजान थीं। ये पाँच औरतें हमने सुनी।...जिस दिन रेशमजान को सुना उस दिन ऐसा मालूम हो गया कि हैदराबाद में गाना ज़िन्दा है। भैयाजी भी थे, हमको वही ले गए थे। एक कृष्णकुमारी...

और उस्तादों में?

उस्तादों में हमने सुना नहीं, आपको कहूँ, सुर जिसको कहते हैं।

जी, जी हाँ!

बुरा नहीं मानना कि हाँ, बूढ़ी हैं, कुछ भी कह जाती हैं। सच्ची बात कहते हैं।

नहीं, नहीं, नहीं; आपने तो बहुत ज़माना देखा है और संगीत सुना है।

...हमने वो एक ही मर्द गवैया सुना जो सुरीला था, वो थे रहमत ख़ाँ।

अच्छा।

हाँ, रहमत ख़ाँ...वो पाँच महीने मेरे घर में थे, अपने बड़े घर में। जब वो गाते थे तो उनके पास जाकर देखना पड़ता था कि कौन गा रहा है। इस तरह से बैठना जैसे समाधि को बैठते हैं, न हाथ [हिले] न कुछ। पागल, लोग कहते थे– कुछ भी कहने दो, बकवास है– लेकिन वो आदमी संगीत में ही पागल हुए, रहमत ख़ाँ साहब। वैसे तो सुरीले थे अभी के बच्चों में अब्दुल करीम ख़ाँ...

अच्छा माई...

और दूसरे मैं कहूँ?

हाँ, ज़रूर कहिए।

यह अतिशयोक्ति होगी, अपना गुरू तो गुरू ही है, लेकिन मैंने नज़ीर ख़ाँ जी जैसा भी सुरीला आदमी नहीं सुना। जो 'नि' और 'सा' उन्होंने लगाई, क्या कहूँ आपको, मालूम होता था कि अंदर...सुर दिल में घुस रहा है।

अच्छा माई, इतने लोगों को तो आपने सुना, पर इनमें कौन थे जिनका प्रभाव आपके संगीत पर पड़ा, नज़ीर ख़ाँ को छोड़कर– उनकी तो आप शिष्या हैं ही, उनका असर तो ज़रूर आप पर है, पर उनको छोड़कर और अच्छे-अच्छे लोगों में किसका प्रभाव आपके ऊपर पड़ा?

...एक सुना सरदार, सरदार बख़्श आए थे, हैदराबाद के। सरदार ख़ाँ...

अच्छा।

एक उनको सुना, और दूसरा अल्लादिया ख़ाँ। मैं आपको कहूँ कि बुरे नहीं थे अल्लादिया ख़ाँ सुर के, लेकिन बढ़त जिसको कहते हैं, फिरत कि टप्पे वाला, ऐसा था कि नोटेशन करने को मुश्किल होती थी...

अच्छा माई, आपके ज़माने में संगीत और संगीतज्ञों की क़द्रदानी कैसी थी, ख़ासकर आजकल के मुक़ाबले में?

अभी जो कहूँ जो आजकल के लोग ग़ुस्सा होंगे मेरे ऊपर!

नहीं, नहीं, उस ज़माने की झलक कुछ दिखाइए, कहिए कि उस ज़माने में क़द्रदानी कैसे होती थी?

आपको कहूँ कि क़द्रदानी तो ऐसी होती थी...एक तो पहले न्याय था, सत्यता थी।

जी।

गवैये-गवैये जलते थे, लेकिन न्याय जिसको कहते हैं, वो थी। दूसरा, क़द्रदानी भी बहुत थी। आपको कहूँ कि लोग बहुत थोड़े थे, पर राजाओं में, जनता में, ग़रीबों में भी क़द्रदान थे। ऐसे पागल देखे जो...गवैये के...पीछे फिरते थे। रईस होते थे, हज़ारों रुपये भी देते थे- क़द्रदानी तो उस वक़्त बहुत ज़्यादा थी आज से।

अच्छा माई, अपने कार्यकाल में पंडित भातखण्डेजी से भी आपकी ज़रूर भेंट हुई होगी? आपकी और उनकी मुलाक़ात के बारे में कुछ बताइए।

उनकी हमारी तो रोज़ ही भेंट होती थी, क्योंकि वो हमारे गुरू के पास ही सीखते थे न?

अच्छा, और सुना कि आप उनके साथ सरगम कहती थीं?

कहाँ, नहीं, सरगम नहीं। कोई भी गवैया आए न- तो ये भी [मुझे] चिड़िया ही कहते थे, भातखण्डे साहब, हम दादा कहते थे उनको- तो नज़ीर ख़ाँ को कहते थे, 'ख़ाँ साहब, चिड़िया को लेकर आना।' 'क्यों दादा, क्यों?'

वहाँ नोटेशन करना है।

तो उस ज़माने में- अभी तो पाकिस्तान कहते हैं- पंजाब से एक गवैया आया।

गुल्लू ख़ाँ।

गुल्लू ख़ाँ उनका नाम। भारी इतने थे...उनका सिर दरवाज़े को लगता था। उनको देखते ही मैं घबरा गई, इतने ऊँचे जवान, सच कहती हूँ- यह हंसने की बात नहीं- इतनी घबरा गई कि मैंने भैयाजी से कहा, 'इतने बड़े आदमी भी होते हैं?' ये जो पटका और उसके ऊपर ऐसी टोपी डाली हुई थी उन्होंने कि टोपी का सेहरा लगता था। वो तैयार थे, तो भातखंडेजी और सबने कहा कि मेरे को ले आएं। मैं गई तो मुझसे कहा कि चिड़िया, नोटेशन करना है। मैंने कहा जैसा हुक्म, जो भैयाजी कहेंगे वो करूंगी। तो जहाँ-जहाँ नोटेशन करने का होता था, मेरे को ले जाते थे... और एक बात मैं यह भी कहने वाली हूँ, जिसे अतिश्योक्ति नहीं मानें कि जितनी चीज़ें भातखण्डे जी के पास लिखी हैं और उन्हें मालूम है, उतना ही मेरे गुरू के पास भी रही हैं, जिन्हें कभी दिखाऊँगी आपको....

अच्छा माई, एक सवाल आपसे मैं क्या पूछ सकती हूँ? आज का संगीत आपकी नज़र में किस दौर से गुज़र रहा है? क्या आप समझती हैं कि संगीत को क़ायम रखने के लिए जो भी कुछ हो रहा है वो काफ़ी है? क्या आने वाले ज़माने में भी आप जैसे कलाकार बन सकेंगे? आपकी राय में संगीत को क़ायम रखने के लिए क्या करना चाहिए? यह बताइए आप।

पहले से पहले– आप भी बच्चे हो, लेकिन समझ सकते हो– ध्रुपद धमार था; तो उसके बाद ख़्याल आया।

जी।

ख़्याल मिटने लगा, आगे ठुमरी आई; ठुमरी अभी मिटी जाती है, समझो ठुमरी भी कहाँ है? ठुमरी मिटी सिनेमा के बाद, आगे आपके पास रहेगा क्या, आप कहो? यह सवाल करना है मेरा गवरमेंट को, सरकार को। एक सरकार ही है जो इसको ज़िंदा रखना चाहे, तो ज़िंदा रख सकता है, नहीं तो बिल्कुल ज़िंदा नहीं रह सकता। और जिस तरीक़े से सरकार चल रही है, उस तरीक़े से संगीत को बचाना चाहे तो बिल्कुल बच नहीं सकती...

तो बचाने का तरीक़ा भी तो कुछ बताइए माई, क्योंकि इसको तो रखना ज़रूरी है, कोशिश करनी चाहिए कि आईंदा भी कि आप जैसी कोई कलाकार पैदा हो सके।

ऐसे गुणी कलाकार जिनका उम्र नब्बे बरस, सौ बरस, उनके पास जाकर बत्ती लेकर आप लोगों को घूमना चाहिए– बत्ती लेकर, कि कहाँ हीरा पड़ा है?

बत्ती लेकर आपके पास आई हूँ न!

हंसती हैं। मेरी तो क्या बात है, लेकिन जो पड़े हैं उनके पास जाना, उनसे कहना...किस रास्ते गवैया बन सकते हैं।

सारंगिए और तबलिए भी अच्छे चाहिए आजकल, तो चार धिरकिट लगी तो बड़ा तबलिया हो गया। एक तान मारी तो सारंगिया हो गया। साऽऽऽ रेऽऽऽ तीन वक़्त गाया तो गवैया बन गया। गवैये के तरीक़े और हैं भई, यह मैं आपको कहती हूँ। जो गवैया बना है, तो गवैये को तपस्या करनी चाहिए।...हमने देखा है सारंगी की तपस्या– इनके दादा को, ग़फूर ख़ाँ के। रात के दो बजे...बैठे सारंगी लेके, सुबह आठ बजे तक अज्जन बख़्श ख़ाँ साहब रियाज़ में रहे, फिर बोले– अब चाय पी लें...

अच्छा माई, अब आप बहुत थक जाएंगी। मैं अब आपको और तकलीफ़ नहीं दूंगी, ज़रा-सी यह तकलीफ़ है कि हल्के-हल्के आवाज़ में एक ज़रा-सा भैरवी सुना दीजिए।

मैं सुनाऊँ, लेकिन मेरी जो आवाज़, मैंने कहा न कि मैं...

नहीं, ज़रा-सा बिल्कुल, बिल्कुल, ज़रा-सा नमूना।

ख़ाली नमूना बताती हूँ।

हाँ, बिल्कुल नमूना बताइए।

[गाती हैं] 'आई रे निंदिया...'

आज आपको बहुत तकलीफ़ दी मैंने, आप क्षमा कीजिएगा, आइंदा कभी इतनी तकलीफ़ नहीं दूंगी। पर मैं नहीं ज़ानती कि आपको किस तरह से धन्यवाद दूँ। वाक़ई इस ग़लती को माफ़ कीजिएगा, और हमारी आत्मिक–वाक़ई–धन्यवाद लीजिएगा।

मैं भी आशीर्वाद दे रही हूँ कि संगीत आपसे बढ़े; मैं भी आशीर्वाद दे रही हूँ। एक नहीं, दो नहीं, चार वक़्त तक–कि आप संगीत बढ़ाओ और संगीत की क़द्र करो; नमस्ते।

बहुत-बहुत धन्यवाद।

साभार : संगीत नाटक अकादेमी अभिलेखागार में संरक्षित रेकॉर्डिंग से प्रस्तुत। तिथि : 29.6.1963, समयावधि : 57 मिनट 6 सेकेण्ड, टेप-संख्या : 1-194 से 196।

अंजनीबाई मालपेकर : [1883-1974] भेण्डी बाज़ार घराने के मशहूर उस्ताद नज़ीर ख़ाँ की शिष्या और ख्यातिलब्ध ख्याल गायिका। पहली महिला गायिका जिन्हें केन्द्रीय संगीत नाटक अकादेमी की फेलोशिप [1958] प्रदान की गयी। 1920-30 के दौर में ख्याति के शीर्ष पर रहीं अंजनीबाई ने बाद में अपने कुछ योग्य शिष्य तैयार किये, जिनमें पं. कुमार गन्धर्व, टी.डी. जानोरिकर और किशोरी अमोनकर के नाम लिये जा सकते हैं।

नैना देवी : [1920-1993] ठुमरी दादरा और ग़ज़ल गायिकी में शिखर पर रहीं नैना देवी का सम्बन्ध रामपुर सहसवान और बनारस घराने से रहा है। आपने कई गुरूओं से तालीम पाई, जिसमें उस्ताद मुश्ताक हुसैन ख़ाँ, रसूलनबाई और गिरिजा शंकर चक्रवर्ती प्रमुख हैं। नैना देवी का सबसे बड़ा योगदान यह भी माना जाता है कि उन्होंने प्रसार भारती, दूरदर्शन के लिए भारतीय संगीत के ढ़ेरों नामचीन विभूतियों का साक्षात्कार और उनकी कला के प्रदर्शन का डाक्यूमेण्टेशन करते हुए संरक्षण किया, जो आज भी प्रसार भारती के अभिलेखागार में संरक्षित है और समय-समय पर दूरदर्शन द्वारा प्रसारित किया जाता है। आपने बहुत सारे शिष्य-शिष्याओं को संगीत की उत्कृष्ट तालीम दी, जिनमें शिप्रा बोस, मधुमिता रे, शुभा मुद्गल और विद्या राव आदि के नाम प्रमुख हैं।

कैरेक्टर में रम जाएँ...

मास्टर फ़िदा हुसैन नरसी से बलबीर पाठक की बातचीत

मास्टर फ़िदा हुसैन साहब, आपको भारत के उपराष्ट्रपति माननीय आर. वेंकटरमण के करकमलों से संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार प्राप्त हुआ, आपको बहुत-बहुत बधाई। इस मौक़े पर मैं चाहूंगा कि कुछ आपके संस्मरण, पुरानी यादें पारसी रंगमंच की, उन्हें हम संजोए अपने पास, ताकि हमारी आगे आने वाली पीढ़ी को उससे कुछ निर्देश मिले, दिशा मिले। इस सिलसिले में मैं चाहूंगा कि आप हमें बताएं कि आप पारसी थियेटर से कब और कैसे जुड़े?

ऐसा है कि बचपन ही से मैं–बहुत छोटा था–उस वक़्त से ही आवाज़ क़ुदरती अच्छी थी...यह तो मैं कहूंगा कि ये ईश्वर की देन है।

बेशक।

और उस वक़्त जो कहीं क़व्वाली होती थी, कहीं मुशायरा होता था, तो बड़े शौक़ से सुनता था, और क़व्वाली की नक़ल भी एकान्त में बैठकर करने लगा। ख़ैर, सन 1911 में दिल्ली दरबार हुआ। इंग्लैंड का बादशाह जॉर्ज पंचम दिल्ली आया, तो हिन्दुस्तान के तमाम रियासत, रजवाड़े, नवाब, जमींदार–ख़ासकर के चुने हुए लोगों को वहाँ बुलाया गया था–और उसी के साथ जितने सन'तकार थे अपने-अपने फ़न के, अपने-अपने काम के कारीगर, जादूगर, नट और कठपुतली के तमाशे वाले, क़व्वाल, मुजरा करने वाले, और क़रीब-क़रीब यह सभी लोगों को बुलाया गया था, लोगों का मनोरंजन करने के लिए।

तो जब दिल्ली का दरबार ख़त्म हुआ तो वापिसी में अपने-अपने जगह, अपने-अपने शहरों को जाने के वक़्त में, वो जिधर से भी पास हुए और वहाँ क़स्बे आते गए, शहर आते गए, वो वहाँ अपना प्रदर्शन करते हुए गए।

अच्छा, जी।

तो, मुरादाबाद में–सन 1912 का ज़िक्र है यह, जहाँ तक मुझे याद है–कठपुतली का तमाशा हमारे मुहल्ले में भी तय हुआ। इसमें एडवांस में कुछ पैसे दे दिए जाते थे, जिसे 'साही' कहते हैं। चवन्नी या अठन्नी, क्योंकि पूरी फ़ीस ही उसकी सिर्फ़ एक रुपया थी। तो रात को मुहल्ले में जब सब बच्चे बैठ गए, दो खाटें खड़ी करके, दो चादर वग़ैरह लगा करके, कठपुतली का तमाशा हुआ।

कठपुतली के तमाशे में–चूंकि वो सब्जेक्ट कुछ नाटकीय ढंग लिए हुए था–यहाँ राजा आकर बैठा, उधर वज़ीर बैठे थे, उधर उसके फ़ौज के लोग थे; इतने में, एक दूसरे राजा ने उनके ऊपर चढ़ाई कर दी,

दोनों का युद्ध हुआ, पहले सेनापति लड़ा...तो वो चीज़, उस दिन का देखा हुआ कठपुतली का वो थोड़ा-सा देखा हुआ प्रोग्राम, दिमाग़ पर ऐसा छाया कि वो जा ही नहीं सका दिमाग़ से।

घर में आकर वही हरकतें शुरू कर दीं। तो घर के लोगों ने कहा कि यह क्या पागल है? दिमाग़ ख़राब है। ख़ैर, यहाँ से शुरू हुआ। मुख़्तसर यह कि वो सिलसिला चलता रहा; कुछ ड्रामाटिक क्लब थे मुरादाबाद में उस ज़माने में, उनमें जाकर देखा-भाली करने लगा।

सन 1917 में जब लड़ाई बहुत ज़ोरों पर थी– ग्रेट वॉर पहली– उस वक़्त रॉयल ड्रामाटिक क्लब था मुरादाबाद में। उस क्लब में मैं जाने लगा, लेकिन घर के लोगों का जो माहौल था, वो ऐसा नहीं कि इसको पसंद करते। वो ज़रा मौलवी टाईप के लोग थे, नमाज़ी परहेज़गार मुसलमान...तो उन लोगों ने चाहा कि छूट जाए यह चीज़। नाचने-गाने की परहेजी थी। तो ग़रज़ यह कि पिटाई भी होती थी, कभी-कभी ख़ूब ज़ोरदार, लेकिन बंदा बाज़ नहीं आया। उस क्लब में मैं भर्ती हो गया।

वहाँ ज़िंदगी में सबसे पहले *शाही फ़क़ीर* ड्रामा था, उसमें मेरा फ़ीमेल कैरेक्टर था कॉमिक रोल में। तो वो कामयाबी मैं आपको बतला रहा हूँ कि चार-पाँच महीने की रिहर्सल के बाद, जब वो शो हुआ, तो वह हॉल भरा हुआ था, क्योंकि कोई टिकट तो लगा नहीं था। इनवाइट किए हुए लोग आए थे, और हर काम करने वाले को दो-दो चार-चार पास दिए गए थे। तो पब्लिक को जब देखा और स्टेज पर जो निकला– हॉल भरा हुआ था– तो वहाँ छः महीने की मेहनत ख़त्म हो गई। पब्लिक को देखकर मैं घबरा गया, और ऐसा घबराया कि मैं अपना पार्ट भूल गया। नतीजा यह हुआ कि अंदर से प्रॉम्प्ट करने वाले– एक तरफ़ एक रामबिहारी भाई थे, वे हिन्दी की किताब लिए थे, प्रॉम्प्ट की। एक तरफ़ थे वो मर्दान ख़ाँ–पर इसके बावजूद मैं इतना भूला हुआ था कि पब्लिक ने शोर मचाना शुरू कर दिया। अब उसके शोर मचाने पर मैं और घबरा गया। अब जितना अंदर से कहा जा रहा था, उतना ही मैं भूलता जा रहा था। भूलते-भूलते...आख़िर यह हुआ कि पब्लिक ने शोर मचाया कि इसे निकाल दो, यह बेकार है। तो यह पहले दिन की मेरी कामयाबी मैं बता रहा हूँ आपको, जो स्टेज की मेरी कामयाबी थी।

तो वहाँ के ख़ाँ साहब, जो प्रॉम्पटर थे, उनको इतना ग़ुस्सा आया कि उन्होंने किताब ही फाड़ के फेंक दी। कहा कि क्लब की इज़्ज़त डुबो दी। रामबिहारी भाई ने समझाया कि लड़का है। यह भूल गया और पब्लिक को देखकर घबरा गया। मुख़्तसर यह कि फिर दुबारा ट्रेनिंग करके– हमारे उस्ताद थे श्री स्वरूप भटनागर, जो डायरेक्टर थे उस क्लब के–तो उन्होंने फिर मेहनत की, और दुबारा जब मैं निकला तो कामयाब हुआ।

सन् 1918 में मैं घर से भाग गया और न्यू ऐल्फ्रेड कंपनी, जो हिन्दुस्तान की सबसे बड़ी ड्रामा कंपनी थी, उस कंपनी में काम शुरू किया। मदन मोहन मालवीय, मोतीलाल नेहरू, महात्मा गांधी, जगत् गुरू शंकराचार्य– ऐसी-ऐसी हस्तियाँ उस कंपनी के ड्रामे देखते थे। उसका कारण यह था कि वो कंपनी अपनी ज़िंदगी में चौंसठ (64) साल चली, लेकिन उसमें कभी स्त्री पात्र के लिए कोई औरत नहीं रही। वहीं एकमात्र कंपनी थी हिन्दुस्तान में, पारसी रंगमंच में, जिसमें कोई औरत नहीं थी। उसका सबब यह था कि उस ज़माने में इस लाइन के अन्दर पेशेवर औरतें ही थीं। तो जहाँ पेशेवर औरतें काम करें, वहाँ ये लोग कैसे जाएं ड्रामा देखने के लिए?
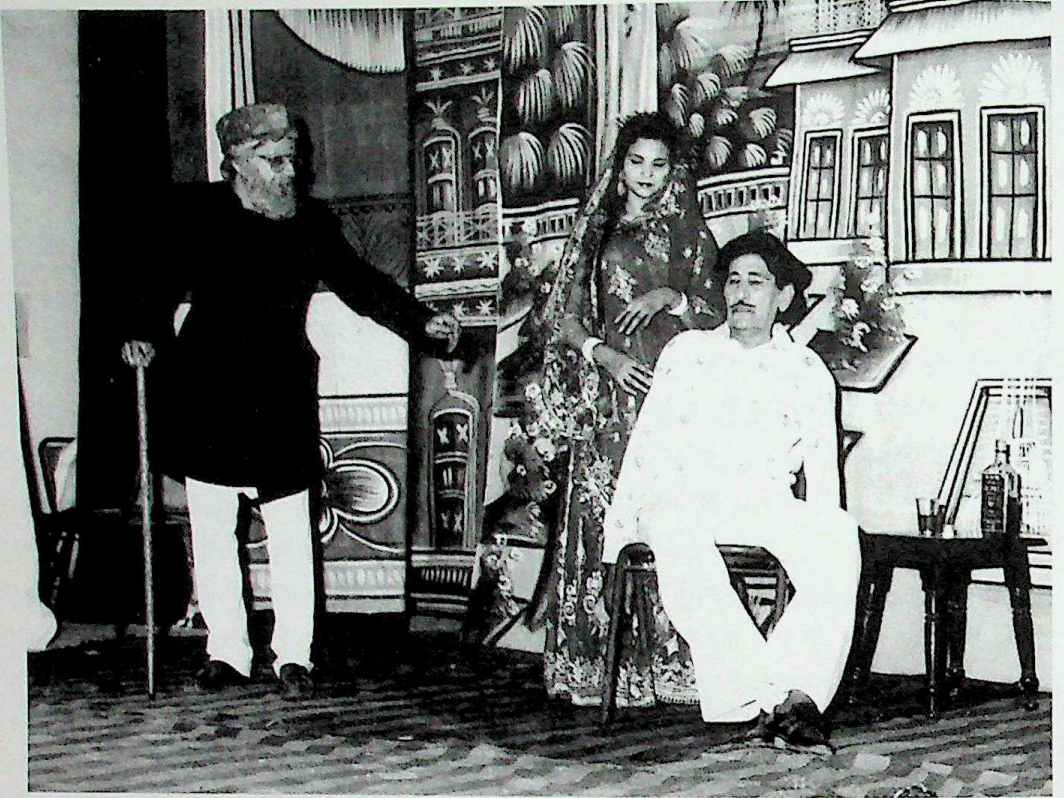
अभिनय की मुद्रा में मास्टर फ़िदा हुसैन नरसी (दायीं ओर कुर्सी पर)

हाँ, पवित्रता नहीं बनी रह सकती।

हाँ, इस कम्पनी में ज़्यादातर काम करने वाले लोग गुजराती ब्राह्मण थे। तो मैं फ़ीमेल पार्ट करता था, उसी में भर्ती हुआ था। जब मैं दिल्ली चला गया, वहाँ पर कंपनी के जो प्रेज़ीडेंट थे, सोम हरि नारायण और मानेकशॉ, पारसी जो थे, उस कंपनी के मालिक, उनकी बहुत ज़्यादा क़रीबी दोस्ती थी। तो इस वजह से मुझको उन्होंने अपने पास ही रखा– कंपनी मालिक ने– और बारह साल तक मैं उस कंपनी में रहा, उनका बेटा बनकर। उस दौरान पंडितजी से मेरा साक्षात्कार हो गया– राधेश्यामजी से।

पंडित राधेश्याम कथावाचक? अच्छा, वह उस कंपनी में थे उन दिनों में?

जी, बरेली के, जिनकी रामायण लिखी हुई है– राधेश्याम रामायण।

अच्छा मास्टर साहब, यह तो आपका शुरूआत का रहा, किस तरह से आपने पारसी थियेटर जॉइन किया। तो फिर यह सिलसिला कितने साल तक चला?

जी बारह साल तक मैं सन् 1918 से 1931 तक न्यू ऐल्फ्रेड कम्पनी में रहा। ....और पण्डित जी की ट्रेनिंग वहाँ पर रही। वही उसके सर्वेसर्वा थे। उन्हीं के ड्रामे निकलते थे। एक साल में एक ड्रामा होता था, उसकी

तैयारी होती थी और धार्मिक ड्रामे होते थे वहाँ... लिहाज़ा पेशावर से लेकर कन्याकुमारी तक और कश्मीर से लेकर तमाम हिन्दुस्तान में कंपनी सफ़र करती थी। लंका भी गई, बर्मा भी गई कंपनी।

नहीं, मेरा कहने का मतलब यह था कि आप पारसी थियेटर से कितने साल जुड़े रहे?

लगभ पचास साल....

पचास साल तो काफ़ी अर्सा रहा, तो इन पचास सालों में, मास्टर साहब, मैं जानना चाहता हूँ कि आपने कितने नाटकों में रोल किया होगा?

मेरा जहाँ तक ख़्याल है, कोई तीन सौ नाटक तो ज़रूर ही ऐसे थे, जिनमें मैंने पार्ट किया है। और उनमें से क़रीब-क़रीब ढाई सौ नाटकों का ख़ुद मैंने डायरेक्शन किया है; और क़रीब-क़रीब ये कलकत्ते में जो परमानेंट कंपनी मैंने चलाई है, उसका मैं ख़ुद ही डायरेक्टर रहा, इंचार्ज रहा।

तो जैसा बीच में आपने फ़रमाया था, लड़की का रोल नाटकों में आपने किया। ज़ाहिर है शुरू में लड़के ही वह रोल करते थे, और जैसा आपने बताया, न्यू ऐल्फ्रेड में तो यह परंपरा थी कि कोई भी पेशेवर औरत उसमें नहीं आ सकती थी। हम यहाँ ज़रा ये सुनना चाहेंगे... लड़की के रोल में जो आपने कोई अच्छा-सा डायलॉग बोला हो, जो आज तक आपको याद हो, तो सुनाएँ...

अच्छा-अच्छा (मुस्कुराते हुए) बेहतर। 'ईश्वर भक्त दुर्वासा' और 'राजा अम्बरीष की कथा' सबको मालूम ही है। ईश्वर *भक्त* के नाम से ही वह नाटक निकला था।

यह पंडित राधेश्यामजी का ही लिखा हुआ था?

जी, पंडित राधेश्यामजी का लिखा हुआ। इसका उद्घाटन सन 1928 में दीवान हॉल के सामने, दिल्ली में हुआ था। पंडित मोतीलाल नेहरू, जब वो कांग्रेस के प्रेज़ीडेंट थे, उनके हाथ से इसका उद्घाटन हुआ था। उस नाटक में पंडितजी राधेश्याम कथावाचक भी बैठे हुए थे, मदन मोहन मालवीय जी और मोतीलाल नेहरू भी। सरोजिनी नायडू और इन्दिराजी- जो कोई दस-ग्यारह साल की थीं- उनके पास बैठी हुई थीं।

जी, चार घंटे तक ड्रामा जमके देखा; उसमें मैं पद्मा का पार्ट करता था, हीरोइन का। तो उसका मैं एक डायलॉग सुनाता हूँ आपको। शुरू में विष्णु भगवान का मंदिर है, चूंकि वहाँ पर पूजा के लिए आते हैं अम्बरीष। वहीं पर, उनके आने से पहले- जब वह स्नान वग़ैरह को गए हुए हैं, मंदिर में आने से पहले- पद्मा वहाँ आ जाती हैं...फूलों की माला गूंथ रही हैं। ज़रा-सा एक गाना भी है-गाने के बोल हैं :

'मेरे जीवन की माला के जीवन धन तार तुम्हीं तो हो...
इस हार में जो उपहार को है कर रहे विहार तुम्हीं तो हो...'।

फिर पद्मा कहती हैं: ''माला बना चुकी। झूले को तो पहले ही फूलों से सजा चुकी हूँ; अब जाऊँ और पूजा के लिए निर्मल जल ले आऊं। परन्तु पद्मा, क्या प्राणनाथ तेरी इस नित्य की सेवा से प्रसन्न होंगे? क्यों न होंगे? यदि यह सेवा सच्ची है, यह देवता सच्चे हैं, तो वो अवश्य ही प्रसन्न होंगे...मैं कौन हूँ? यहाँ के

राजकुमार की पत्नी। किस राजकुमार की पत्नी? उनकी, जिन्होंने विवाह के समय भी स्वयं न जाकर अपनी यह कटार भेजी थी, इसीलिए तो उनके आने से पहले नित उनके भगवान की सेवा कर जाया करती हूँ। यही तो एक ढंग है उनकी आँखों में समाने का, यही तो रास्ता है अपने ठाकुर को भी पाने का।

'मैं हूँ उनके सहारे और वे इनके सहारे हैं,
दो चन्दा क्यों न चाहूँ, यह मेरे प्यारे के प्यारे हैं।'

वाह साहब वाह, यह तो आपने अच्छी बात सुनाई। लड़की का रोल करते हुए कभी, मास्टर साहब, आपको नाचने का मौक़ा मिला होगा?

हाँ, *परिवर्तन* नाटक में चन्दा का रोल– वेश्या का रोल– किया था, तो उसमें नाचने का भी मौक़ा मिला था। उसमें नाच सीखना पड़ा था, लेकिन उस कंपनी के जो डांस मास्टर थे, उन्होंने इस मामले में मुझे बहुत कमज़ोर पाया, चूंकि नाच की तरफ़ मेरा ज़्यादा लगाव नहीं था। जितनी ज़रूरत थी, उतना सिखाया गया, पर मेरा पार्ट बड़ा कामयाब रहा।

तो मास्टर साहब, अभी आपने बताया कि आपने लड़की का रोल किया शुरू में। ज़ाहिर है कि आपके शरीर और चेहरा-मोहरा ख़ूबसूरत रहा होगा, तो आपको इस तरह के रोल मिलते रहे। उसके बाद आप फिर मर्दाने रोल में आ गए। तो मर्दाने रोल में आपको याद है कि पहले रोल में ही आपने हीरो का रोल किया था? या साइड हीरो का– कौन-सा रोल आपने पहला किया था?

सबसे पहले मैंने *फ़साना-ए-अजायब* ड्रामे में जान-ए आलम का पार्ट किया था। उसके बाद तो मैं और पार्ट करने लगा। क़द भी मर्दाने पार्ट करने के लिए हो गया। उसमें अर्जुन का रोल मेरा बड़ा कामयाब रहा।

कितने नाटकों में आपने पुरुषों का रोल किया होगा?

पहले तो मैं *वीर अभिमन्यु* में उत्तरा करता था। उत्तरा के पार्ट में तो बड़ी कामयाबी मिली। यहाँ तक कि वही ड्रामा जब दोबारा देखने के लिए सन 1923 में पंडित मदन मोहन मालवीय आए–जो राधेश्यामजी के गुरू थे–...जब चक्रव्यूह का सीन ख़त्म हुआ और पाँच मिनट का इंटरवल हुआ, तो सब एक्टरों ने पंडितजी से कहा कि मालवीयजी को अंदर लाइए। चूंकि यह धार्मिक खेल था और पंडितजी को मालूम था कि यहाँ तो रंगमंच की पवित्रता बनी हुई है; और हक़ीक़त तो सही यह है कि न्यू ऐल्फ्रेड कंपनी, कंपनी नहीं थी बल्कि मिलिट्री कैम्प था; जो डिसिप्लिन था, वैसा दुनिया में मैंने कहीं नहीं पाया। ...तो मालवीय जी अन्दर आए। सन् 1923 में यह वह समय था जब कांग्रेस का नरम दल असेम्बली में था और गरम दल दाख़िल नहीं हुआ था। नरम दल में मोतीलाल नेहरू और सरोजिनी नायडू और सेनगुप्ता, यह सब लोग थे।

....पंडितजी अंदर आए। सबने उनके चरण छुए और जब मैंने उनके चरण छुए तो वह कहने लगे कि भई राधेश्याम, इस लड़के का हिन्दी उच्चारण बड़ा शद्ध है। तो राधेश्यामजी बड़े ख़ुश हुए और कहने लगे कि हाँ, यह मेरा शिष्य है और इसका नाम फ़िदा हुसैन है। मालवीय जी कहने लगे कि फ़िदा हुसैन और ऐसी हिन्दी? मैं जा चुका था, पर कहने लगे कि बुलाओ उसे। मैं आया, तो वह बोले आओ; कहने लगे कि क्या नाम है आपका? मैंने कहा कि फ़िदा हुसैन, तो पूछा इस नाम का अर्थ जानते हैं आप? मैंने कहा, जी।

मालवीयजी कहने लगे कि हुसैन कौन थे? मैंने कहा कि पैग़म्बर के नवासे थे, लड़की के लड़के। बोले हाँ, ठीक समझे। बोले वही बुनियाद है, जिसकी वजह से आज इस्लाम की इतनी बड़ी हुकूमत क़ायम है। कहने लगे कि भई राधेश्याम, मैं भी इसके हिन्दी प्रेम को देखते हुए अपनी तरफ़ से एक नाम रखता हूँ। मेरे सिर पर हाथ फेरा, आशीर्वाद दिया, और कहा कि मैं इसका नाम प्रेमशंकर रखता हूँ, फ़िदा हुसैन के साथ-साथ। तो वहाँ मुझे प्रेमशंकर का नाम मिला।...उसके बाद जब मैं अर्जुन के पार्ट में आया, वह डायलॉग मैं आपको सुनाता हूँ।

ज़रूर साहब।

उसमें आप मेरा ज़रा-सा साथ दे देंगे, कृष्ण के एक-दो सवाल हैं....

ज़रूर, ज़रूर, आप बताएं।

पहला ही सीन है...[अर्जुन कहते हैं :] ''भगवान, न जाने आजकल क्यों मेरा बायाँ नेत्र क्यों फड़का करता है? जबसे आचार्य कौरव दल के सेनापति हुए हैं, तब से बराबर कलेजा धड़का करता है। मैं जी को बहुत रोकता हूँ, तो भी यह टूटा जाता है, और मेरा यह गांडीव धनुष हाथों से छूटा जाता है।''

[कृष्ण पूछते हैं:] ''ऐसा क्यों हो रहा है अर्जुन?''

''नाथ, जिन हाथों ने द्रुपद के यहाँ मच्छ बाण द्वारा मारा,
जिन हाथों ने नृपविराट का सेवा पद भी स्वीकारा,
जिन हाथों ने पूज्य पितामह को भी रण में संहारा,
जिन हाथों ने दादाजी के लिए प्रकट की जलधारा,
वही हाथ हृदय की नाई.. अब तो काँपे जाते हैं,
युद्धस्थल में गुरु के ऊपर जब हम बाण चलाते हैं।''

''तो क्या निर्बल हो गए?''

''नहीं! बल तो वही है, किन्तु जब साज़ उठाता हूँ,
तो उठाया नहीं जाता, जब राग ज़माता हूँ तो जमाया नहीं जाता,
जाता हूँ किन्तु पैर बढ़ाया नहीं जाता, उन नेत्रों से नेत्र मिलाया नहीं जाता;
जीते जी यह अनर्थ कमाऊंगा नहीं मैं, गुरूदेव पे गांडीव उठाऊंगा नहीं मैं।''

आपने फ़रमाया था कि आपने क़रीब ढाईं सौ नाटकों का डायरेक्शन किया। क्या आपने कुछ नाटक ख़ुद भी लिखे?

हाँ, ख़ुद लिखने के मायने यह है कि जो भी लिखने वाला मैं पसंद करता था या किसी लड़के को छाँटता था जिसमें वो झलक है। ऐसे कई लड़के मेरे पास आए, उनको मैंने तरीक़ा सिखाया। उनसे ड्रामे लिखवाए, उनका सुधार किया, और उन ड्रामों को जब स्टेज पर पेश किया, तो वह बहुत कामयाब हुए।

कोई नाम बताएं, इन नाटकों में।

उनमें शुरू में तो सबसे पहला ड्रामा था *खेतों की रानी*। उसमें ख़ुद मैं बैजू का कैरेक्टर लिए हुए था–गंवार है, पर कॉमेडियन टाईप। वह बहुत चला और लोगों ने बहुत पंसद किया, और इसी तरह से *गलियों की रानी, महलों की रानी* वग़ैरह उसके चार हिस्से ड्रामे में निकाले और ख़ुद ही लिखवाया। वो देवानन्द का एक पिक्चर भी देखा था। पाके-प्यार वग़ैरह। वो उसकी कुछ झलक थी। अपने ड्रामों में मैंने ज़्यादातर मुखराम शर्मा का फ़ार्मूला अपनाया था।

मुखराम शर्मा का, जो फ़िल्म के लेखक थे?

हाँ जी, दो घंटे या ढाई घंटे के नाटक में ऐसा होता था कि शुरू में तो ख़ूब हंसी-मज़ाक रहे, उसका कुछ हिस्सा। उसके बाद वह कहानी चली, तो उसमें सस्पेंस, ट्रेजेडी, गोया फ़ार्मूला ऐसा कि पब्लिक को पसंद आता ही था।

तो वह जो बैजू का रोल आपने किया था, कुछ याद है? कोई संवाद वग़ैरह...

नहीं, इतने ड्रामे किए थे, पाठक साहब, याद कहाँ से रह सकता है। मुझे तो बीस साल रिटायर हुए घर बैठे हो गए हैं।

हाँ, हाँ, बिल्कुल। अच्छा मास्टर साहब, ज़रा यह और बताएं कि आप दूसरी कंपनियों में ही काम करते रहे पारसी थिएटर की या कुछ अपनी स्थापना भी की– क्लब वग़ैरह?

हाँ, न्यू ऐल्फ्रेड से जाने के बाद तो मैं फ़िल्म में गया कलकत्ते। सन 1931 में जब ऐल्फ्रेड कंपनी बंद हो गयी, जब टॉकीज़ ईजाद हो गई, तो कंपनियों ने दम तोड़ दिया। तो मैं फिर फ़िल्म लाईन में आ गया, कलकत्ते।

तो फ़िल्म में भी आपने कुछ काम किया?

हाँ, सन 1932 से लेकर 1936 तक मैं फ़िल्म में रहा और नौ पिक्चरों में काम किया। वहाँ भारतलक्ष्मी में जगदीश सेठी और के. एन. सिंह वग़ैरह सब साथ ही में थे।

पृथ्वीराज कपूर वगैरह भी रहे होंगे आपके साथ?

हाँ पृथ्वीराज कपूर भी उसमें थे, न्यू थियेटर में और जब देवकी बोस ने *सीता* बनाया, ग़ुल हमीद उसमें थे लक्ष्मण। हम थे भारतलक्ष्मी में। पंडित सुदर्शन बहुत मशहूर नॉवलिस्ट थे, उपन्यास लिखने वाले। उनका पहला पिक्चर जो था, *रामायण,* वह बन रहा था। उस वक़्त तो प्लेबैक नहीं था; आवाज़ की वजह से यह तय हुआ कि कुछ ना कुछ मेरा भी पार्ट रखना चाहिए। तो एक पुजारी का पार्ट और उसमें एक गाना रखा था गोया....

उसके बाद *मस्ताना* में मैं हीरो बना। उसके बाद *डाकू के लड़के* में सेकंड हीरो बना। *दिल फ़रोश* में, *दिल की प्यास* में प्रेमनाथ बना, *ख़ुदाई ख़िदमतगार* में विजयसिंह सिपहसालार बना। ऐसे नौ पिक्चरों में काम किया क़रीब-क़रीब, और आख़िरी में था *मतवाली मीरा* जिसमें गुरू रैदास का पार्ट था। उसी सिलसिले में और एक ज़रा-सी बात कह दूँ– सन 1932 में गया तो उसी सिलसिले में वहाँ पर हिज़ मास्टर्स वॉइस

(एच.एम.वी.) में किसी सूरत से गोया मुलाक़ात हो गयी। वहाँ क़रीब-क़रीब हिज़ मास्टर्स वायस में दो सौ रेकॉर्ड मेरे भरे गए हैं।

दो सौ रेकॉर्ड आपके? सब गाने के हैं?

जी, सब गाने के हैं। ग़ज़लें– जितने भी शायर मशहूर हुए हैं– डॉक्टर इक़बाल से लेकर जिगर मुरादाबादी की चालीस ग़ज़लें रेकॉड की, और कमल मुरादाबादी की भी, ग़ालिब और दाग़ और तपिश और बड़े-बड़े शायरों का जितना कलाम...और भजन– मधुर साहब जो मौजूद हैं हमारे, साथी हैं कलकत्ते के, बंबई में– उनके लिखे गए हिन्दी और पंडितजी का एक भजन खूब चला। ''निर्बल के प्राण पुकार रहे, जगदीश हरे, जगदीश हरे'', वो जो चला, पूरे हिन्दुस्तान भर में छा गया।

मास्टर साहब, अगर आप इस भजन को गाकर सुनाएं तो बहुत अच्छा रहेगा, एक यादगार रहेगी हमारे पास।

इंकार नहीं है, किंतु आवाज़ इस क़ाबिल नहीं रही है।

वह तो उम्र के साथ-साथ होना ही है, लेकिन फिर भी...

[गाते हैं]

'निर्बल के प्राण पुकार रहे जगदीश हरे, जगदीश हरे।
आकाश हिमालय, सागर में, पृथ्वी, पाताल चराचर में,
ये मधुर बोल गुंजाए रहे, जगदीश हरे, जगदीश रहे।'

वाह साहब, वाह।...मैं आपसे मालूम कर रहा था कि आपने अपना कोई क्लब वग़ैरह बनाया– मेरी बात अधूरी रह गयी थी।

हाँ, चूंकि ड्रामे से लगन तो था; वहाँ तो हवस पूरी नहीं होती थी– फ़िल्म लाईन में। वहाँ तो कभी पंद्रह दिन में शूटिंग का नंबर आया, ख़बर आ गई कि कल गाड़ी आएगी, वहाँ चले गए खाली वक्त में। अच्छा, एक ज़रा सी बात और बता दूँ, जब ज़लज़ला आया था बिहार में, उस ज़माने में ज़लज़ले के लिए चैरिटियाँ हुईं।

अच्छा, चैरिटी शो हुए?

हाँ, तो उसमें अख़्तरीबाई फ़ैज़ाबादी ने चैरिटी की थी।...उसमें ऐसा हुआ कि पब्लिक में एनाउंसर नहीं मिल रहा था, उनको इनट्रोडक्शन कराने के लिए। फलाँ साहब कब गाएंगे और फलाँ बाई कब गाएंगी... डरते थे लोग... मसीत ख़ाँ साहब थे। रामपुर के न्यू थियेटर में तबला के जो पण्डित थे। वो हमारे क्लब में भी आते थे। उन्होंने कहा–हमारे क्लब के डायरेक्टर हैं, उनसे कहो वे कर देंगे एनाउंस... तो हुआ यह कि क्लासिकल गाने थे और पब्लिक थी आम मारवाड़ी, कुछ दिल्लीवाले सौदागर लोग, किसी का जम नहीं रहा था प्रोग्राम। नतीजा यह हुआ कि वहाँ कभी-कभी क्लब में ग़ज़लें सुनाता था। अपने बैठकर रिहर्सल खत्म करने के बाद... वहाँ कुछ लोग जो बैठे हुए थे, उन्होंने कहा कि साहब, कुछ चल नहीं रहा है मामला, आप ही एक आध ग़ज़ल सुना दीजिए। तो वो जो एक आवाज़ निकली तो लोगों ने कहा– क्या ये भी गाते हैं?

कहने लगे- अरे भाई सुनो तो सही... मुख़्तसर ये कि फिर वहाँ शोर मच गया। पब्लिक ने कहा कि नहीं इनको गाने दीजिए। ...अख़्तरी बोली, भाई साहब मेरी इज़्ज़त रखिए। वहाँ जो तीन ग़ज़लें मैंने सुनाईं, उसका नतीजा यह हुआ कि कलकत्ते की पब्लिक में मैं गोया आ गया, इंट्रोडक्शन हो गया और लाईन लग गई कमरे के नीचे मोटरों की।

अच्छा, मास्टर साहब, जब आपने ग़ज़लों का ज़िक्र किया है– हम शोर तो नहीं मचा रहे है, पर इसरार कर रहे हैं कि एक-आध ग़ज़ल जो आपने वहाँ सुनाई वो यहाँ सुना दीजिए।

(गला साफ करते हुए) उससे पहले एक-दो शेर आपकी ख़िदमत में पेश कर दूँ।

इरशाद।

'ज़ुल्फ़ इस शान से उस शाने पे बिखराई है।
ख़ुद घटाओं ने कहा काली घटा छाई है।।'

'उनके होंठों पे तबस्सुम है, ख़ुदा ख़ैर करे,
देखना यह है कि किस-किस की क़ज़ा आई है।'

ग़ज़ल के शेर पेश कर रहा हूँ [ग़ज़ल गाकर सुनाते हैं:]

'वो जिस दम ग़ैर की बज़्में अज़ा में नौहागर जाएँ,
हमें उस दिन को मौत आ जाए, हम उस दिन को मर जाएं।
वो आहों से हैं नाख़ुश और रोने भी नहीं देते,
ग़रज़ उनका यह मतलब है, यूँ ही घुट-घुट के मर जाएं।
...इधर वो तन के बैठे हैं, उधर आईना रखा है,
अब इनके देखने वाले बताओ तो किधर जाएं।'

आख़िरी है–

जी, इरशाद।

'कहा ज़ालिम ने जब नाले सुने अपने मरीज़ों के
ये चिल्लाते हैं क्यूँ, मरना है तो चुपके से मर जाएं!
वो जिस दम ग़ैर की बज़्में अज़ा में नौहागर जाएँ....'

वाह! तो फिर जैसा आपने फ़रमाया, आपकी मांग बढ़ गई कलकत्ते में। उसके बाद आपने फिर वहाँ पारसी थियेटर के लिए कुछ किया?

जिस वक़्त मैं फ़िल्म से अलग हुआ हूँ–चूंकि कलकत्ते में हिन्दी पिक्चर बनने बन्द हो गए थे, तो वहाँ उस कम्पनी में रहते हुए ही ...मिस कज्जन, जो सबसे पहली हीरोइन थी हिन्दुस्तान की...उसने अपनी थियेटर कंपनी स्टार्ट की कलकत्ते में। उसको अपने क़द का–वह लंबे क़द की थीं– हीरो की ज़रूरत हुई, तो उसको लोगों ने सलाह दी कि फिदा हुसैन के नाम से जो अक्सर यहाँ चैरिटियाँ आदि में भी... ख़ैर मुख़्तसर ये कि

उस कंपनी को मैंने जॉयन किया, वहाँ मैं डायरेक्टर भी बन गया; उस कंपनी ने पेशावर और क्वेटे तक सफ़र किया।

क्या नाम था उस कंपनी का?

कज्जन थियेट्रिकल कंपनी, उसका *लैला-मजनूं* बहुत चला। वह लैला बनती थीं, मैं मजनूं बनता था।...उसी सिलसिले में एक मज़ेदार बात याद आ गई, न्यू ऐल्फ्रेड कंपनी में जब *लैला-मजनूं* चला था। कज्जन के यहाँ तो बाद की ज़िक्र है।

राजा पटियाला की सालगिरह में न्यू ऐल्फ्रेड कंपनी गई थी, तो वहाँ पर राजा ने मांग की कि हमें *लैला-मजनूं* दिखलाओ पहले। न्यू ऐल्फ्रेड कंपनी के तो *अभिमन्यु, कृष्णावतार*, वग़ैरह यह सब नाटक थे। पर उन्होंने कहा कि नहीं, हमें तो *लैला-मजनूं* दिखलाओ। लैला का पार्ट करने के लिए औरत नहीं कोई, वहाँ पर तो लड़के पार्ट करने वाले थे। इत्तफ़ाक़ से लैला का पार्ट तो मैं ख़ुद ही करता था। पर जब मजनूं का पार्ट करने का जब नंबर आया तो मैंने कहा कि मजनूं का पार्ट मैं करूंगा। तो लैला के पार्ट के लिए कोई नहीं मिला।...वहाँ महाराज के ख़ानदान का एक सिख लड़का था। उसकी इतनी अच्छी आवाज़ थी कि अगर वह कहीं परदे में गा रहा हो, तो आप यह कहेंगे कि कोई बेहतरीन गाने वाली औरत है। उस लड़के से मैंने दोस्ती की। लैला-मजनूं की कहानी और ड्रामा पूरे पटियाले की सब पब्लिक को याद थे, इतना शौक़ीन शहर था; तो साहब उस लड़के को भी याद था लैला का पार्ट बिल्कुल... उसको मजबूर किया। उसकी दाढ़ी जो कुछ निकली हुई थी साफ की और उसका मेकअप किया।

बाल तो माशाअल्लाह थे ही नेचुरल...

सो हमने उसे बुला लिया। अगर कहीं मालूम हो जाता राजा को, तो हम ज़रूर जेल में जाते। लेकिन जब रात को ड्रामा ख़त्म हुआ, दो-तीन बजे, उस लड़के का मेकअप उतार कर और नकली दाढ़ी (मसनुई) लगाकर हमने उसको घर भेज दिया। (हँसते हैं) ड्रामा बहुत कामयाब हुआ।

अच्छा, कज्जन थियेट्रिकल कंपनी के बाद आपने क्या किया?

कज्जन कंपनी के बाद शाहजहाँ कम्पनी कानपुर दंगों में बंद हो गई तो फिर मैं घर चला गया, और उसके बाद ही कलकत्ते से फिर ऑफर आ गया। यह मणिक लाल डांगी, कंपनी के डायरेक्टर थे, उस कपंनी को जॉयन किया। उसके बाद, सन 1942 में, मैंने फिर अपनी कंपनी बनाई, 'नरसी थिऐट्रिकल कंपनी', कानपुर में। जब गांधीजी का आंदोलन चला तो फिर मैं दिल्ली आ गया, कंपनी बंद करके। फिर बाबू रोशनलाल की मिनर्वा थियेटर में तीन साल तक *नरसी मेहता* चला और उसी में गुरू शंकराचार्य भी आए, 'नरसी' की उपाधि दी गयी मुझे करपात्री जी के यज्ञ के समय में...

अच्छा, अच्छा, अच्छा! यह तो बहुत बड़ी उपलब्धि है आपकी। तो यह नरसी मेहता नाटक तो बहुत मशहूर रहा है आपका, दिल्ली में सुना है बड़ी धूम रही है।

तीन सौ नाइट हुआ बराबर दिल्ली में। जुगुलकिशोरजी बिड़ला साहब वग़ैरह सभी ने देखा इसे।

नरसी मेहता का कोई डायलॉग या कोई गाना अगर आपको याद हो तो सुनाइए।

वही जो आपके रामलीला में, परेड ग्राउंड में, ज़रा-सा आइटम दिया था।

हाँ, वही सुना दीजिए।

उसकी नवासी का शादी का जो पत्र आता है, उसमें समधी ने लिखा है कि इतनी ज़ंजीरें सोने की चाहिए। जब पत्र आता है, वह तो शहर के बाहर मंदिर में है। उसकी स्त्री कहती हैं कि कहाँ से लाएंगे यह सब। पत्र पढ़कर नरसी कहते हैं कि कोई बात नहीं, हमें इसकी चिंता नहीं। गाने के बोल–

'नरसी चिंता क्यों करें, नरसी के संग श्याम
प्रथम लिखा है पत्र पर साँवल शा का नाम,
आन रहे प्रभुभक्त की, छोड़ न देना साथ।
सौंपत हूँ इस पत्र को तुमको दीनानाथ,

यह कहकर [नरसी] पत्र को भगवान के चरणों में रख देता है और करताल उठा लेता है फिर गाने के बोल :

'जा जे कुमकुम पत्र तू, कहना ये संदेश,
लाज बचाना श्याम तुम, लगे न मन को ठेस।
कहना मेरे मन की बात ठाकुर से जाके,
कहना मेरे मन की बात मोहन से जाके
नेहा लगा के क्यों है भुलाया?
क्यों तड़पाया? क्यों है रूलाया?
कहना इस टूटे दिल की बात, मोहन से जाके,
कहना मेरे मन की बात ठाकुर से जाके,
कहना मेरे मन की बात मोहन से जाके....

वाह वाह! अच्छा मास्टर साहब, अब हम यह भी जानना चाहेंगे कि आपने जो इतनी सारी उपलब्धियाँ हासिल कीं –आपको नरसी की उपाधि मिली शंकराचार्यजी से, और मालवीयजी से प्रेमशंकर का नाम मिला– तो कुछ और पुरस्कार और सम्मान वग़ैरह भी मिले होंगे आपको। हम आपसे जानना चाहेंगे जो ख़ास-ख़ास इनायत आपको मिले हों और सम्मान मिले हों...

सम्मान तो– रियासतों में जब कंपनी जाती थी– महाराजा पटियाला की तरफ़ से मिला चांदी का कप, मुझे प्रेजेंट किया गया मजनूं के पार्ट पर; राजा मानसिंह जब गद्दी पर बैठे थे, जयपुर वाले, वह मैडल वग़ैरह वो चीज़ें तो घर में मौजूद हैं मेरे पास। नवाब टोंक, हैदराबाद के महाराजा कृष्ण प्रसाद, जो वहाँ के वज़ीर थे, उनकी तरफ़ से मैडल मिला। सर पदम्पत सिंहानिया, जुगलकिशोरजी बिड़ला, और आपके महाराजा कश्मीर हरीसिंह; महाराजा अलवर; महाराजा रामपुर रज़ा अली ख़ाँ– इन सब की तरफ़ से मुझे मैडल मिले; और तीन राज्यपाल यू.पी. के, मुरादाबाद जब भी आए, उनकी तरफ़ से प्रमाणपत्र मिले, यह सब चीज़ें मौजूद हैं, तमाम चीज़ें।

सरकार की तरफ़ से कोई सम्मान मिला, उत्तर प्रदेश की गवर्मेंट से कुछ आपको मिला?

हाँ, मुझे संगीत नाटक अकादेमी की तरफ़ से–वहाँ पर सन 1976 में मुझे बुलाया गया–और वहाँ दो हज़ार रुपया नक़द, ताम्रपत्र और शाल, यह सब मुझे मिला। उसके बाद 1981 में कलकत्ते के नाट्य शोघ संस्थान ने बुलाकर सम्मानित किया...

मास्टर साहब, पारसी थियेटर का भविष्य अब कुछ अंधकार में है। आप बताएं कि इसके लिए क्या करना चाहिए सरकार को और हम लोगों को?

इसके लिए मेरा यह कहना है कि शुरू से ही थियेटर की चर्चा चल रही है, और संस्थाएँ भी क़ायम हो गई हैं हिन्दुस्तान भर में। लेकिन जब तक व्यवसायी रूप में यह नहीं आएगा सामने, तब तक इसकी उन्नति होनी मुश्किल है।

हाँ, यह बात तो बिल्कुल ठीक है।

इसके लिए थियेटर हॉल नहीं मिलते। जब तक गवर्नमेंट की सहायता न हो, तो कम्पनी का चलना मुश्किल हैँ चूँकि आज का दर्शक टीन के मंडवे में कभी भी बैठना पसंद नहीं करेगा, और थियेटर, जो परमानेन्ट सिनेमाओं ने घेर रखे हैं, उनका मिलना मुश्किल है। फ़िल्म के तो बारह रील रख दिए एक ट्रंक में और पूरे हिन्दुस्तान घूम आए। थियेटर में तो पूरे दो वैगन सामान के साथ चले, टेकनीक और उसका सैटिंग वग़ैरह सब। तो जब तक व्यावसायिक रूप न ले ले। अच्छा, संस्थाओं का जहाँ तक ताल्लुक़ है, उसमें मुझे ये कहना है कि ज़रूर बंग्ला में– कलकत्ते में तो मैंने यह देखा है कि डिसिप्लिन बड़ा अच्छा है; वह बहुत समय के पाबंद हैं; लेकिन हमारी संस्थाएँ जो हैं, ऐम्चयौर हैं।

हाँ, बेशक।

वह कहीं समय की पाबंदी नहीं करते, और समय पर न आने के बाद जो डिसिप्लिन रहना चाहिए, वो मानते नहीं। जब तक यह न हो, थियेटर की उन्नति होना मुश्किल है। मैं तो यही कहूंगा कि अगर संस्थाएँ चलती हैं, तो उनमें नियम का कड़ाई से पालन किया जाए। ख़ासकर उनमें जो आर्टिस्ट हैं, जो समय पर नहीं आते, उनकी रिहर्सल सही नहीं होती, तो ड्रामे को जैसा कामयाब होना चाहिए, जैसी सफलता मिलनी चाहिए, वैसी नहीं मिल पाती। इसलिए उनको प्रॉम्प्ट का सहारा लेना पड़ता है। यदि वह मज़बूती के साथ टाईम से स्टेज पर आएं...और सीखें, उनको कामयाबी बहुत अच्छी मिल सकती है।

मैं समझता हूँ। आप यह कहना चाह रहे हैं कि सरकार को थियेटर का संरक्षण करना चाहिए...

हाँ बिल्कुल, बिल्कुल, जब तक सरकार की तरफ़ से...

जब तक अनुदान नहीं मिलेगी, तब तक पारसी थियेटर या कोई भी थियेटर आगे नहीं बढ़ पाएगा। वैसे तो सरकार बहुत कुछ कर रही है...लेकिन हाँ, पारसी थियेटर के लिए कुछ ख़ास नहीं हो रहा है।

लेकिन आप जैसे महानुभाव हैं, और आप जैसे और साथी यहाँ पर हैं; शायद उनका योगदान मिले तो इस कला को, जिसका नाम मिटता चला जा रहा है, उसको बना करके रखा जा सकता है।

बिल्कुल। अक्सर मुझसे लोग पूछते हैं कि फ़िल्म में, थियेटर में, या पारसी थियेटर या स्टेज में क्या फ़र्क़ है। तो मेरा कहना यह है कि उसमें बहुत ख़ास फ़र्क़ है। आज का जो रंगमंच का आर्टिस्ट है, वह तो इतना घिरा हुआ है बंदिशों में...कहीं उसको माइक्रोफोन की ज़रूरत है, कहीं उसको टॉप लाईट चाहिए, वह कितना बंधा हुआ है। लेकिन पहले का जो सब्जेक्ट था रंगमंच, वह बिल्कुल आज़ाद था।

जी, उसमें आवाज़ का कमाल था।

देखिए, एक ख़ास फ़र्क़ मैं आपको बताऊं फ़िल्म और थियेटर में: यदि फ़िल्म का आर्टिस्ट ग़लती करता है तो वह अपनी ग़लती देख लेता है और दुबारा उसे रिपीट किया जाता है। लेकिन अगर थियेटर का आर्टिस्ट ग़लती करता है तो वह ग़लती ही रह जाती है, और उसको सुधार हो ही नहीं सकता। कितना फ़र्क है इसके अन्दर। (हँसते हैं)

यदि तीर कमान से निकल गया, तो पब्लिक की मार सहनी पड़ेगी। अच्छा साहब, आखिर में, मैं आपसे यह जानना चाहता हूँ कि आप रंगकर्मियों को क्या कुछ मशवरा देना चाहेंगे? उनके लिए कुछ गाइडलाइंस दें, उनका कुछ मार्गदर्शन हो।

मेरा कहना तो यही है इस मामले में... उनके अंदर जो कमज़ोरी है, वो समय की पाबंदी नहीं करते। दूसरी बात यह है कि कैरेक्टर मिला उनको तो उसको ढंग से नहीं करते। उन्हें चाहिए कैरेक्टर की इतनी स्टडी करें कि उसमें रम जाएं। उसे शौक से करें।
मैंने नरसी मेहता के पार्ट में– यक़ीन दिलाता हूँ आपको कि उसमें रोने के जितने सीन थे, मुझे कभी कोशिश नहीं करनी पड़ी। मैं समझता था कि मैं सच्चा भक्त हूँ भगवान कृष्ण का, और सच्चे दिल से नरसी ही समझ के अपने को रहता था।

खो जाना पड़ता है उसमें अपने-आपको।

जी हाँ।

ऐसा है न साहब, एमैच्योर क्लब में समय की पाबंदी या डिसिप्लिन वग़ैरह होना ज़रा सा मुश्किल है, क्योंकि उन पर कोई बंदिश नहीं, कोई अंकुश नहीं है।

जी, उसके जो डायेक्टर हैं, वह ख़ुद भी पाबंद नहीं है टाईम के। उनकी खुद की कमजोरियाँ होती हैं।

हाँ, कमियाँ होती हैं। बहरहाल, आपका बहुत-बहुत शुक्रिया, मास्टर फ़िदा हुसैन साहब, आपने अपना क़ीमती समय दिया और अपनी यादें हमें सुनाईं, जो हमारे पास रेकॉर्ड रहेंगी; आने वाली पीढ़ी के लिए संजोके रख रहे हैं हम, आपकी थाती के रूप में। एक बार मैं फिर आपका बहुत-बहुत शुक्रिया अदा करूंगा। आदाब अर्ज़।

आदाब अर्ज़! शुक्रिया!

साभार : संगीत नाटक अकादेमी अभिलेखागार में संरक्षित रेकॉर्डिंग से प्रस्तुत। तिथि : 02.03.1986, समयावधि : 43 मिनट 16 सेकेण्ड, टेप-संख्या : 3363।

मास्टर फ़िदा हुसैन नरसी : [1899-1999] पारसी थियेटर के आरम्भिक मूर्धन्य कलाकारों में से एक। फ़िदा हुसैन साहब गायक, अभिनेता और रंग निर्देशक की भूमिकाओं में रहते हुए खुद एक सफल थियेटर संचालक भी रहे। आपने पचास वर्ष से अधिक समय तक पारसी थियेटर को अपने योगदान से समृद्ध किया, जिनमें न्यू अल्फ्रेड थियेटर और मून लाईट थियेटर का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आपकी प्रमुख भूमिकाओं से सजी कुछ नाट्य प्रस्तुतियाँ इस तरह हैं- 'परिवर्तन', 'वीर अभिमन्यु', 'श्रीकृष्ण अवतार', 'ईश्वर भक्ति', 'लैला मजनू', 'यहूदी की लड़की', 'नल-दमयन्ती', 'सीता वनवास', 'नरसी मेहता और 'भरत मिलाप'। नरसी भगत नाटक में अमर अभिनय के लिए आपके नाम में नरसी का उपनाम जोड़कर सम्मान दिया गया। ड्रामाके क्षेत्र में आपको केन्द्रीय संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार (1985) प्रदान किया गया। 'पारसी थियेटर में पचास बरस' नाम से आपकी आत्मकथा प्रकाशित और प्रशंसित रही है।

बलबीर पाठक : [1929-2017] बलवीर पाठक एक जाने-माने रंगकर्मी रहे, जिन्हें मुरादाबाद शहर, उत्तर प्रदेश की एक सांस्कृतिक पहचान के रूप में भी जाना जाता है। आपका रंगकर्म को सबसे बड़ा योगदान यह रहा कि आपने मास्टर फिदा हुसैन नरसी के रंगकर्म पर एक संस्कृतिकर्मी और आलोचक के रूप में विशेषज्ञता अर्जित की और जीवन-भर उनसे प्रभावित रहे। पिछली सदी के अस्सी के दशक में मास्टर फिदा हुसैन नरसी को अपनी जन्मस्थली मुरादाबाद की नाट्य गतिविधियों से उन्होंने एक बार फिर से जोड़ा, जिसमें उक्त नगर की संस्था 'आदर्श कला संगम' ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। बलबीर पाठक का एक महत्त्वपूर्ण योगदान यह भी है कि उन्होंने अपने शहर की रामलीला, जो 'मुरादाबादी शैली की रामलीला' कहलाती है, के संवर्द्धन, शोध और विकास के लिए ढेरों प्रयास किये।

राग की सच्चाई का भ्रम रखना...

उस्ताद बड़े ग़ुलाम अली ख़ाँ से नैना देवी की बातचीत

ख़ाँ साहब, आदाब अर्ज़ करती हूँ!

आदाब अर्ज़ है, मिज़ाज अच्छे हैं?

आपकी दुआ से सब अच्छा है। ख़ाँ साहब, आपको ज़रा-सी तकलीफ़ दूँगी मैं, माफ़ कीजिएगा?

फ़रमाइए।

कुछ बताइए अपने घराने के मुताल्लिक़? आप किस घराने से ताल्लुक रखते हैं?

मैं पंजाब के मशहूर घराने कसूर का फर्त्त हूँ। मैंने अपने बुजुर्गों से यानी अली बक्श ख़ाँ साहब किबला और चचा जान काले ख़ाँ साहब किबला और चचा ख़ाँ साहब फ़तेह अली ख़ाँ साहब से तालीम पाई, जो पटियाला के थे और यहाँ की गायकी को मेरे बाप और चचा और मुझसे फ़रूख़ हासिल हुआ। इस लिहाज़ से हम पटियाला स्कूल के कहलाते हैं।

बड़े ग़ुलाम अली ख़ाँ

अच्छा। आपने तो अपने बुज़ुर्गों से सीखा ही है, पर और किसी से भी क्या आपने कुछ हासिल किया?

अपने चचा और वालिद से सीखा बस!

ख़ाँ साहब, आपने तो बहुत ही कम उम्र से अपनी तालीम शुरू की होगी? अपनी इब्तिदाई तालीम के मुताल्लिक़ अगर कुछ बताएँ तो बड़ी नवाज़िश होगी?

मैंने पाँच बरस की उम्र से अपने चचा से इब्तिदाई तालीम शुरू की।

यानी काले ख़ाँ साहब से?

हाँ। शुरुआत के पहलू-ताल और अंतरे और स्थाइयाँ थीं।

अच्छा।

मिसाल के तौर पर ये अर्ज़ किये देता हूँ।

हाँ ख़ाँ साहब। कुछ सुनाएँगे अभी?

हाँ। (संगीत के साथ गायन आरम्भ करते हैं) 'अब मोरी नैया पार करो...'।

वाह! वाह! ख़ाँ साहब, आपका घराना तो हिन्दुस्तान का बहुत मशहूर घराना है। अगर आप अपने घराने की गायकी और उसकी ख़ुसूसियात पर रोशनी डालें तो बड़ी मेहरबानी होगी।

अच्छा। हमारे घराने की गायकी मेरे गान में गाने से ज़ाहिर है। जो भी अच्छाई-बुराई है, हमारे घराने की गायकी में, जिन चीज़ों को अहमियत दी गई है वो यह है कि सबसे पहले मुद्दे की शुद्धता, आवाज़ का खुलापन, सुर का सच्चा लगना, अस्थायी-अंतरे का भरना, फिर उसको लय में कहना, राग की सच्चाई का भ्रम रखना, बल्कि ख़ूबसूरती से कहना और हमेशा ग़ालिब नये और विलंबित को राग की शुद्धता के मुताबिक करना और वो तैयारी कहना, यानी जिससे राग पर, टप्पे पर फ़र्क ना आए और राग अपने मियाद से गिरकर ठुमरी का अंग न बन जाए।

मसलन?

(संगीत...गाकर बताते हैं) लय जिस तरह ठुमरी की आवाज़ में गाई जाती है और जिस तरह स्थाई-अंतरे में गाई जाती है, उनका अलैहदा-अलैहिदा करना, वो भी अभी कर देता हूँ।

जी। ज़रा बताइए, ख़ाँ साहब?

(संगीत आरंभ) 'प्रभु मोरी नैया पार करो...'। अब ठुमरी-आई अब..., ये दमदमा लेना बग़ैर वजह के, क्योंकि वहाँ तो लय गई नहीं, हमने दमदमा पहले वहाँ पहुँचा दिया।

ये ग़लत है, राग का...?

राग का धर्म यहीं से बिगड़ना शुरू हो जाता है।

जी।

हाँ जी, और मैंने जहाँ तक देखा है कि राग को जैसे बयान किया जाता है तो उसका तसव्वुर का मायना क्या है? तो ये मायना है कि उससे कुछ ऐसी जटिलता न पैदा हो जाए, वो बड़े से बड़ा रहे, जहाँ तक उसकी ख़ुसूसियत है, और ठुमरी को इस तरह गाते हैं कि जैसे एक आम चीज़ गाते हैं (गाकर बताते हैं)। ये दमदमा उस वक़्त देते हैं जिस वक़्त हम बहुत तैयारी पर हों और उसके दांव-पेंच आख़िर के हों।

वाह !

जो पहले गाया तो इसमें तो ठुमरी का अंग राग में गाना जायज़ भी नहीं समझते।

हल्कापन आ जाता है ख़ाँ साहब, बिल्कुल सही है।

हल्कापन आ जाता है।

अच्छा ख़ाँ साहब, आपकी आवाज़ में जो कशिश है, मैं दूसरों की आवाज़ में नहीं पाती हूँ। क्या आपने अपनी आवाज़ रियाज़ से बनाई है या ये ख़ुदा की देन है ?

आवाज़ सचमुच क़ुदरत ही की देन है। जिस आवाज़ में हम लोग बातें करते हैं, ये क़ुदरत ही की दी हुई आवाज़ है। कुछ आवाज़ें क़ुदरती तौर पर दिलकश ज़रूर होती हैं, लेकिन गाने वाली आवाज़ों को बहुत ही मसरूफ़ ढंग से बनाया जाता है। ज़्यादा ऊपर जाने वाली आवाज़ें अमूमन बारीक़ होती हैं और चौड़ी आवाज़ें अमूमन ऊपर ज़्यादा जा नहीं सकतीं और ऐसी आवाज़ों को ऊपर ले जाने के लिए अलग से तैयारी की जाती है। मेरी आवाज़ क़ुदरती सुरीली भी है और इसको चौड़ा-चिकना करने के लिए और पुरकशिश करने के लिए बुज़ुर्गों की बतलाई हुई मेहनतें भी की जाती हैं।

ज़रूर-ज़रूर! ख़ाँ साहब, थोड़ा-सा गाइए, क्योंकि आपकी आवाज़ किस तरह से ऊपर जाती है, ज़रा-सा बतलाइएगा कि आख़िर इतनी मुलायमियत के साथ किस तरह आप आवाज़ ऊपर ले जाते हैं?

वो बात यह है कि रियाज़ के जो तरीक़े हैं, वो मैं अभी इस वक़्त तो सभी नहीं बता सकता।

नहीं-नहीं, रियाज़ नहीं। सिर्फ़ ऐसे ही खाली ज़रा-सा गाइए नमूने के तौर पर, ताकि थोड़ा अंदाज़ा हो जाए?

अच्छी बात है।

'अब मोरी नैया पार करो...'।

ये जो चौड़ापन है, ये मेहनत से हुआ है?

मेहनत से। और मेहनत भी इस तरह की जाती है, ख़ास तरीक़े बताए जाते हैं, जो कि आम लोग नहीं समझ सकते।

वो फिर कभी आपसे सुनूंगी बाद में।

इंशा अल्लाह!

अच्छा ख़ाँ साहब, यह बताइए कि आप ख़्याल के उस्ताद तो हैं ही, इसमें तो कोई शक ही नहीं, पर आपकी ठुमरी जो है, वो भी अपने ढंग की एक निराली चीज़ है। आप ठुमरी के मुताल्लिक़ अगर कुछ बताएँ तो बड़ा अच्छा हो? सुनने में आता है कि आजकल ख़ासकर कि ठुमरी के दो अंग हैं, यानी पूरब और पंजाब। इसके बारे में आपका क्या ख़्याल है?

ये बड़ा ही अच्छा सवाल है, जो आपने मुझसे पूछा। ठुमरी का अंग तो एक ही है पूरब अंग, और ये हसीन ज़ात पूरब ही की है।

अच्छा, तो पंजाब अंग की कोई अहमियत नहीं है?

मैं अर्ज़ करता हूँ, इस चीज़ को ईजाद हुए करीबन डेढ़ सदी के लगभग का अरसा हुआ होगा। पचास-साठ बरस हुए इस चीज़ को, जब पंजाब वालों ने अपनाया।

अच्छा।

इसके अपनाने वाले मेरे ही बाप-चचा हैं और इनसे पहले पंजाब में कोई नहीं गाता था। वो लोग इसे पूरब के अंदाज़ से गाते थे, क्योंकि ठुमरी के बोल पंजाबी में आज तक सुनने में नहीं आए।

नहीं आए।

हमारे यहाँ पंजाब में लोक संगीत का ज़्यादा रिवाज़ था और है और वो भी अपनी नौईद का अपना अलग अंग है। अपनी जगह पंजाब की ख़ूबियों की तर्जुमानी करता है।

जैसे माहिया वगैरह?

हाँ। बुज़ुर्ग शायर गुज़रे हैं, उनका कलाम पंजाब की लोक धुनों में गाया जाता है। इस तरह सिंध में भी वो बहुत ही प्यारा अंदाज़ है, यानी सिंध, पंजाब और मुल्तान के इलाक़ों का अंदाज़ गाने का और फ्रन्टियर वगैरह। पंजाब वालों ने इन सब अंगों को मिलाकर एक ख़ुशनुमा गुलदस्ता बनाया, जो अपनी जगह ख़ूबसूरत मालूम होता है।

यानी जैसे मुल्तान भी है, सिंध भी है, पंजाब भी है—सब कुछ है?

जी हाँ। अब रहा पूरब, तो वो अपनी जगह उसी पूरब की तहज़ीब और तकल्लुफ़ात का इज़हार करता है। ठुमरी बहुत ही मुश्किल है। इसको गाने वाला कभी-कभी पैदा होता है। हर गाने वाला इसे अदा नहीं कर सकता।

सही है, यक़ीनन सही है।

अमूमन, जज़्बाती लोग ही पेश कर सकते हैं। अब मैं आपकी ख़िदमत में दोनों अंग पेश करता हूँ और हाँ, पंजाब और पूरब, इन दोनों इलाक़ों में अच्छा-बुरा गाने वाले हैं।

क्यों नहीं?

सब अच्छे नहीं। बुरे भी नहीं। अच्छों ने संभाला है, बुरों ने बिगाड़ा है। यूँ थोड़ा-थोड़ा दोनों को पेश करता हूँ। (हँसी)

हाँ!-हाँ! ज़रा दोनों अंगों को सुनाइए? ख़ाँ साहब, बहुत तकलीफ़ दे रही हूँ, माफ़ कीजिएगा?

अच्छा, पूरब अंग में गाता हूँ-(संगीत) 'तोरी तिरछियाँ नजरिया के बाण...'। अब इस तरह की सोच-समझ के साथ ये पूरब अंग को वही लोग गा सकते हैं, जिनके अच्छे ख़्याल और अच्छे जज़्बात हों; और अब रहा

ये पंजाब। पंजाब और सिंध का अंग मिलाकर के अच्छे लोगों ने तो अच्छे-अच्छे सुरों में गाया। जो बेख़बर लोग थे, उन्होंने कुछ और भी तरह गाया।

वो भी सुनाइएगा ज़रा? (सम्मिलित हँसी)

(संगीत...गायन आरंभ) 'वफ़ा से दाग कैसा...'। अब साहब रहा वो, जिसको हम बिगाड़ते हैं।

ये पंजाब अंग है?

न, सिंध है।

सिंध है, अच्छा।

अब तो बिगाड़ते हैं, इसको हम बजाकर के।

अच्छा।

(संगीत) न उनको आवाज़ लगाना आता है न कुछ, वो सिर्फ़ सुर की धुन में पंजाब और सिंध का अंग मिलाकर के गा देते हैं। ऐसे भी लोग होते हैं, जो किसी के सिखाए हुए नहीं हैं।

जी।

तो वो लोगों का अंग है, जैसे उर्दू वालों का अंग (गाकर बताते हैं)। अब वो सीखा हुआ अंग तो है नहीं, न उसमें वो सुर का मज़ा, न लय का मज़ा। एक बात है वो कह दी।

ये पंजाब अंग फिर कौन-सा है? पंजाब अंग जो...

ये लीजिए पंजाब-(संगीत) 'कैणों रोबे हाणियाँ...'। ये है साहब राग भैरवी। इसको शुद्ध करके गाना पहले बुजुर्गों से हमने सुना-(आलाप) आ ऽऽऽ...-ये था। चाहे पंजाबी गाना भी गाते तो इसका दम ठीक रखते, अब हमारे हिन्दुस्तानी शैली वालों ने रखा।

जी।

ऋषभ कड़ा भी लगा दिया, कड़ा मद्धम भी लगा दिया, और फिर उसका मज़ा लेने लगे।

हाँ, हाँ। भैरवी के।

(आलाप) ये आप समझीं?

हाँ!

तो ये लगा दिया। अब ये शुद्ध भैरवी तो रही नहीं।

जी!

क्योंकि शुरू में ये सब चीज़ें नहीं। (आलाप करके बताते हैं)- ये है शुद्ध भैरवी।

जी।

अब देखिए, (आलाप गाते हैं) 'रस के भरे तोरे नयना...', कड़ा मद्धम भी लगा दिया, उसकी शुद्धता जाती रही। वो एक मिकचर बना दिया, जैसे सिंध और पंजाब मिल गए।

अच्छा अब ठुमरी, जिसे लोग पंजाब अंग कहते हैं। आप तो कहते हैं कि उसको मिलाकर..., उसका ख़ूबसूरत तरीक़ा कैसा है? ज़रा वो नमूना भी...?

वो ख़ूबसूरत तरीक़ा, मैं जिस तरह से गाता हूँ?

हाँ, तो उसको...?

न तो हिन्दुस्तानी अंग, न पंजाब अंग।

हाँ, वो जो ख़ूबसूरत अंग...?

वो ये है कि सुरों को अच्छे तरीक़े से लगाना। इनमें ये नहीं कि मैं जैसे वो करते हैं हिन्दुस्तानी गायक, वो करने लगूँ, जैसे पंजाबी करते हैं वो करने लग जाऊँ, क्योंकि मैं तो गवैया हूँ, जो मेरी पसंद।

सुलझा हुआ अंग।

सुलझा हुआ अंग। तो मैं अर्ज़ किए देता हूँ-(संगीत व गायन करके दिखाते हैं) 'रस के भरे तोरे नयना...',ये सुलझापन है। मैं इसको एक राब की शक्ल नहीं देता, एक गुलदस्ते की शक्ल देता हूँ।

हाँ।

'रस के भरे तोरे नयना...'(गाकर सुनाते हैं)।

ये तो पूरब ही हुआ?

वो जो मैंने ज़ोर से लंबी आवाज़ लेने और कम करने को...

वो तो पूरब अंग को बिगाड़ते हैं, मगर सुलझा हुआ ये है।

ये है सुलझा हुआ।

तो आपके ख़्याल में भी ये है कि पूरब अंग और पंजाब अंग कुछ नहीं है। ठुमरी के लिए एक ही अंग है?

एक ही अंग है, जो सुलझा हुआ हो।

सुलझा हुआ हो। सुलझा हुआ, जिसमें कि जज़्बात, सारे इज़हार...

हाँ-हाँ।

किये जाएँ, वही है।

और सुरों को इस तरह न बरता जाए, जिससे वो कुछ अपनी मियाद से गिरे हों।

हाँ-हाँ।

ये नहीं होना चाहिए। (आलाप करके दिखाते हैं), यूँ न हो।

हाँ, और पहाड़ी? जैसे पंजाब अंग में आम तौर पर लोग यूँ कहते हैं कि ये पंजाब अंग की ठुमरी सुनो–पहाड़ी में गाते हैं वो?

हाँ। वो ठुमरी नहीं। दरअसल वो...

लोकगीत है?

लोकगीत है। उसे तो हमारे उस्ताद फ़तेह अली ख़ाँ साहब जब वो जम्मू में मुलाज़िम थे, हमारे वालिद साहब और हमारे चचा काले ख़ाँ साहब भी वहाँ मुलाज़िम थे, तब वहाँ गाते थे।

जी।

तो जैसे आ ऽऽऽ... (गाकर बताते हैं), उनके कहने का ढंग हो तो वो क्या जानें कि लोक...

जी हाँ।

क़ुदरत ने सुर का हिस्सा तो किसी में भी दिया हुआ है। अब वो चाहे सीखा हुआ हो, चाहे न। जो न सीखा हुआ हो, वो यूँ कहेगा–(गाकर बताते हैं)।

हाँ-हाँ। पहाड़ी।

अब आई हमारे उस्ताद के कान में भी आवाज़ तो बोले, अच्छी मालूम हुई। उन्होंने कहा–आऽऽऽ... (आलाप)। अब उनकी आवाज़ तो ऐसी नपी तुली हुई। जामा पहना दिया। अब वो धुन हम लोगों को याद हुई तो उसमें बहुत डूब जाते हैं।

हाँ-हाँ।

अब ये मालूम होता था कि ये पंजाब में है।

नहीं, ये आप ही लोगों का अपना हक़ है। जब आप लोग गाते हैं इस चीज़ को, बहुत ख़ूबसूरत तरीक़े से गाते हैं।

हाँ, उन्हीं बुजुर्गों के सुर की आवाज़, कलाम तो हमको मिले।

और शायद ज़मीन के भी कुछ...?

हाँ, ज़मीन का भी होगा (सम्मिलित हँसी)। यहाँ तक होता है कि हर ज़मीन, हर जगह, हर मुल्क़ के आदमी एक धुन में बसे होते हैं, मेरा जहाँ तक ख़्याल है।

सही है। ज़रूर। अच्छा ख़ाँ साहब, आपने तो बहुत ज़माना देखा है और अच्छे-अच्छे लोगों को सुना भी होगा। अब ये बताइए कि वो लोग कैसे थे और उनकी गायकी की ख़ुसूसियत क्या थी?

पुराने लोगों के क्या कहने। ऐसे लोग आज कहाँ। जब उन लोगों की याद आती है तो दिल तड़प कर रह जाता है। मैं क्या उन लोगों के मुताल्लिक़ अर्ज़ कर सकता हूँ। वो लोग फ़नी लिहाज़ से बादशाह थे। जिनको

भी सुना, अपने अंदाज़ का निराला ही पाया। सबसे बड़ी बात जो मैंने पुराने लोगों में देखी, वो ये कि अस्थाई-अंतरे को भरना और राग को राग के मुताबिक गाना। आवाज़ में मुक्तलिफ़ पायदारी, तानपुरों में आवाज़ को रखना, जो आज ख़्वाब होकर रह गई है। ख़ामख़्वाह की विलंबित और ख़ामख़्वाह के राग से वक़्त ज़ाया करना-ये सब उन लोगों में नहीं था।

हाँ।

जो भी कभी किसी महफ़िल में गाकर उठता, एक हसीन नक़्श छोड़कर उठता था।

ख़ाँ साहब, कुछ ऐसे दो-चार लोगों के अगर आप नाम भी बताएँ कि किस-किस का गाना अभी भी आपकी याद में ताज़ा है?

हाँ। हमारे परदादा उस्ताद, ख़ाँ साहब कानन ख़ाँ के बेटे उमराव ख़ाँ साहब। जैसा अच्छा ख़्याल का तरीक़ा मैंने उनसे सुना, सुब्हान अल्लाह! वो भी अपने फ़न के एक ही थे। ख़ाँ साहब नज़ीर ख़ाँ, काले नज़ीर मुरादाबादी...

जी।

वो भी लाजवाब हस्ती थे। उनके गाने में भी अजीब लुत्फ़ मैंने पाया। ख़ाँ साहब अल्लाह बंदे ख़ाँ, ख़ाँ साहब नसीरुल्ला ख़ाँ-ये भी बहुत ही अच्छे पायदां बुज़ुर्ग थे और इनकी विलंबित पर मैंने ख़ूब मज़ा लिया। ये मालूम होता था कि विलंबित है। अब जो मैं सुन रहा हूँ विलंबित के बारे में तो ये वक़्त का ज़ाया करना सुन रहा हूँ, क्योंकि एक राग ऐसा है, जिसको हमारे बुज़ुर्ग गाया करते थे कि भई, चारों चीज़ें इसमें मौजूद हैं, शाही चीज़ें। अब ऐसे कुछ राग हैं कि वो मज़ेदार नहीं हैं, मसलन-ऐसे राग में कड़ी गांधार दे दिया, चारुकेशी बना दिया उसका नाम।

चारुकेशी तो ख़ाँ साहब दक्षिण का राग है?

मुझे इससे मतलब नहीं। दक्षिण का हो, पूरब का हो, पंजाब का हो, कोई भी हो, मुझे तो राग की शुद्धता से मतलब है।

जी हाँ।

आलाप से-सा रे ग म...मुझको ये मालूम हुआ पहले उसके गाने से कि पंचम पकी राग है तो मैंने कहा, शायद कोई विलावल गाने लगा। सा रे ग ग म प...(आलाप करते हैं) एकदम सीधा, नीचे किया तो मैं हैरान हो गया- ग म प म रे सा...(आलाप)। मुझको अजीब-सा मालूम हुआ। कहो तो मैं एक मज़ाकिया बात भी कह दूँ इसमें?

ज़रूर। कह दीजिए। ज़रूर, ज़रूर कहिए।

मुझे ये मालूम हुआ कि पाँच सुर तो हैं जौनपुरी के, ठीक। ऋषभ केवल, गांधार केवल, मद्धम केवल, धैवत कोमल, निषाद कोमल-पाँच हो गए। अब पाँच जो हो गए तो ये गांधार भी है। ऐसा हो गया जो वो तीनों

से वहाँ नहीं मिलता, तो मालूम हुआ कि चारों सुरों ने इस गांधार पर केस कर दिया है। इसलिए चारुकेशी नाम रख दिया। (सम्मिलित हँसी) देखिए, वो जो हैं मद्रास के लोग, मैं उनको बुरा नहीं कहता हूँ। उनके बहुत अच्छे राग भी हैं, मगर मेरी समझ में कुछ नहीं भी आते।

जी हाँ। वो अपने-अपने मुल्क़ का अपना-अपना ढंग है, तरीक़ा है?

हाँ। तरीक़ा है, मगर जहाँ तक कोशिश हो कि राग की चारों चूलें बराबर बैठें, तब अच्छा मालूम होता है। नहीं तो-आ ऽऽ (गाकर बताते हैं)। देखिए, ये आपस में आमने-सामने के सुर हैं। जब आमने-सामने के सुर नहीं मिलेंगे किसी सुर से तो वो टेढ़ापन और ऐसा बुरा मालूम होगा और लोग उसको मुश्किल करके गाएंगे।

हाँ। संवाद होना चाहिए, न कि आपस में कुछ...?

आपस में संवाद हरेक राग में होता है, राग वादी-संवादी...

जी हाँ, बिल्कुल।

और बाकी के सुर जो होते हैं, वो बगैर वादी-संवादी के होते हैं ? नहीं, राग का धर्म एक सुर पर आकर ठहरने से मालूम होता है और एक सुर उसकी मदद के लिए मौजूद होता है, और बाकी सुर भी आपस में ऐसे ही लगे होते हैं।

हाँ, जो सुर कान को अच्छा लगे।

मसलन। मसलन देखिए, तोड़ी है-सा पा...(आलाप)।

जी।

सा रे गा...(आलाप)-ये आमने-सामने के सुर हैं।

जी हाँ। संवाद है।

संवाद है। अगर इनमें कोई एक थोड़ा गाये तो वो जो लगा है सुर एक, वो कहाँ जाएगा? उसकी निखत क्या होगी किसी से?

बेजोड़ हो जाएगा।

और मैंने अपने बुजुर्गों से भी सुना है और मेरी भी जो देखभाल है इस राग के मुताल्लिक़, जो कुछ मैं पाता हूँ वो यही कि जब तक आमने-सामने के सुर न हों, वो कुछ नहीं। कुछ ऐसे राग हैं कि अब मैं कहूँ तो शायद लोग मेरी बात का बुरा ही मान जाएँ। मैं डरते-डरते रानी साहिबा से अर्ज़ किए देता हूँ जैसे कि अब वो हमारे बुजुर्ग भी गाते आए हैं, हम भी गाते आए हैं, मगर जब मेरे ख़्याल में उसमें कुछ कमी दिखी तो मेरा दिल ख़राब मालूम हुआ।

हाँ।

मसलन, मारवा है। उसके 'सा' का संवादी ही कोई नहीं। पूरिया राग में उसके 'सा' का कोई संवाद ही नहीं है। सोणी है, वो भी वही सुरों में है। उसके 'सा' का संवाद नहीं है। किरवाणी में निखार दे दिया एक।

हाँ।

सा रे गा मा पा धा नी (गाकर बताते हैं), जौनपुरी में निखार तीवर (तीव्र) दे दी। अब तीवर (तीव्र) का संवाद कोई नहीं है। अब कहाँ जाएँ?

ये सब जो राग हैं, मेरा ख़्याल है, आपने अपने बचपन में नहीं सुने होंगे, किरवाणी वगैरह?

किरवाणी को क्या, अभी चारुकेसी और किरवाणी और जाने क्या-क्या हैं, वो तो अब सुनने में आ रहे हैं।

जी हाँ।

क्योंकि लोग यह चाहते हैं कि एक नया राग हो। अब हम लोगों को ये बताया कि ये कोई पाँच-सात-दस हमें जो राग आते हैं...

जी।

हमें ये कहा गया कि इन पर ही मेहनत करो। यही आला हैं। इन्हीं को आला करने में हम बुड्ढे हो गए और जब तक ज़िंदा रहेंगे, इन्हीं को किए जाएंगे।

मक़बूल है यह जगह, जिसमें चंदन गाती है।

क्यों? हाँ। वो सब भी है और इसमें बुज़ुर्गों ने राग वो लिए हैं दस-पाँच-पंद्रह-बीस होंगे, जो कि ख़ूबसूरती लिए हुए हैं।

हाँ।

सात ही तो सुर हैं, कहाँ तक जाएँगे? कहाँ तक क्या करेंगे?

एक हुस्न अपना...?

बस, हुस्न के वास्ते ही तो गाना है।

बिल्कुल सही, बिल्कुल। अच्छा ख़ाँ साहब, आपके ख़्याल से हमारे मुल्क के संगीत का मुस्तक़बिल क्या है? इसको ज़िंदा रखने के लिए जो कुछ किया जा रहा है, वो क्या काफ़ी है? आपका क्या ख़्याल है?

मैं अर्ज़ कर सकता हूँ, गाना भी वक़्त के साथ-साथ बदलता रहा है।

जी हाँ।

और बदला है, और बदलेगा।

ज़ाहिर है।

इस कला ने तरक्की तो बहुत की, इस क़दर कि लोग पहले नहीं सुनते थे। ये काम, सिर्फ़ गाने-बजाने के इंतज़ाम, पहले सब नहीं हुआ करते थे। आजकल ये चीज़ बहुत ही अच्छी है और हमें मालूम होता है कि हमारी क़द्र अभी हुई है, लेकिन इसके साथ-साथ ये भी कहना पड़ता है कि जो लोग हज़ारों की तादाद में हमें सुनने आते हैं...

जी।

इनमें सही मायने में कितने जानने वाले हैं, ये ज़रा मुश्किल हो जाती है। पहले वक़्तों में ये होता था कि राजा, नवाब या ताल्लुकेदार वगैरह, उनमें अस्सी फ़ीसदी लोग समझदार होते थे और बीस प्रतिशत फ़कत दिलचस्पी रखा करते थे। ख़ैर, ये तो उन लोगों की बात है, जो कलाकारी को पाला करते थे।

जी? क्या ख़ाँ साहब?

जो कला और कलाकार की पालना करते थे।

अच्छा।

ये मेरे मुँह से कुछ ऐसे लफ़्ज़ निकल जाते हैं (हँसी), लेकिन वहाँ का हरेक व्यक्ति बहुत समझदार होता था।

हाँ-हाँ।

हर राजा के यहाँ बीसियों गाने वाले-गाने वालियाँ! और सितारिए, सरोदिए, कथक मुलाज़िम होते थे उनमें। वाह-वाह लेना कोई मामूली बात न थी। वाह-वाह लेना बनिस्पत पैसा लेने के, आसान न था।

(हँसकर) हाँ-हाँ।

आज इस काम को ज़िंदा रखने के लिए बहुत कुछ हो रहा है, हुकूमत की तरफ़ से पूरी-पूरी इमदाद और सरपरस्ती है। कहने को बहुत कुछ हो रहा है, इस सरपरस्ती का अमला, जो हमारी हुकूमत की तरफ़ से मुक़र्रर है।

जी।

ये अपने फ़राएज़ को पहचान कर सरअंजाम दे तो ज़रा रोशन है, वर्ना जैसा चल रहा है ठीक है। और जहाँ तक गाने का ताल्लुक है, उसका मुस्तक़बिल मुझे ज़्यादा रोशन नज़र नहीं आता। अगर वो पेशा अख़्तियार करें तो सिवाय ट्यूशन के कुछ भी नहीं।

कौन ख़ाँ साहब?

स्कूल और कॉलेजों में जो बच्चे सीखते हैं।

अच्छा।

इससे ये होगा कि शायद मुस्तक़बिल गायक पैदा न कर सकें, यानी ये नहीं कि गाने वाले न हों, ज़रूर होंगे। ज़माना कभी फ़न से खाली नहीं रहा।

हाँ।

और सही मायने में जान मारें और दुनियावी लज़्ज़तों की क़ुर्बानी करें तो शायद हो सके, लेकिन फिर भी ये ज़रूर कहना पड़ेगा कि कोशिशें जारी हैं और जारी ही रहनी चाहिए।

तो आपका ख़्याल है कि क़द्रदानी पहले ज़्यादा थी, अब कुछ कम है?

नहीं, क़द्रदानी तो पहले से अब ज़्यादा है। अब इसका ये मतलब मेरा अर्ज़ करने का है कि गाने-बजाने की बनावट बहुत ज़्यादा हो गई है, बहुत ज़्यादा और फिर ये जो संगीत की बातें हैं, इनकी चर्चा बहुत लोग करने लगे हैं, बनिस्पत सुर के।

हाँ! हाँ! हाँ!

हैं जी?

हाँ, ये बिल्कुल ठीक है।

हाँ, तो ये सुर की जान-पहचान कब तक रहेगी? सुर की जाँच करने के लिए उन उस्तादों की ज़रूरत है, जो इसको जानते हैं और ख़ास करके जो शऊर रखते होंगे गाने वाले, वो इसको ले सकेंगे।

जी! जी! जी!

और नहीं तो क्या। सबके पास हम गाते-बजाते हैं, क्या हमारा गाना वो ले जाते हैं? बस, वो पढ़ लेंगे और पढ़कर स्कूलों में नौकर हो जाएँगे। गाना जो है वो तो बड़ी मुश्किल चीज़ है। जो करे माई का लाल, वही पाता है इसको।

मतलब ख़ाँ साहब, उतनी मेहनत और उतनी ज़िम्मेवारी, जो आप लोग करते हैं, आज वो साधना नहीं है?

बड़ी साधना। हमारे कान में बचपन से सुर की ही लोरी दी जा रही है। इस तरह गाना गाते चले आए हैं हमारे बुजुर्ग कि पैसों के लिए नहीं, बल्कि अपने गाने ही के लिए मेहनत करते हैं और जानमारी करते हैं और इतने पैसे न होने पर भी हम गाते हैं।

जी हाँ।

और आज तो ख़ुदा का फ़ज़ल है कि जगह-जगह कान्फ्रेंसें होती हैं। अब हमारा जो किया हुआ है, वो आगे बढ़ रहा है, मगर हमने गाने को किसी तरह छोड़ा नहीं।

जी हाँ।

और क्यूँकि हम पढ़ने से गाने को ज़्यादा तरजीह देते हैं।

हाँ।

सुर की चल रही है बात तो 'सा' की चार श्रुतियाँ कहते हैं और 'पा' की चार श्रुतियाँ कहते हैं, मुझे एक तो श्रुति लगा कर बतावें?

(हँसते हुए) बिल्कुल ठीक !

मुझे मालूम होता है कि 'सा' की श्रुति लगाएँगे तो बेसुरे हो जाएँगे और पंचम की श्रुति लगाएँगे तो बेसुरे हो जाएँगे। ज़रा मैं लगा कर बताऊँ?

हाँ ! ज़रूर।

(आलाप आरंभ) ठीक है न, भंवरा बन गया? (सम्मिलित हँसी) ये श्रुति यूँ ही नहीं लगती,श्रुति लगने का भी कोई कारण होता है।

ज़रूर-ज़रूर।

जब तक कि ख़ुदा की याद में मसरूफ़ न हो जाएँ। आदमी वो श्रुति का लगना–तरकीब–उस्तादों की बताई हो तो उसे लगा सकता है, जैसे श्री राग में गांधार अब तो उतरा ही लगता है (आलाप), मुसीबत। गांधार भी पूरा नहीं है। (आलाप), ये भी नहीं है। (आलाप) न इस तरफ़ गांधार कोमल हुआ, न उस तरफ़ गांधार तीव्र हुआ। ये देखने की चीज़ है कि गांधार कैसे लगता है? मगर ये बहुत जानमारी के बाद हमें मालूम होगा।

बहुत बारीक बातें हैं ये। अच्छा, माली हालत गाने वालों की आपके समय में कैसी थी? अच्छी थी?

अजी गाने वालों की बात आप न पूछिए कि माली हालत कैसी है, क्योंकि हम लोग राजाओं की तरह तो ख़र्च करते हैं। पाँच सौ आ गया, तो तीसरे दिन में पाँच सौ गायब। फिर कैसे गुज़ारते हैं दिनों को, वो हमीं जानते हैं और सब गवैयों की, जो काम करने वाले हैं, उनकी यही हालत होती है। जमा करने वाले कुछ और लोग होते हैं, ख़र्च करने वाले कुछ और लोग होते हैं।

ख़ाँ साहब, आप लोग भी कोई राजे-महाराजे या नवाब से कम तो नहीं हैं। आप लोगों की भी छोटी-मोटी रियासतें होती हैं, वहाँ भी मुशायरे होते हैं, शागिर्द होते हैं, कान के कच्चे होते हैं, इधर-उधर की बातें लगाते हैं और...(हँसी)?

(हँसते हुए) सही है।

कोई कभी किसी को चढ़ाते हैं, किसी को उतारते हैं, मगर...?

ये, ये अच्छी बात नहीं है।

पर करते हैं न लोग?

करते हैं।

करते हैं न लोग?

लोग करते हैं और ख़ुद भी बाज लोग ऐसे हैं कि अपने समय की ख़ातिर लोगों को चढ़ा लेते हैं।

हाँ। आप लोगों की भी जो आदतें हैं, वो भी बिल्कुल नवाब या महाराजाओं की तरह होती हैं। आप लोग भी जैसे एक गद्दी पर बैठे हुए हैं?

हाँ।

अर्ज़ भी वैसे ही करते हैं। वैसे ही शागिर्द, ख़िदमत सब कुछ। आप लोग भी किसी रियासत से कुछ कम नहीं हैं। आप लोग तो बादशाह हैं अपनी जगह?

बस उन लोगों की मेहरबानी है, जो क़द्र फरमाते हैं। वैसे हम तो गवैये हैं (सम्मिलित हँसी)।

अच्छा ख़ाँ साहब, आप ये बताइए कि आपने अपने बुज़ुर्गों से तो ज़रूर सीखा है और उसका रंग भी आपके गले में ज़रूर है, पर आपने अपनी गायकी में उनसे फ़र्क तो नहीं कह सकती हूँ, पर उसमें और भी रंग भरा है?

वो वजह यह है कि कुछ तो उन बुज़ुर्गों को देखा लाजवाब और कुछ अपने ख़्याल में जो आयी अच्छी बात, तो चुन ली। इससे आप लोग मेहरबान सुनते हैं तो ख़ुश होते हैं।

मतलब, आपकी गायकी में आपका तीख़ापन तो है ही, मेरा ख़्याल यह है कि कुछ शख़्सियत भी शामिल है?

हाँ, वही शख़्सियत।

आपकी अपनी शख़्सियत तो उसमें ज़रूर शामिल होगी?

वो यही शख़्सियत है कि मैं देखकर गाता हूँ सुरों को। उनका भी देखना ही था, मेरा भी देखना ही है। इसमें मैंने ज़रा कोशिश और भी की, यह नहीं कि सुर उनके पीले रंग के हों तो मेरे काले रंग के। (सम्मिलित हँसी)

नहीं-नहीं, ये बात नहीं, पर उसको आपने और ख़ूबसूरत बनाया, कुछ और भी रंग भरा। सुर तो वो भी देखते होंगे?

वही तो मैंने अर्ज़ किया पहले कि वो भी सुर देखते थे, मैं भी सुर ही देखता हूँ, बाकी मेरी जो जहाँ तक चाह-चाहत थी, ये भी अर्ज़ कर दूँ।

हाँ, ज़माने के मुताबिक?

ज़माने के मुताबिक, तो मैं चाहता हूँ कि कुछ अलग हो जाए तो आप लोग क़द्रदान हैं, हमारी उस बात को आप लोग पसंद करते हैं।

मतलब ये कि आप फिर भी देखते हैं, गाना भी देखते हैं? (सम्मिलित हँसी)

तो गवैया तो इसी बात को देखता है कि ज़माना और सुर कैसे हैं।

बिल्कुल, बिल्कुल सही है।

अब मैं आपको सौ बरस पहले की बात करूँ कि उनकी गायकी क्या थी और आज गायकी क्या है? वो ज़माने के मुताबिक तब थी और ज़माने के मुताबिक आज ये है।

अच्छा ख़ाँ साहब, आपने तो अपनी ज़िंदगी सुर की ही साधना में गुज़ारी है और आपको ऐसे तजुर्बात ज़रूर हुए होंगे, जो एक सुर के पुजारी को होने चाहिए। तो क्या आप उन पर कुछ रोशनी डालेंगे?

सुर का तजुर्बा? सुर का तजुर्बा आप फ़रमाती हैं?

जी हाँ–जी हाँ, ख़ाँ साहब।

तो पहले तो ऐसे लोग गुज़रे हैं, जिनका जवाब ही नहीं है।

जी हाँ, मतलब कुछ तजुर्बात इसमें हुए होंगे, जिनका कि आपकी ज़िंदगी पर असर पड़ा हो?

रानी साहिबा, ये सवाल मेरे लिए आज पहला सवाल है, जिसका जवाब आज पहली दफ़ा दे रहा हूँ। ये बड़ा प्यारा सवाल आपने किया। सुर-साधना के तजुर्बात आपसे क्या अर्ज़ करूँ कि सुर की आँखों से मैंने क्या-क्या देखा है! समझ में नहीं आता कि किस तरह बयान करूँ? एक शेर अर्ज़ कर देता हूँ ये, जो मेरा नहीं है, लेकिन मुझे बेहद पसंद है।

जी।

''ऐ दोस्त मोहब्बत है वो नाज़ुक-सी हकीकत, महसूस जिसे करते हैं समझा नहीं करते।'' यहाँ मोहब्बत से मुराद सुर है। सुर की हकीकत भी यही है। सच्चे सुर के लगने से क्या होता है, फ़कत महसूस किया जा सकता है, समझाया नहीं जा सकता। बचपन में जब मेरे वालिद गाते, मुझे अजीब लुत्फ़ आता। उस वक़्त मेरी उम्र ही क्या थी, जो उनको समझ सकता, लेकिन वो कुछ अजीब कैफ़ियत थी, जो उस वक़्त साथ थी। सब चीज़ ख़ुद करने लगे और करते-करते इसमें डूब गए तो उम्र भी साथ ही साथ बढ़ती गई। गाने-बजाने का शऊर होने लगा, तो मन जवां हो गया। कुछ और ही कैफ़ियत थी, गाने को जादू कहा गया और वाकई ये जादू ही है।

जी।

जब मैंने रियाज़ शुरू किया तो लोग कहते थे कि ये लड़का पागल हो जाएगा। इतना रियाज़ तो पागल करते हैं।

जी।

बस, मैंने किसी की बात न सुनी और अपनी धुन में लगा रहा। कुछ अरसा के बाद लोग जो ये कहते थे पागल हो जाएगा, मेरे पीछे दीवाने हुए फिरते थे, और मुझसे यह महसूस नहीं होता कि ये लोग पागल हो गए हैं। ख़ुद अपना काम-काज छोड़कर मेरे पास हर वक़्त बैठे रहते हैं। एक दफ़ा का ज़िक्र है कि मैं अफ़गानिस्तान गया, शाह अफ़गानिस्तान ने बुलवाया था। शाम के चार बजे के करीब मैंने उनकी फरमाइश पर भीमपलासी शुरू किया। ये गाना महल के एक बड़े ख़ुशनुमा बाग़ में हो रहा था।

ये क़ाबुल में?

हाँ, और उस बगीचे में पालतू परिंदे भी रखे हुए थे। एक मोर ने गाना शुरू होते ही अपने पर फैला दिए और नाचने लगा। बादशाह भी देखते रहे और तमाम उनके दरबारी भी और हम भी। जब तक मैं गाता रहा, वो मोर भी नाचता रहा, मैं एक घंटे के करीब गाता रहा और मोर नाचता रहा। जब मैंने गाना बंद किया तो मोर ने भी परों को समेट लिया। ये देखकर हम भी हैरान हुए और बादशाह भी, और बड़े ख़ुश हुए। जब जानवर पर इसका असर होता है तो इन्सानों पर क्यों नहीं?

एक और तजुर्बे की बात है। सुर से प्यार करने वाला इन्सान बड़ी ख़ूबियों का हासिल होता है। मतलब, दिल को दुःखाने से गुरेज़ करेगा, ज़ालिम न होगा, ख़ुदापरस्त होगा, बहुत ही इंतसार होगा। सुरमंडल का मैंने ही हिन्दुस्तान में तारूफ़ कराया है। इसके मिल जाने का अजीब-अजीब इत्तेफ़ाक है। बस, ख़ुदा बंद आलमे की क़ुदरतों का मुज़ाहिरा होता है। सुर के नशे ने हर नशे को मात कर दिया है, बस यही सबब सचमुच दुनिया से अलग कर देता है और अपनी दुनिया बसा लेता है।

अच्छा ख़ाँ साहब, मुझे कुछ आपकी बंदिशों को सुनने का हर्ष हासिल हुआ है। बहुत ही ख़ूब हैं। क्या कुछ अपनी बंदिशें आप सुनाएंगे? यदि तकलीफ़ न हो तो...?

जैसा आप फ़रमाएँ।

कुछ ख़्याल भी और ठुमरी भी-दोनों। दोनों सुनना हैं?

अच्छी बात है। अच्छा, पहले मैं ख़्याल सुनाता हूँ।

हाँ-हाँ, ज़रूर।

(संगीत आरंभ) मसलन, कम बोल पर एक ख़्याल मैंने बनाया है।

अच्छा। सब रंग, ये जो चीज़ें हैं, वो आप ही की हैं?

हाँ, ये मैं ही ग़रीब हूँ सब रंग का (सम्मिलित हँसी)। (संगीत गायन आरम्भ) अब तो यह है कि मैं भी बूढ़ा हो रहा हूँ और कुछ बीमार भी हूँ। अब मेरे से कुछ अदायगी पूरी नहीं होती। मैंने ख़्याल ऐसे कई बनाए हैं और अपनी ठुमरी भी बनाई है-(संगीत) ''अब न मानत श्याम''। देखिए, इस ठुमरी के गाने का अंदाज़ वही

होता है। मैं ख़्याल गाने वाला हूँ, अब इसको ठुमरी गाऊँगा तो उसमें बेसुरा तो नहीं लूँगा और ऐसा भी नहीं करूँगा कि गिर जाए संगीत, जैसे वो बिगाड़ से बिगाड़ने वाले भी हैं, उनको मैं बुरा नहीं कह सकता और अच्छे ही लोग हैं सभी। भई, आपने कहा तो मैं यह अर्ज़ कर रहा हूँ-(संगीत) अब न..., ख़ूबसूरती के लिए मैं...(गाकर बताते हैं)। अब लोग इस तरह भी गाते हैं। उनको सुनते तो सभी हैं, अच्छे-बुरे सब कोई सुनते हैं। मैं किसी का नाम नहीं लेता, मगर मेरे ख़्याल से "अब नहीं मानत श्याम" (गाकर बताते हैं)। सखी कह रही है कि "पैयाँ पड़त मैं तो विनती करत हारी", अब पैयाँ ऐसे तो नहीं पड़ रही कि पहले सैंया को ईंट मार दूँ, फिर मैं पाँव पड़ जाऊँ। (संगीत आरम्भ) मैं उसको देखता हूँ कि जैसा बोल है और जैसा मैं अदा कर सकता हूँ जहाँ तक। मैं सारे ज़माने से अच्छा नहीं हूँ, मैं कोशिश करना चाहता हूँ , सुर की आदायगी किस तरह होती है, वो बयान करता हूँ।

एक इसमें बेचारगी की मांग थी?

हाँ, जैसे लफ़्ज़, वो कहने में...

जी हाँ, आ जाता है।

(डाँटकर) आप क्या कर रहे हैं ? (नम्रता से) आप क्या कर रहे हैं ? यही मानना है, एक ज़ोर से गा दिया, एक आहिस्ता से गा दिया। अब इसको गाने वाले को देखना चाहिए कि किस तरह अदा हो, बस। इतना ही मुझे आता है और क्या? मैं सबसे बढ़कर तो हूँ नहीं।

आपको बहुत तकलीफ़ दी। अब और आपको तकलीफ़ नहीं दूँगी।

अच्छा! आदाब अर्ज़ है।

आदाब अर्ज़ है।

साभार : संगीत नाटक अकादेमी अभिलेखागार में संरक्षित रेकॉर्डिंग से प्रस्तुत। तिथि : 29.12.1968, समयावधि : लगभग 50 मिनट, टेप-संख्या : 1-152।

उस्ताद बड़े गुलाम अली ख़ाँ : [1901-1968] कसूर (अब पाकिस्तान) में जन्में उस्ताद बड़े गुलाम अली ख़ाँ भारतीय शास्त्रीय संगीत के एक दिग्गज गायक के रूप में स्थापित हैं। बचपन से ही आपको ख्याल गायिकी और सारंगी की शिक्षा आपके चाचा काले ख़ाँ ने दी, जो स्वतंत्रता पूर्व कश्मीर दरबार में बतौर कलाकार काम करते थे। काले ख़ाँ की मृत्यु के बाद आपके पिता अली बख़्श कसूरवाले ने पटियाला गायिकी की परम्परा में आपकी संगीत की तालीम को आगे बढ़ाया। ख्याल गायक के रूप में प्रसिद्ध होने से पहले आप एक दक्ष सारंगी वादक के रूप में भी अपनी पहचान बना चुके थे। शास्त्रीय गायन में ठुमरी को जन-जन के बीच लोकप्रिय बनाने में उस्ताद बड़े गुलाम अली ख़ाँ का विशेष योगदान माना जाता है। के. आसिफ की फ़िल्म 'मुगल-ए-आज़म' के लिए तानसेन पर फ़िल्माये गये गीत 'प्रेम जोगन बन के' बहुत मशहूर हुआ, जिसकी सिनेमा के अलावा संगीत जगत में भी खूब सराहना हुई। उस्ताद की कुछ मशहूर ठुमरियाँ- 'तोरी तिरछी नजरिया के बान', 'का करूँ सजनी आये न बालम', 'जमुना

के तीर' और 'याद पिया की आये' आज भी अमर हैं। आपको संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार-1962 और पद्म भूषण-1961 में प्रदान किया गया।

नैना देवी : [1920-1993] ठुमरी, दादरा और ग़ज़ल गायिकी में शिखर पर रहीं नैना देवी का सम्बन्ध रामपुर सहसवान और बनारस घराने से रहा है। आपने कई गुरुओं से तालीम पाई, जिसमें उस्ताद मुश्ताक हुसैन ख़ाँ, रसूलनबाई और गिरिजा शंकर चक्रवर्ती प्रमुख हैं। नैना देवी का सबसे बड़ा योगदान यह भी माना जाता है कि उन्होंने प्रसार भारती, दूरदर्शन के लिए भारतीय संगीत के ढ़ेरों नामचीन विभूतियों का साक्षात्कार और उनकी कला के प्रदर्शन का डाक्यूमेण्टेशन करते हुए संरक्षण किया, जो आज भी प्रसार भारती के अभिलेखागार में संरक्षित है और समय-समय पर दूरदर्शन द्वारा प्रसारित किया जाता है। आपने बहुत सारे शिष्य-शिष्याओं को संगीत की उत्कृष्ट तालीम दी, जिनमें शिप्रा बोस, मधुमिता रे, शुभा मुद्गल और विद्या राव आदि के नाम प्रमुख हैं।

जी लगा जहाँ गाने का, फिर गाना ही गाना...

बड़ी मोतीबाई से **नैना देवी** की बातचीत

हालांकि मैं बता नहीं सकती हूँ, इतना अच्छा गाई हैं आप, पता नहीं कैसे आप ये आवाज़ निकालती हैं, और इस उम्र में ख़ास करके और वो भी बिल्कुल आसानी से? बहुत सुरीला गाया है। बहुत-बहुत-बहुत अच्छा। बड़ी मोतीबाई जी ये बताइए कि किस उम्र में आपने तालीम शुरू की?

छः-साढ़े छः-सात बरस में।

आपने पहले किससे तालीम ली?

सिया जी मिश्र से।

सिया जी मिश्र से?

हाँ। पहले उन्हीं से हमने शुरू किया था।

और कितने दिन तक सीखीं?

सात-आठ बरस, ऐसे ही कुछ हुआ होगा।

और मौजुद्दीन ख़ान साहब से आपने तालीम कब शुरू की? उनसे भी तो आपने तालीम ली है?

हाँ, वो शामली सिया जी के यहाँ आए। तो फिर गाना शुरू हो गया मौजुद्दीन ख़ान साहब से।

हाँ!

उनसे कोई आठ या सात बरस सीखा... उसके बाद मौजुद्दीन ख़ान साहब गुज़र गए।

कितने बरस आपने उनसे तालीम हासिल की?

छः-सात बरस, इसी तरह...

अच्छा।

बीच-बीच में वो भी बीमार पड़ते गए।

अच्छा।

और हमारी भी तबियत ख़राब होती गई, तो थोड़ा-थोड़ा सीखना होता रहा। इसके बाद बीमार पड़ते-पड़ते ख़ान साहब का शरीर छूट गया। तब मिठाई लाल जी बीनकारिए...

अच्छा, बनारस के?

बनारस के कथक थे, तब इनसे सीखने लगी।

अच्छा।

कोई सात-आठ-नौ साल गाते-गाते उनका भी स्वर्गवास हो गया, हमारे पिता का भी स्वर्गवास हो गया। सब छोड़ गए।

अच्छा, आप रियाज़ कितने घंटे करती थीं?

डेढ़-डेढ़ घंटे, दो-दो घंटे ठहर-ठहर के रियाज़ करते जाते थे, दिन में, रात में, सवेरे। इस प्रकार से रियाज़ करते थे।

अच्छा, ज़रा मौजुद्दीन ख़ान साहब के बारे में कुछ बताइए? उनके गाने के बारे में?

उनका गाना तो ना मालूम परमात्मा ने क्या किया था कि एक छोटी से छोटी चीज़ शुरू कर देते तो मालूम होता लोगों को कि ऐसी चीज़ उन्होंने कभी सुनी ही नहीं।

वाह! वाह!

और किसी को होश नहीं रहता था, पागल की तरह दौड़े चले आते थे। लोग पागल बने फिरते थे कि किसी तरह हम सुन लें भीड़ लग जाती थी।

वाह ! वाह ! ओ। हो। हो। हो।

उनकी अजब बात थी। परमात्मा जाने कौन-सी चीज़ कहते थे गले से कि लोगों को होश नहीं रहता था कि रात हो गई है या दिन। क्या लोग उठेंगे-किसी को होश रहिबे नहीं करे। हाथ में बालाई का पुरबा लेके लोगों का गिर जाए और पता नहीं रहता था कि हमारे हाथ का बालाई पुरबा नहीं है।

वाह! वाह! वाह!

ये होता था।

तासीर ख़ुदा ने दी थी?

तासीर दी थी। अब भगवान जिसको दे दे। ऐसी तासीर थी कि कुछ कहने को नहीं।

क़ुदरत की देन थी। आपकी आवाज़ में भी वही तासीर है। आपकी आवाज़ भी बिल्कुल ईश्वर की देन है। अब देखिए, ख़ासकर कि इस उम्र में आप कैसे-कैसे सुर लगाती हैं! अब भी आप रियाज़ करती हैं?

अब यूँ है कि तबियत अच्छी रही तो बैठे; अब रियाज़ तो होता ही नहीं, कुछ गाने को मिल जाए, उसी में रियाज़ हो गया।

बड़ी मोतीबाई

ऐसे रोज़-रोज़ नहीं हो पाता?

रोज़ाना कुछ नहीं हमारा, बैठे रहते हैं...(रुककर) अकेलापन न करे किसी को हो जाए। पड़े रहते हैं अकेले.... क्या करें?

अच्छा, आपने तो बहुत ज़माना देखा?

बहुत।

आपके ज़माने में, आपके बचपन में और या आपकी जवानी में कौन-कौन से ऐसे गवैये थे कि जिनसे आप बहुत मुतास्सिर हुई हैं, जिनका गाना आपको बहुत पसंद था? गानेवालियाँ?

(सोचते हुए) गाने वालियाँ थीं।

कौन-कौन?

बड़ी हुस्नाबाई और विद्याधरी बाई।

अच्छा!

और राजेश्वरी बाई, ये भी सिया जी की शागिर्द थीं।

राजेश्वरी बाई?

हाँ, और ये भी नानियों में से थीं। राजेश्वरी बाई, हुस्नाबाई की क्या बात थी। बड़ी बैखरी बाई...ये भी गाती थीं। एक बड़ी मैना थीं।

अच्छा!

बुढ़ापे में वह आवाज़ लगावें कि आदमी का ठिकाना जी में न रहे। उनका गाना मैंने सुना था। ये सब लोग थीं।

और बनारस का वो बुढ़वा मंगल जो त्यौहार है, उसके बारे में कुछ कहिए, आजकल तो देखने को नहीं मिलता?

वो तो एक मेला सा लगता था। वो मेला ऐसा लगता था कि अपनी-अपनी एक-एक नाव सजवाते थे।

अच्छा, रईस लोग, राजे लोग?

रईस लोग।

राजे लोग?

हाँ। सब रईस अलग-अलग चाल की ख़ूबसूरती चाहते थे, सजवाते थे।

नाव को?

नाव को। और उस नाव में जिसकी तबियत है, दो गाने वाली, चार गाने वाली, तीन गाने वाली...

अच्छा। अच्छा। अच्छा।

फिर क्या बात है! जोड़ की तोड़, कोई उधर गा रहा है तो कोई इधर से आवाज़...

वाह! वाह!

हाँ!

गंगा जी के ऊपर?

गंगा जी के ऊपर। चल रहा है।

शाम को?

नहीं, सवेरे से रात भर रहते थे।

अच्छा। अच्छा। अच्छा।

तीन रोज़ रहे, फिर शायद तीसरे रोज़ कहे कि उस वक़्त...

अच्छा, चैती का हमने सुना कि चैती गाते थे लोग?

चैती के ही दिन में होता था ये।

अच्छा। बुढ़वा मंगल चैत के दिनों में, और चैती गाई जाती थी, सब चीज़ें गाई जाती थीं—ग़ज़ल है, ठुमरी है?

कोई आवाज़ इधर से लड़ती तो किसी की उधर से लड़ती। ख़ूब मुकाबला होता था। महाराज बनारस की नाव सजी हुई है। हम लोगों को एक नाव मिलती थी, राजा बनारस की तरफ़ से हमारी बहन को। वहीं शरीर त्याग किया था उन्होंने।

अच्छा।

हम लोग उसी पर दिन-रात रहते, तमाशा देखते। एक नावपोशी में खाना बन रहा है, बिक भी रहा है। लोग ले रहे हैं।
अ हा हा हा (हँसी की आवाज़)

बड़ा लुत्फ़ आता होगा? बहुत वक़्त था?

और पैसा था। लोग अपनी-अपनी नाव से कि हमारी नाव भारी पड़ेगी। दूसरा कहे हमारी भारी पड़ेगी। बाद में पता चलता था कि किसकी नाव अच्छी रही।

हाँ-हाँ, और आप तो इतने अच्छे-अच्छे जलसों में गायी हैं?
हाँ।

कोई ख़ास ऐसा जलसा जिसे कभी आप अपने दिल-दिमाग़ से भुला नहीं सकीं कि बहुत अच्छा गायीं। वैसे तो हज़ारों होंगे, मगर एक-दो का आप ज़रा-सा बयान करें?

अब याद नहीं, इतना वक़्त गुज़र गया। बाजी जगह ऐसे गाने हुए...

सबसे अच्छा प्रोग्राम जो हुआ?

कहीं-कहीं ऐसा हो गया, जी लगा वहाँ गाने का, फिर तो गाना ही गाना, क्योंकि हमारे साथ में बजाने वाले ऐसे थे।

कौन-कौन थे, जो संगत करते थे आपके साथ?

हमारे सुर सहाय जी।

अच्छा।

पन्ना लाल जी।

अच्छा। हाँ, ये लोग ऐसे थे कि खड़े के खड़े रह जाएँ, बैठे के बैठे रह जाएँ। अब आपको और तकलीफ़ नहीं दूंगी। आपका मैं किस तरह शुक्रिया अदा करूँ, ये समझ में नहीं आता?
हम किस तरह से आपका शुक्रिया अदा करें, हमारे मुँह में इतनी भी ज़बान नहीं है।

साभार : संगीत नाटक अकादेमी अभिलेखागार में संरक्षित रेकॉर्डिंग से प्रस्तुत। तिथि : 17.5.1969, समयावधि : लगभग 9 मिनट, टेप-संख्या : 397।

बड़ी मोतीबाई : [1885-1977] बनारस घराने की प्रसिद्ध ठुमरी गायिका, जिन्हें टप्पा और अन्य उप-शास्त्रीय प्रकारों में भी महारत हासिल थी। आपने संगीत की तालीम सबसे पहले सियाजी महाराज और मिठाईलाल जी से ली और बाद में उस्ताद मौजुद्दीन ख़ाँ साहब की शिष्या बनीं। उन्हीं की परम्परा में बोल बनाव की ठुमरी में आपको सिद्धहस्तता प्राप्त हुई। मूलतः बाईयों की परम्परा से आने वाली बड़ी मोतीबाई के खानदान से राजेश्वरीबाई भी सम्बन्धित थीं, जिनका उनसे पहले बहुत नाम था। बड़ी मोतीबाई की बहनें भी गायिकाएँ थीं, जिनके नाम पुतलीबाई, इन्दुमती और कमला हैं।

नैना देवी : [1920-1993] ठुमरी दादरा और ग़ज़ल गायिकी में शिखर पर रहीं नैना देवी का सम्बन्ध रामपुर सहसवान और बनारस घराने से रहा है। आपने कई गुरूओं से तालीम पाई, जिसमें उस्ताद मुश्ताक हुसैन ख़ाँ, रसूलनबाई और गिरिजाशंकर चक्रवर्ती प्रमुख हैं। नैना देवी का सबसे बड़ा योगदान यह भी माना जाता है कि उन्होंने प्रसार भारती, दूरदर्शन के लिए भारतीय संगीत के ढ़ेरों नामचीन विभूतियों का साक्षात्कार और उनकी कला के प्रदर्शन का डाक्यूमेण्टेशन करते हुए संरक्षण किया, जो आज भी प्रसार भारती के अभिलेखागार में संरक्षित है और समय-समय पर दूरदर्शन द्वारा प्रसारित किया जाता है। आपने बहुत सारे शिष्य-शिष्याओं को संगीत की उत्कृष्ट तालीम दी, जिनमें शिप्रा बोस, मधुमिता रे, शुभा मुद्गल और विद्या राव आदि के नाम प्रमुख हैं।

तबले में सात बोल होते हैं...

उस्ताद अमीर हुसैन ख़ाँ से आचार्य कैलाशचन्द्र देव बृहस्पति की बातचीत

आदाब अर्ज़ है, अमीर हुसैन ख़ाँ साहब।

जी, आदाब अर्ज़ है।

यह बड़ी ख़ुशकिस्मती की बात है कि इस वक़्त हम लोग यहाँ इकट्ठे हैं और आप एक गुणी आदमी हैं, अच्छे बुज़ुर्गों की औलाद हैं।

आप ऐसा समझते हैं, मैं तो किसी काबिल भी नहीं हूँ।

ख़ैर, वह ठीक है, आप तो यही कहेंगे और बुज़ुर्गों के सामने तो हम सभी बच्चे हैं।

अल्लाह आपको ताउम्र सलामत रखें।

तो चाहूँगा ये कि दो-चार बातें मैं आपसे मालूम करूँ।

जी ज़रूर।

आपने कितनी उम्र से तबला बजाना शुरू किया?

मेरी कोई 10 साल की उम्र थी, जबसे शुरू किया।

जी, तो पहले-पहल किन साहब ने आपको तबले पर हाथ रखाया?

पहली इब्तिदा मेरे वालिद ने मुझे बताया।

तो आपके वालिद साहब का इस्मे-शरीफ़?

अहमद बख़्श नाम था।

अहमद बख़्श साहब, अच्छा।

वो निज़ाम स्टेट में मुलाज़िम थे।

जी, जो हैदराबाद में है?

जी हाँ।

उन्होंने शुरू कराया आपको, जब दस साल की उम्र थी आपकी। तो आख़िर कैसे शुरू कराया, कुछ बैठने का तरीक़ा बताया?

सभी चीज़ें बताईं उन्होंने कि भई इस तरीक़े से बैठो। इस तरीक़े से हाथ रखो तबले पर!

जी!

जिस तरीक़े से उन्होंने बतलाया, मैंने उस तरीक़े को अपनाया।

तो कुछ यह भी बताया होगा कि भई कैसे हाथ न रखो या क्या-क्या ऐब हैं? वो ऐब भी बताए कि भई इस तरीक़े से करोगे तो ये ऐब बेशुमार होगा?

बेशुमार होंगे।

मसलन?

मसलन यह कि हाथ फैलने नहीं चाहिए।

जी, दुरुस्त है।

हाथ का गुच्छा अंगुलियाँ बनना चाहिए और उँगली एकदम सीधी नहीं होनी चाहिए, थोड़ा उँगलियों में खम होना चाहिए, लेकिन झीरी नहीं पड़ना चाहिए।

उँगलियों में खम होना चाहिए, लेकिन झीरी नहीं पड़ना चाहिए। दुरुस्त है। अच्छा तो उन्होंने आपको तबला शुरू कराया। कैसे शुरू कराया? शुरू में काहे की तालीम दी?

पहले मुझे उन्होंने यह बताया कि भई इसके सात बोल हैं, पहले इन बोलों को याद करो।

दुरुस्त है! तबले के सात बोल हैं?

जी हाँ।

अच्छा।

धा, ता, का, ना, गा, टा, रा।

गोया, ये सात बोल हैं?

सात बोल। गत, टुकड़ा, परन, कायदा–ये सब चीज़ें इन्हीं बोलों से बनी हैं।

अच्छा, यानी चाहे गत हो, कायदा हो, पेशकार हो; जब ये बोल होंगे, इन्हीं से मुरक्कब बोल बनेंगे; तब बात बनेगी?

जी हाँ।

और इससे बाहर का बोल तबले में नहीं होना चाहिए?

नहीं होना चाहिए।

अमीर हुसैन ख़ाँ

दुरुस्त है। तो गोया वह सात बोल थे। कौन-से फिर फ़रमा दीजिए।

धा, ता, का, ना, गा, टा, रा।

जी, दुरुस्त है।

इसमें दो बोल अचल हैं।

दुरुस्त है।

ट और र, इनसे कोई अक्षर नहीं बनता।

अच्छा उनसे, वे शुरू में नहीं रहते?

जी हाँ, वह इस तरह से आते हैं कि किट, धिट। राग भी इसी तरह से आते हैं।

दुरुस्त है, दुरुस्त है।

तिट, धिट–इनसे कोई बोल नहीं बनते।

जैसे रति नहीं कह सकते हम। तिर कह सकते हैं, किट कह सकते हैं, टकि नहीं कह सकते हैं। बिल्कुल ठीक ! जी हाँ, ये मतलब है आपका, दुरुस्त है तो बहरहाल, बिस्मिल्लाह कह कर शुरू हो गए आप। तो शुरू में क़ायदा बताया था या कुछ और...?

शुरू में कायदा ही शुरू कराया, जैसे बच्चों को शुरू कराते हैं, क्योंकि कायदे से हाथ बनता है।

दुरुस्त है।

इस वजह से कायदा ही बताया जाता है।

दुरुस्त है। आपको कौन-सा क़ायदा शुरू कराया था?

मुझे शुरू में, इत्तदा में धा धा तिट, धा धा ती ना।

अच्छा, अच्छा!

ता ता तिट, धा धा धी ना थे। इसके बाद फिर धा तिट, धा तिट, धा धा तिट, धागे धिना धिन ये कायदा है।

दुरुस्त है।

इसके बाद फिर तिरकिट के बोल दिए गए हैं।

दुरुस्त है, दुरुस्त है।

धा तिरकिट तिक, धा तिरकिट तिक, धा तिरकिट तिक, धीना किट तक, ता तिरकिट तक, ता तिरकिट तक, धा तिरकिट तक, धीना किट तक।

दुरुस्त है।

इस सिलसिले में उन्होंने बताया।

अच्छा, वैसे आपको हिसाब की बात कितने दिनों बाद समझाई उन्होंने?

पहले रटंत होती है। पहले बच्चे को बँधी हुई बात बताई जाती है, फिर जैसा शऊर हो, हिसाब हो।

वो बात आपको कितने दिनों बाद सिखलाई?

वह मुझे मामू से मिली। मुनीर ख़ाँ साहब से।

मुनीर ख़ाँ साहब से?

जी हाँ!

इनका वतन कहाँ था?

यह था ज़िला मेरठ।

अच्छा, मुनीर ख़ाँ साहब, ज़िला मेरठ वाले! अच्छा, वो मामू थे आपके?

मेरे मामू थे सगे।

वे तो बड़े अच्छे उस्ताद थे। उनके शागिर्दों में कुछ लोग अच्छा बजा रहे हैं आजकल?

बहुत अच्छे-अच्छे शागिर्द बनाए अहमद जान थिरकवा!

अच्छा, ये मुनीर ख़ाँ साहब के शागिर्द थे?

जी हाँ, अहमद जान। वज़ीर ख़ाँ थे पानीपत के, बहुत अच्छे। अभी हाल में इंतक़ाल हुआ है शम्सुद्दीन ख़ाँ साहब का।

जी।

वो भी उन्हीं के शागिर्द थे और बहुत से अच्छे-अच्छे लोगों ने बजाया उनकी शागिर्दी में।

तो यह हिसाब का काम, ये सब आपको मुनीर ख़ाँ साहब ने बताया?

मुनीर ख़ाँ साहब ने, दुरुस्त है। अच्छे गुणी लोग थे।

वाह! तो उसके बाद ख़ाँ साहब ये बताइए कि अपने ख़ाँदान का ताल्लुक आपको किससे बताया गया? कौन-से बुज़ुर्ग से आपके ख़ाँदान का ताल्लुक है?

हमारे ख़ाँदान का ताल्लुक मियाँ हाजी साहब से है।

अच्छा, हाजी साहब से! हाजी साहब (विलायत अली ख़ाँ साहब) तो बड़े गुणी, बड़े मशहूर बुज़ुर्ग हुए हैं?

उनके शागिर्द थे मियाँ बोली बक्श और बोली बक्श ख़ाँ साहब के शागिर्द थे मेरे मामू मुनीर ख़ाँ साहब।

दुरुस्त है। अच्छा ख़ाँ साहब, आपने अपने ख़ाँदान के अलावा और अच्छे गुणियों को सुना होगा?

जी हाँ!

और जिनकी आपने बड़ी इज़्ज़त की होगी, जो बड़े-बड़े अच्छे लोग रहे होंगे?

जी हाँ, ज़रूर।

उनमें किन बुज़ुर्गों के नाम लेंगे आप?

उनमें नत्थू ख़ाँ साहब...

दिल्ली वाले?

दिल्ली वाले, और एक भलस्वे के थे, अज़ीम बक्श ख़ाँ साहब।

जी।

बहुत अच्छे बजायक थे। और एक मुरादाबाद के थे, फ़ैय्याज़ ख़ाँ साहब।

अच्छा।

बड़े अच्छे बजायक थे।

अच्छा-अच्छा।

ख़ाँ साहब शेर ख़ाँ।

दुरुस्त है। ये हैदराबाद में भी रहे थे शेर ख़ाँ साहब?

हाँ, हैदराबाद भी आए हैं ये।

अच्छा।

और एक ख़ाँ साहब हुसैन बक्श थे हैदराबाद में। बब्लू ख़ाँ साहब एक पखावजी थे सहारनपुर के, उनके साहबज़ादे थे। बहुत बेमिसाल तबला बजाते थे और वह स्टेट में नौकर थे निज़ाम के।

अच्छा-अच्छा।

जी हाँ।

वैसे आपकी राय में तबले के कितने मशहूर घराने हैं?

घराने तो हमने अपने बुजुर्गों से यह सुना है कि अजराड़ा...

जी।

दिल्ली और लखनऊ।

ये तीन घराने हैं?

ये तीन घराने सुनते आए, मगर अब तो यह हो गया है कि जो भी कुछ अच्छा बजाने लगा, उसके दस-बीस शागिर्द हो गए, तो उसी का घराना हो गया।

दुरुस्त है, दुरुस्त है। पुराने घराने?

पुराने घराने तो यही गिने गए हैं-दिल्ली, अजराड़ा, लखनऊ।

लखनऊ और बनारस में कोई फ़र्क है? आजकल जो बनारस घराना कहते हैं?

यह जो दो-चार अच्छे लोग बजा रहे हैं, उनकी वजह से नाम मशहूर हो गया। नहीं, पुराना बनारस घराना, यह जो दो-चार अच्छे लोग बजा रहे हैं, उनकी वजह से नाम मशहूर हो गया। नहीं, पुराना घराना नहीं कहलाता यह।

यानी क्या यूँ हम समझें कि बनारस में जो तबला पहुँचा, वह लखनऊ से पहुँचा?

हाँ, सब मिला-जुला ही है वो।

गुज़ारिश ये है, जैसे लखनऊ घराना आपने बताया, तो क्या ऐसा हुआ कि लखनऊ घराने के कुछ शागिर्द रहे हों, वो बनारस में जाकर रहने लगे हों?

हाँ, यूँ वीरू मिश्रा थे, वो ख़ाँ साहब के शागिर्द थे।

किन ख़ाँ साहब के?

आबिद हुसैन ख़ाँ साहब के।

आबिद हुसैन ख़ाँ साहब के शागिर्द थे! लेकिन सुना है ये तो गाते-बजाते हुए शागिर्द हुए थे?

जी हाँ ! तो ये जो इल्म है, हमको एक हद तक आता है और उसके बाद अगर हमें दूसरी चीज़ की तलाश हो, तो दूसरा उस्ताद ...

आपका मक़सद ये है कि बीरू मिश्रा का ख़ासा नाम या गाते-बजाते थे, बावजूद उसके आबिद हुसैन ख़ाँ साहब में कुछ ऐसी बात दिखाई दी थी कि उन्होंने गंडा बंधवा लिया?

गंडा बंधवा लिया।

दुरुस्त है। तो ऐसा तो होता ही है?

जी हाँ।

अच्छा ये बनारस के तबले में नाच से मुताल्लिक़ बात कुछ ज़्यादा है?

हाँ, इसमें कुछ मिलता-जुलता मामला है।

अच्छा तो ख़ाँ साहब, अगर आज हम आपसे यह दरख़्वास्त करें कि आप मुक्तलिफ़ घरानों के कुछ कायदे सुनाएँ?

ज़रूर सुनाऊँगा।

अगर याद होंगे तो। जैसा कि कहा करते हैं लोग... (हँसी) याद तो होंगे ही ख़ैर आपको?

जी हाँ।

तो मैं चाहूँगा यह कि चूँकि आप ख़ाँदानी तबलानवाज़ हैं, अभी हम थोड़ी देर बाद आपसे दरख़्वास्त करेंगे कि आप कुछ बजाइए। मसलन हम आपसे पहले यह अर्ज़ करेंगे कि आप हमें कायदे सुनाइए।

जी, बहुत अच्छा।

तो आप मुक्तलिफ़ घरानों के कायदे, उनका ज़रा बाँट, उनकी ज़रा बढ़त, ये आप हमें बताइएगा?

ज़रूर।

और उसके बाद हम आपसे कहेंगे, ख़ाँ साहब थोड़ा पेशकार हमें सुनाइए?

जी।

फिर पेशकारों का जो चलन है, अलग-अलग किस्म के, वो आप बराए-क्रम हमें सुनाइए। फिर हम आपसे यह अर्ज़ करेंगे कि ख़ाँ साहब, कुछ गतें लौटिए, तालीमें पुरानी?

जी।

और उसके बाद हम आपसे यह दरख़्वास्त करेंगे कि आप कुछ अपनी ज़रूरी चीज़ें हमें दें?

ज़रूर।

तो हम बड़े महजूज़ होंगे। वैसे मैं यह अर्ज़ कर दूँ आपसे कि आप लोगों की यह कहावत है कि हर कूचे में नियामत होती है।

सही बात है।

कि भई जो करेगा, उसका यश होगा।

सही बात है।

आप लोग भी कहते हैं। वैसे डॉ. देव यहाँ बैठे हैं, ये भी आपको अच्छी तरह जानते हैं और आपकी इज़्ज़त करते हैं और ख़ास तौर पर इसके लिए आपकी और इज़्ज़त की जाती है कि आपने अच्छे-अच्छे शागिर्द तैयार किए हैं।

परमात्मा आप लोगों को ख़ुश रखें, जो कलाकारों की इज़्ज़त करते हैं।

और तो आप समझिए कि शौक़ीन लोग हैं। गाने-बजाने के बारे में जो कुछ मालूम लगता है, वो आप ही लोगों से मालूम होता है। अब जैसे आपने फ़रमाया कि सात बोल हैं तबले में, आठवाँ नहीं होता।

जी।

अब यह बड़ी कीमती बात है, जैसे अभी आपने कहा था कि आपको आपके वालिद साहब ने कायदा बताया, धातिट, धातिट—कितने बोल से मुरक़्क़म है भला?

पाँच बोलों से।

कौन-कौन से?

धा, तिट, धागे, धिना, गिना।

गोया, पाँच बोल हुए।

यह पाँच बोल हैं और उसके डबल-डबल आ जाते हैं।

दुरुस्त है, वे तो मुरक़्क़म हैं?

जी हाँ।

वो ज़ाहिर बात है, ठीक है। अच्छा ख़ाँ साहब, बड़ा करम फ़रमाया आपने! अभी बातें तो हो लीं। अब मैं आपसे दरख़्वास्त करूँगा कि ज़रा कुछ आप करम फ़रमाएँ, थोड़ा तबला सुनाएँ–

(संगीत....)।

तो ख़ाँ साहब, पहले आप क़ायदा बजाएँगे?

जो आप फ़रमाएँ।

जी हाँ, मैंने अर्ज़ किया?

(संगीत...क़ायदा)

और कौन-से घराने का कायदा आप सुनाएँगे, ये आप हमें बता दीजिए?

(तबला वादन...)। जी ज़रूर, पहले अजराड़ा का सुनाऊँ?

बिस्मिल्लाह! जी, क़ायदा अजराड़ा–

जी। (तबला वादन आरंभ...)।

सुब्हान अल्लाह! ख़ाँ साहब, ज़रा आप मुँह से पढ़ देंगे, इस कायदे को थोड़ा-थोड़ा-सा हिस्सा?

धागेनि धागेति धिकित धाधिन...

ठीक है। ये अजराड़े में और दिल्ली में तो कुछ फ़र्क होगा?

फ़र्क इसमें सिर्फ़ इतना है...

दुरुस्त है।

कि वो चतुर्श जाति में बँधा हुआ है दिल्ली का तबला...

और ये तिस्त्र जाति में...?

ये तिस्त्र जाति में बँधा हुआ है।

यानी दिल्ली वाली जो लय है, वो चौकोर है?

जी हाँ।

और इसकी लय तिकोनी है?

तिकोनी है।

हम लोग अस्त्र कोने को कहते हैं। जो चौकोर हो वो दिल्ली और जो तिकोना हो वो अजराड़ा। अल्लाह-अल्लाह, ख़ैर सल्लाह।

(तबला आरंभ...)

सुब्हान अल्लाह! लखनऊ कुछ... (धीरे से बोलते हुए) अगर मिज़ाज चाहे तो...?

बहुत बेहतर है।

आपके मिज़ाज पर है। वाह, सुब्हान अल्लाह (संगीत व तबला प्रस्तुति के बीच में बोलते हुए)! ख़ाँ साहब, कोई वो क़ायदा आप बजाइए, हम बीच में आपको परेशान नहीं करेंगे, जो पुराना कोई क़ायदा, किसी भी घराने का हो और जो आपको सबसे ज़्यादा पसंद हो।

वो भी पढ़के, सुनने से अच्छा हो जाएगा।

बहुत बेहतर है। हम आठ-सात मिनट तक आपको बिल्कुल नहीं टोकेंगे और लय आप जहाँ चाहे वहाँ रखिए।

(तबला वादन प्रस्तुति...)।

ख़ाँ साहब, कोई क़ायदा धिरकिट की बढ़त का ज़रा...,कोई दो-तीन मिनट?

रेला सुनाऊँ?

हाँ, रेला हम आगे लेंगे, दूसरे टेप में लेंगे हम।

और बजाता हूँ, दूसरा भी बजाऊँगा।

अच्छा, जो आपका मिज़ाज चाहे?

(प्रस्तुति...)।

शुक्रिया ख़ाँ साहब! दो मिनट आप ज़रा आराम कर लीजिए।

बहुत-बहुत शुक्रिया!

साभार : संगीत नाटक अकादेमी अभिलेखागार में संरक्षित रेकॉर्डिंग से प्रस्तुत। तिथि : 03.07.1967, समयावधि : 30 मिनट, 30 सेकेण्ड, टेप-संख्या : 90।

उस्ताद अमीर हुसैन ख़ाँ : (1899-1969) फरूखाबाद घराने के मशहूर तबला नवाज़ उस्ताद अमीर हुसैन ख़ाँ के पिता अहमद बख़्श अपने समय के मशहूर सारंगी वादक रहे, जिन्हें तबला और शास्त्रीय गायन में महारत हासिल थी। छह वर्ष से आपकी तबला की तालीम शुरू हुई, जिसे उनके मामा उस्ताद मुनीर ख़ाँ ने बारीकियाँ सिखाते हुए तराशा। हैदराबाद, रायगढ. और मुम्बई में विभिन्न कालखण्डों में रहते हुए अमीर हुसैन ख़ाँ ने अपनी एक विशिष्ट शैली बनायी और ढेरों योग्य शिष्य तैयार किये, जिनमें निखिल घोष, पण्ढरीनाथ नागेश्कर, अरविन्द मुलगाँवकर, ग़ुलाम रसूल ख़ाँ और फ़क़ीर ख़ाँ के नाम मशहूर हैं।

आचार्य कैलाशचन्द्र देव बृहस्पति : (1918-1979) आचार्य बृहस्पति भारतीय संगीत परम्परा के उन प्रमुख संगीतविदों में शुमार हैं, जिन्होंने भारतीय शास्त्रीय संगीत के सैद्धान्तिक और प्रायोगिक पक्षों पर एक दक्ष विचारक और आचार्य की तरह लेखन किया है। 1958 में इनका प्रसिद्ध ग्रन्थ 'भरत का संगीत सिद्धान्त' प्रकाशित हुआ। इस अमर ग्रन्थ के अलावा उनकी प्रमुख ऐतिहासिक पुस्तकों में 'ध्रुव पद और उसका विकास', 'संगीत समयसार', 'मुसलमान और भारतीय संगीत', 'खुसरो, तानसेन और अन्य कलाकार' तथा 'संगीत चिन्तामणि' हैं। भारत की स्वर विधि का स्पष्टीकरण करने के लिए उन्होंने 'बृहस्पति-वीणा', 'बृहस्पति-किन्नरी' और 'श्रुति-दर्पण' जैसे वाद्यों का निर्माण किया। आपने 'अनंग रंग' के नाम से बन्दिशों की रचना भी की है। केन्द्रीय संगीत नाटक अकादेमी, नयी दिल्ली ने आपको 'रत्न सदस्यता' से सम्मानित किया है।

मैं तो आवाज़ दबाकर नहीं गाती हूँ...

बेगम अख़्तर से आचार्य कैलाशचन्द्र देव बृहस्पति की बातचीत

आदाब अर्ज़ है।

आदाब अर्ज़ है।

भई, ख़ुदा का बड़ा फ़ज़ल है कि आज आपसे मुलाक़ात हुई है। जब गुणियों से मुलाक़ात होती है, तो तबीयत चाहती है कि कुछ बातचीत की जाए। उनसे कुछ सबक़ लिए जाएँ, उनके कुछ तजुर्बात दर्याफ़्त किए जाएं। तो मुझे उम्मीद है कि जिस तरह गाने में फ़ैयाज़ी बरतती हैं...

हं, हं [सम्मिलित हँसी की आवाज़]

...इसी तौर पर आप हमारे सवालात का जवाब देंगी, जिससे कि हमें कुछ सबक़ मिल सके। आपकी राय में गाने की रूह क्या है, जिसके बग़ैर गाना, गाना ही नहीं रहता?

मेरे ख़्याल में गाने की रूह तासीर है। दुरुस्त है न?

सुभानल्लाह! आख़िर तासीर से आपका मक़सद क्या है?

असर।

अंत में वो सही है; यानी, मसलन आप गा रही हैं और मेरा इरादा भी आपका गाना सुनने का है, कहीं और की फ़िक्र मुझे नहीं है...

जी।

और आप दिल लगाकर गा रही हैं; आप गाने में डूबी हुई हैं। तो मेरी कैफ़ियत क्या हो जानी चाहिए?

कम से कम इतनी तो होनी चाहिए कि आप इत्मीनान से बैठे रहें और सुनते रहें!

ज़ाहिर बात है।

मैं तो उसी को तासीर समझती हूँ मेरे गाने का, कि मैं जैसा गा रही हूँ, अगर ठीक गा रही हूँ तो कम से कम उसका असर आपके दिल पर होना चाहिए।

बेगम अख़्तर

और वो कम से कम यह होना चाहिए, कि मैं अपनी और फ़िक्रों को उस वक़्त भूल जाऊँ।

भूल जाऊँ; जी हाँ।

यानी दिन भर के प्रोग्राम को भूल जाऊँ-कहाँ जाना है, कहाँ आना है, घर में बीवी से झगड़ा हुआ है या नहीं हुआ है...

हं हं [हँसी]।

इन सारी बातों को भूल जाऊँ मैं।

दुरुस्त है, दुरुस्त है।

यानी गाना एक वो फ़न है, अगर सही तौर पर उसे पेश किया जाए, तो कुछ वक़्त के लिए सामा अपनी सुध-बुध भूल जाता है।

बेशक।

अच्छा, तासीर पैदा करने के लिए हम क्या करें?

मेरे ख़्याल से तो यूँ ही कह लीजिए कि...

जी।

ख़ुदा की देन!

दुरुस्त है।

या अपनी मेहनत, अपने दिल का लगाव।

दुरुस्त है। यानी आपका मक़सद यह हुआ कि अगर गाने में तासीर पैदा करना है तो फ़ितरी तौर पर जज़्बात होना चाहिए फ़नकार के अंदर।

यक़ीनन।

जिसका इज़हार वो करना चाहता है...और यह ख़ुदा की देन है।

यक़ीनन।

अच्छा, तो अगर हम यूँ कहें कि ख़ुदा की देन उस सोने की तरह है जो खान से निकला? लेकिन खान से निकला हुआ सोना ज़ेवर तो नहीं होता।

बिल्कुल।

उस सोने को साफ़ करना पड़ता है और बहुत सारी बातें करनी पड़ती हैं, तब कहीं जाकर वो ज़ेवर बनता है।

बिल्कुल।

तो आपकी राय में जिसे अल्लाह मियाँ की देन है, ऐसे शख़्स को अच्छा फ़नकार बनने के लिए क्या करना चाहिए?

मेहनत करनी चाहिए, सच बोलना चाहिए-गाने का असर ईमान से पड़ता है।

सुभानल्लाह!

अगर इंसान ईमानदार है तो उसके गाने में भी तासीर होगी।

आपका मक़सद यह है कि अगर इंसान कपटी नहीं है।

हाँ।

उसमें ख़ुलूस है।

बोझ नहीं रखता।

बोझ नहीं रखता; जी हाँ, दिल में सफ़ाई है।

अख़्तर : सफ़ाई है।

तो उसके सुर में भी तासीर होगी।

यक़ीनन।

दुरुस्त है, कोई शुबा नहीं। अच्छा, अगर कोई ख़ातून सिल और बट्टे को मुतवातिर रगड़ती रहें, यानी उसको रगड़ने का रोज़ाना रियाज़ करती रहें?

अख़्तर : हाँ...

तो चटनी तो नहीं बनेगी! इसके मायने यह हुआ कि अल्लाह मियाँ की देन, रियाज़ करने का जज़्बा, और उसके साथ शायद तालीम की भी ज़रूरत होगी?

बिल्कुल।

अच्छा। तो तालीम का ऐसा तरीक़ा जो कि सबको इख़्तियार करना ही चाहिए, जिस तरीक़े को इख़्तियार किए बग़ैर आर्टिस्ट नहीं बन सकता, आपकी राय में वो क्या है?

यह तो आप मुझसे ज़्यादा जानते हैं।

नहीं, ऐसा है कि सब कुछ तो अल्लाह मियाँ ही जानते हैं! सम्मिलित हँसी हम लोग तो बंदे हैं, नाचीज़ हैं।

जी हाँ। पर आपने तो इतनी मेहनत की है, इतनी रिसर्च की है, कि आप तो इसको हमसे ज़्यादा समझ सकते हैं।

लेकिन शायद मैं अपना सवाल वाज़ह नहीं कर सका।

जी?

एक तरीक़ा-ए तालीम था वो, जिसमें कि आपको तालीम मिली।

बिल्कुल।

एक तरीक़ा-ए तालीम है आजकल का, स्कूलों का या जमातों का।

जी।

इन दोनों तरीक़ों में बहुत बड़ा फ़र्क़ है।

बहुत फ़र्क़ है।

तो आपको जिस तरीक़े से तालीम मिली वो तरीक़ा क्या है?

मुझे तालीम जिस तरीक़े से दी गई उसमें एक-एक सुर के ऊपर आधे-आधे घंटे लगाने पड़ते...उस्ताद ने कहा कि आवाज़ 'सा' पर लगाओ।

जी।

आधे घंटे लगाओ।

जी।

लगाती रही; फिर, खरज भरो।

जी।

एक घंटा, डेढ़ घंटा उसमें आवाज़ लगाओ।

जी।

तो उसमें मैंने यह देखा कि आवाज़ में जान पैदा होती है।

जी।

क़ुव्वत आती है।

जी।

सुर सही लगता है।

सच्चाई पैदा होती है।

सच्चाई पैदा होती है।

अच्छा, तो आप कितनी बड़ी थीं जब से आपको यह रियाज़ कराया गया?

मेरे ख़्याल में...मुझे अच्छी तरह से याद है कि मैं दस, दस-ग्यारह साल की थी जिस वक़्त से ख़ाँ साहब, अता ख़ाँ साहब ने रियाज़ शुरू कराया।

ख़ाँ साहब, अता ख़ाँ ने?

जी हाँ, पटियाला के हैं।

पटियाले के...ठीक है, वो तो अभी हयात हैं।

जी हाँ।

अच्छे बुज़ुर्ग से। तो शुरू में कहाँ आपने सीखा?

मैंने कलकत्ता में सीखा।

क्यों सीखा?

हँसती हैं मुझे शौक़ था।

आपको शौक़ था?

जी हाँ, गाने के सिवा मेरा और कोई काम ही नहीं था।

दुरुस्त है; इसके मायने यह हुआ कि आपका माहौल ऐसा था।

जी।

जिसमें कि दस-ग्यारह साल की उम्र में ही आपके कान में गाना पड़ता रहता था।

जी नहीं, बिल्कुल नहीं।

बिल्कुल नहीं?

बिल्कुल नहीं।

फिर कैसे शौक़ हो गया आपको?

बस शौक़ था, गाना कहीं भी सुन लेती थी तो मैं वहाँ बैठी रहती थी।

अच्छा तो...

मेरे वालिदैन को इससे बड़ी तकलीफ़ होती थी।

गाना सीखने से?

जी हाँ, ज़ाहिर है उस ज़माने में तो...

अच्छा, तो आपको किन लोगों का गाना सुनने का मौक़ा मिलता था?

मेरे दिल पर जिस आदमी के गाने का असर शुरू हुआ, उसका नाम अगर मैं बताऊँगी तो आप हँसेंगे।

जी, तो अच्छे आदमी के ज़िक्र में तो हँसूंगा ही सम्मिलित हँसी।

ज़ाहिर बात है, यानी जिस शख़्स ने बेगम अख़्तर पर असर किया हो बचपन से...

वो ज़रूर आदमी अच्छा होगा, और उसके ज़िक्र में ख़ुश होऊँगा ही, और ख़ुश होने के बाद इंसान हँसता है!

जी, अगर वो बिल्कुल ग़ैर-मारूफ़ इंसान है बेचारा।

शोहरत ही ज़रूरी नहीं है...किसी को शोहरत मिल ही जाए, कोई ज़रूरी नहीं।

...एक चंदा बीबी थीं।

जी।

वो थियेटर में काम किया करती थीं।

जी।

फ़ैज़ाबाद मे हम पैदा हुए, वहीं परवरिश हुई।

जी।

और वहीं से हम बाहर निकले गाने के सिलसिले में।

ज़ाहिर है।

सीखने के सिलसिले में ...तो वो थियेटर आया वहाँ, उसमें वो चंदा काम करती थीं।

जी।

और मैं आपको क्या बताऊँ, आज तक उनकी आवाज़ और वो गाना उनका...वो शायद अभी भी हैदराबाद में ज़िन्दा हैं।

जी।

इस क़दर असर और इतनी! हम बच्चे थे ...उसको सुनकर बेचैन हो जाया करते थे।

वाह, वाह! सुभानल्लाह।

और हम घर से छुपकर नौकरानी को लेकर चुपचाप से रात को दो-दो बजे तक वहाँ बैठे रहते थे, दस बरस की उम्र में।

जी।

और उसको सुनके हम रोया करते थे।

उस वक़्त के किसी गाने के बोल याद हैं आपको? बात भूल तो नहीं सकतीं; जिस गाने ने शुरू में इतना असर किया हो वो भूल जाएं, ये संभव नहीं सम्मिलित हँसी। और बेगम अख़्तर भूल जाएं, यह तो मुमकिन ही नहीं; कोर्स का मामला थोड़े ही है?

जी हाँ, एक पंजाबी गाना गाती थीं वो।

जी।

और वो एक नात गाया करती थीं।

जी।

वो इस तरह से गाया करती थीं कि मैं आपको क्या बताऊँ, काश आपने सुना होता उसको...

आपसे मुझे रश्क हो रहा है, थोड़ा-सा आप ही सुना दीजिए-थोड़ा गुनगुना के।

खिलखिलाहट के साथ वो पंजाबी गाना उनका यह था : 'कलियाँ वाला...' गाती हैं।

जी।

'कलियाँ वाला मेरा साई'-यह गाना वो गाया करती थीं और मैं घंटों सुना करती थी। मैं उनके घर पर जाया करती थी और कहती थी कि बीबी, आप यह मुझे सुना दें फिर से; और मैं आधे-आधे घंटे बैठ सुना करती थी। वो मुझको इतना चाहने लगी थीं इस इश्क़ की वजह से, कि जहाँ उनका यह गाना आता था, वो आदमी भेजकर बुलवा लेती थीं-कि उस बच्ची को बुला लाओ।

हाँ,हाँ, एक सोज़ है, इसमें बात है दिल को छू लेने वाली बात। सुभानल्लाह। अच्छा, तो बचपन में ही जो गाना आपको सुनने को मिला, आपकी रहमत हुई, तो वह चंदा बीबी का गाना था।

जी हाँ।

...जिसमें ख़ास क़िस्म का सोज़ था, और सुरों का पंजा भी लगा हुआ था।

जी।

सुभानल्लाह। हमारा काम तो तहक़ीक़ करने का है! सम्मिलित हँसी यही तो मैं कहता हूँ, कि फ़ैज़ाबाद में पंजाब कहाँ से आ गया? पुनः हँसी ठीक है। अच्छा, तो आपकी तालीम जब शुरू हुई तो आपने फ़रमाया कि आपकी उम्र कोई दस-ग्यारह साल की थी।

जी हाँ।

तो शुरू में सुर ही भरवाया गया था, या कुछ तबीयत लगाने के लिए...

सुर ही भरवाया गया। अस्थाईयाँ शुरू कीं। मगर वो जी नहीं लगता था मेरा।

वो ज़ाहिर है।

क्लासिकल सीखने में।

ज़ाहिर बात है।

जी चाहता था कि ग़ज़ल कोई हो, ठुमरी कोई हो, दादरा कोई हो...

ज़ाहिर है। वो तो यूनानी तबीब का जैसे कोई काढ़ा हो, यह मालूम होता होगा?

जी हाँ।

तो तबीयत तो... आपकी तासीर की तरफ़ थी।

जी हाँ।

अच्छा, तो जब आपको थोड़ा-सा और शऊर हुआ होगा समझने का, तो किन-किन बुज़ुर्गों का गाना आपने सुना?

मैंने... ख़ाँ साहब मुईनुद्दीन डागर, वो जो बड़े थे।

अच्छा—नसीरूद्दीन।

नसीरूद्दीन ख़ाँ साहब।

जी।

बल्कि उन्होंने मुझको एक स्थाई भी बताई थी।

जी।

और एक ठुमरी बताई थी।

जी।

और मैं सुनती थी उनको; जिस वक़्त उनका कलकत्ते में गाना होता था कहीं भी, तो मैं घंटों सुना करती थी।

जी।

मगर बस सुनती थी वो...समझने के लिए सुनती थी मैं।

ज़ाहिर है।

गाने के लिए नहीं। वो इतना मुश्किल मालूम होता था कि सुनने ही से उसका ज़रा ताल्लुक़ था।

अच्छा, वो तो ध्रुपदीया थे न ख़ाँ साहब?

जी हाँ, जी हाँ।

ठुमरी गाते थे?

उन्होंने बताई थी मुझे ठुमरी।

यानी चुपके से गाते थे।

हाँ, चुपके से गाते थे हँसी की आवाज़।

वैसे ज़ाहिर है, निहायत परहेज़गार थे?

जवानी में तो गवैये अपनी हद को यहाँ तक समझते थे कि मुझे ठुमरी गाना है पुनः हँसी।

लेकिन चुपके से गा लेते थे।

जी हाँ!

अच्छा, तो उसमें ऐसे कोई...फंदे या मुरकी, ऐसी कोई चीज़ होती थी जो आपको मुश्किल मालूम होती थी...? नसीरूद्दीन ख़ाँ की गायकी में?

ताल; ताल का हिसाब जो था, मसलन उन्होंने जो शुरू किया।

जी।

उसको गिनने के लिए, उसका अंतरा स्थाई बैठा लेने के लिए।

जी।

ज़रा मुश्किल मालूम पड़ती थी।

ठीक है; तो उनका आवाज़ मैंने सुना है बहुत अच्छा था?

बहुत अच्छा था।

अच्छा, उस वक़्त कितनी उम्र रही होगी भला आपकी?

ग्यारह-बारह बरस की थी।

अच्छा, अच्छा; उस ज़माने में तो रेडियो का इतना ज़ोर नहीं था?

बिल्कुल था ही नहीं ।

और वह माइक्रोफ़ोन भी नहीं था।

जी नहीं।

आजकल तो इस माइक्रोफ़ोन की इनायत से लोग आवाज़ लगाना जैसे भूल गए हैं।

दुरुस्त है।

बस ख़ुद ही गा रहे हैं, ख़ुद ही सुन रहे हैं, पड़ौसी तक आवाज़ ना पहुँच जाए। लेकिन आपकी जब तालीम होती थी और उस ज़माने के गवैये गाते थे, उनकी आवाज़ और आज की आवाज़ में क्या फ़र्क़ है?

वो तो इसको ऐब समझते थे, मना करते थे, कि आवाज़ दबाकर मत गाओ।

जी।

क्योंकि आवाज़ की जो सच्चाई है, जो क़ुदरत ने हमको दिया है...

जी।

उसको हमारे दबाने से तो कोई ख़राबी ही पैदा हो जाएगी, कोई अच्छाई तो पैदा नहीं हो जाएगी।

जी, पर अगर कोई नौजवान आजकल यह कहे कि बेगम, उस ज़माने में माइक्रोफ़ोन तो होता नहीं था...

जी।

और लोग थियेटर में गाते थे।

जी।

जो बड़ा लम्बा हॉल होता था; पीछे वाले को भी आवाज़ सुनाई दे, इस वजह से वो ज़ोर-ज़ोर से गाते थे।

जी।

अब तो हमारे पास माइक्रोफ़ोन है, हमें चिल्लाने की ज़रूरत ही नहीं!

जी।

तो इस ज़माने के लोगों को आप क्या राय देंगी?

उसका ...उसका यह है कि आप पब्लिक में उनको भी बिठा के सुन लीजिए, इन लोगों को भी बिठा के सुन लीजिए माईक के साथ।

जी।

मैं तो आवाज़ दबाकर नहीं गाती हूँ।

आपका मक़सद यह हुआ...

जी।

कि आवाज़ खोलकर गाने से तासीर का भी ताल्लुक़ है।

बिल्कुल।

यानी वो दिल से सीधी आवाज़ निकलती है।

दुरुस्त है, दुरुस्त है।

और आवाज़ दबाकर गाने से वो तासीर नहीं रहती, उसमें बनावट आ जाती है...

दुरुस्त है, दुरुस्त है।

अब आजकल जो ये बच्चे गाना-बजाना सीख रहे हैं, इनको दरबारों के बारे में तो कुछ भी नही मालूम है?

जी।

वहाँ की तहज़ीब के बारे में तो कुछ इल्म नहीं।

दुरुस्त है।

और मैं समझता हूँ कि ऐसे बहुत कम लोगों को शायद उन्हें सुनने का मौक़ा मिलता हो, जो हर-दिल-अज़ीज़ गवैये हैं।

बेशक।

अच्छा। तो ऐसे गवैयों में आपकी नज़र में कौन लोग आए कि जो भक्तों को भी रिझा लें, तो शायरों को भी रिझा लें, तो कवियों को भी रिझा लें, और राजाओं को भी रिझा लें–ऐसे...गवैये आपके सुनने में कौन हैं?

मसलन फ़य्याज़ ख़ाँ साहब...

जी, दुरुस्त है।

मसलन ग़ुलाम अली ख़ाँ साहब...

जी, दुरुस्त है।

कि वो जिस जगह, जिस महफ़िल में, जिस मंदिर में...

जी।

जिस सभा में सिवाय ख़ुदा और रसूल की कोई इज़्जत नहीं–वहाँ पर भी वो उसी तरह रुला देते थे जिस तरह कि गानें बजाने वालों की हालत हुआ करती थी।

दुरुस्त है। अच्छा, तो वो सुर से रुला देते थे, या अल्फ़ाज़ से रुला देते थे, या लय से रुला देते थे?

सब चीज़ें मिली हुई थीं।

जी।

क्योंकि हर आदमी तो सुर नहीं समझता।

जी।

हर आदमी लफ़्ज़ भी नहीं समझता।

जी।

हर आदमी ताल भी नहीं समझता।

ज़ाहिर है।

हर चीज़ मिल-जुलकर होती थी ओर वो हो रही है।

वो हो रही है, दुरुस्त है। अच्छा, एक बात ज़रा बेतकल्लुफ़ी से फ़रमाइए।

जी।

यह जो नज़रिया इन गवैयों का था...

जी।

कि भई, जितनी अहमियत अल्फ़ाज़ की है, वो भी रहना चाहिए, राग भी रहना चाहिए, लय भी रहना चाहिए, और इन सब में तनासुब होना चाहिए।

जी।

क्या आजकल इस तरफ़ गाने वालों का ध्यान कुछ कम हो रहा है? मेरा मतलब ख़्याल गाने वालों से है।

इसके मुताल्लिक़ आप मुझसे न पूछें तो बड़ा करम होगा आपका।

बेगम किसी हलवाई से पूछूँ?

हलवाई से नहीं। खिलखिलाहट

आख़िर आपसे न पूछूँ?

हँसते हुए किसी लोहे वाले से पूछिए। सम्मिलित हँसी

देखिए, आजकल के हालात ऐसे हैं कि दिल, गाने बजाने वालों की, जो प्यार करने वाले हैं, उनका लोहे से भी ज़्यादा मज़बूत हो गया है।

जी।

लेकिन यह घर की बात है। यह ब्रॉडकास्ट होने की बात नहीं है। मैं आपसे किसी का नाम नहीं पूछता, मैंने किसी का नाम नहीं लिया।

जी हाँ!

मैंने किसी का नाम नहीं लिया। लेकिन आजकल जो एक ख़ास तरीक़ा है कि किसी भी दो अस्थाई के बस शुरू के बोल लिए, उसके बाद आऽऽऽ... पता नहीं चलता कि कोस रहे हैं, या गालियाँ दे रहे हैं, या बद्दुआ दे रहे हैं, अल्लाह जाने क्या कह रहे हैं?

बेशक।

तो यह जो तरीक़ा है, इसके बारे में आपकी क्या राय है?

मैंने जिस तरह सुना है बुज़र्गों को...

जी हाँ?

वो तो उसके बरअक्स है बिलकुल।

जी हाँ।

इसलिए असर नहीं होता, लोग उठ कर चले जाते हैं, बैठते नहीं हैं। वक़्त अपना समझते हैं कि ज़ाया हो रहा है।

मैंने यह सवाल आपसे जानबूझ के किया।

जी।

मैं एक आर्टिस्ट का, नाम नहीं लूंगा...।

जी।

उसने अभी-अभी अख़बारात में यह बयान दिया है...

जी।

कि भई आजकल गाना, हिन्दुस्तानी गाना...

जी।

यह कुछ बड़ा घट रहा है, और अच्छे आर्टिस्ट पैदा नहीं हो रहे हैं।

जी।

जबकि तंत्र बहुत तरक़्क़ी पर है; यह उन्होंने कहा है।

हँसती हैं

चूँकी आर्टिस्ट का नाम न मुझे लेना है न आपको पूछना है।

बेशक।

क्या इसमें कुछ हक़ीक़त है?

बिल्कुल नहीं है।

हो सकता है कि उनका मक़सद सिर्फ़ ख़्याल की तरफ़ हो, ठुमरी की तरफ़ न हो उनका इशारा, लेकिन कहा उन्होंने यह...

अब आप यह समझिए कि तीस-पैंतीस बरस से मैं पब्लिक में हूँ और देख रही हूँ, पब्लिक का रुख़ भी देख रही हूँ।

जी।

मैं तो यह समझती हूँ कि आजकल जो गाने बजाने वाले हैं, वो बेहद ख़ुशक़िस्मत हैं।

जी।

क्योंकि जिस तरह से हमारी गवरमेंट ने इतना गाने-बजाने का प्रचार किया है, वो पब्लिक जो अपने को-हम लोगों की नज़र में-अंधे दिखाई दते थे...

जी।

वो अब कम से कम यह तो समझते हैं यह गान्धार लगी या यह पूरिया धनश्री गा रहे हैं, या यह मियाँ-की-मल्हार गा रहे हैं। यह तो समझने लगे हैं।

भई इस सिलसिले में तो हमें मश्कूर होना चाहिए पंडित भातखंडे का या पंडित विष्णु दिगम्बर का।

बेशक।

क्योंकि इन्होंने बड़े-बड़े स्कूल या कॉलेज खोलने के बाद भले ही तानसेन न पैदा किए हों, लेकिन ये जो पीलू गा रही हैं या पूरिया धनश्री गा रही हैं, इस समझ के लोग तो पैदा कर दिए है!

बेशक।

अच्छा, एक बात बतलाइए कि ये जो दरबार थे-मैं बार-बार दरबारों का ज़िक्र कर रहा हूँ-इनमें काफ़ी गाने-बजाने वालों को बहाल कर दिया जाता था। उनको किसी को हाथी दे दिए, किसी को गाँव दे दिए, किसी को इतना जवाहरात दे दिए कि सात पुश्त तक ख़त्म न हो, ऐसा होता था।

बिल्कुल।

तो वो हालात अब नहीं हैं।

वो कैसे हो सकता है?

अच्छा, इससे गाने-बजाने वालों को कुछ नुक़सान पहुँचा है या फ़ायदा पहुँचा है?

गाने-बजाने वालों को तो नुक़सान पहुँचा है।

जी हाँ।

इसलिए पहुँचा कि उनको बेफ़िक्री थी–गाने-बजाने वालों को।

जी हाँ!

कि मैं फ़लाँ दरबार से ताल्लुक़ रखता हूँ, मेरे बच्चे पलते रहेंगे।

जी।

मैं रियाज़ करता रहूंगा, मैं बढ़ता रहूंगा।

जी।

यह तो नुक़सान हुआ गाने-बजाने वालों को, मगर उसके साथ ही साथ एक बात और हुई फ़ायदे की।

जी।

वो फ़ायदा यह हुआ कि जो गाने-बजाने वाले की इज्ज़त अब है वो बीस बरस पहले नहीं थी।

हाँ, दुरुस्त है। ये तो दूसरा मामला हो गया। मेरा मक़सद यह था...

जी।

जिस गाने-बजाने वालों को आप अच्छा गाने-बजाने वाला कह रही हैं–मसलन आप ही...

हैं?

गाने-बजाने में जो आपको नाम हासिल हुआ है, इस जम्हूरियत के ज़माने में तो हासिल नहीं हुआ है।

जी?

आप जो आर्टिस्ट बनीं वो इस ज़माने में नहीं बनीं...या ग़ुलाम अली ख़ाँ; मतलब, इस ज़माने में आर्टिस्ट नहीं बने। हमारे सामने सवाल यह है कि...

नहीं, नहीं, मैं आपसे इख़्तलाफ़ करती हूँ।

जैसे?

जैसे यही ग़ुलाम अली ख़ाँ जो थे कलकत्ते में, सन् 1935 में...

जी।

'35-36' में वो हमारे पास आकर रहे हैं।

जी।

और उनको कोई जानता नहीं था।

जी।

मैं लोगों को पकड़-पकड़ कर सुनवाती थी कि आप सुनिए तो, पंजाब से एक गवैये आए हैं। देखिए कैसा अच्छा गाते हैं। और इसी तरह गाते थे...

यह जो आप फ़रमा रही हैं, आपसे मैं क़तई मुत्तफ़िक़ हूँ, लेकिन यहाँ पर...

जी।

...मेरा मक़सद और है।

जी।

रियाज़ करने के बाद अच्छा पट्ठा जो तैयार हुआ था वो उस ज़माने में हुआ था।

सही बात है।

ऐसे लोग चले जा रहे हैं...मेरा सवाल यह है कि क्या आजकल के हालात ऐसे हैं कि इसमें ऐसे गाने-बजाने वाले पैदा हो सकें, क्या वो माहौल है?

बिल्कुल हो सकते हैं—अगर आप लोग कोशिश करें तो।

यानी क्या करें हम?

कम से कम उन लोगों को पेंशन दीजिए, उनके लिए घर का इंतज़ाम कीजिए, उनके लिए खाने का इंतज़ाम कीजिए—देखिए पैदा होते हैं कि नहीं पैदा होते हैं!

आपका मक़सद यह है कि...

जी...

दरबारों ने एक काम यह किया था कि गाने-बजाने वालों को एक क़िस्म की बेफ़िक्री दी थी।

जी।

उस बेफ़िक्री में से उनको रियाज़ का मौक़ा मिलता था, तालीम का मौक़ा मिलता था।

जी।

आज भी अगर वही हालात पैदा कर दिए जाएं, चाहे वो सोसाइटी पैदा करे या वो हुकूमत पैदा करे, कोई भी पैदा करे...

जी,जी।

तो वैसे लोग बन सकते हैं।

बिल्कुल।

अच्छा, आप मायूस तो नहीं—मुस्तक़बिल की तरफ़ से, गाने बजाने में?

नहीं, मैं तो मायूस नहीं हूँ। अल्लाह का शुक्र है, मेरे सुनने वाले और मेरे पसंद करने वाले अब, मेरे ख़्याल से, पहले से भी ज़्यादा हैं।

इसमें दो राय नहीं है। मेरा मतलब यह है कि आगे की आने वाली नस्लें जो हैं...

जी।

उनमें कितने लोग बेगम अख़्तर बन सकेंगे?

तो इनमें...उनकी अपनी भी तो कमियाँ हैं।

क्या?

मसलन यह कि कोई लड़की आई हमसे गाना सीखने के लिए।

जी।

वो कहती हैं, साहब आप मुझे पन्द्रह दिन में रेडियो में गवा दीजिए।

जी।

मैंने तो पन्द्रह दिन में रेडियो में नहीं गाया, मैंने तो बीस बरस के बाद रेडियो में गाया है; वो सीखती नहीं।

तो आप उन्हें कैसे समझाती हैं?

मैं क्या समझाऊँ, मैं कहती हूँ कि मैं आपको सिखाने के क़ाबिल ही नहीं हूँ!

यानी, बेगम, इस ज़माने में इस इल्म का... बड़ा नुक़सान हो रहा होगा?

...गाने-बजाने में तो नुक़सान देखा नहीं जाता।

नहीं; तो सवाल यह है...

सिर्फ़ नफ़ा देखा जाता है। हँसी

दुरुस्त है। मेरा सवाल यह है कि जब नए बच्चे आते हैं, तो उनको समझाने के लिए क्या कहा जाता है?

समझाने के लिए मैं उनसे कहती हूँ कि आवाज़ लगाओ।

जी।

वो आवाज़ लगाने के लिए तैयार नहीं हैं, इससे मेरा जी घबराता है...

जी।

'काहे को ब्याही बिदेस...रे सुन बाबुल मोरे'।

हज़रत अमीर ख़ुसरो ने यह तो...

जी हाँ, उसको गवैयों ने ठुमरी करके गाया है। फ़य्याज़ ख़ाँ ने 'बाबूल मोरा नैहर छूटा जाए'...इसी को तोड़-मरोड़ कर ठुमरी हो गई!

जी।

इस तरह की चीज़ें तो बहुत-सी हैं।

जी।

मसलन घरों की जो बीवियाँ...

जी हाँ।

पर्देदार बीवियाँ आपस में, लड़कियों में, माँओं में, बहनों में बैठकर गाया करती थीं, उनकी चीज़ें तो ऐसी-ऐसी हैं कि उस पर लोगों ने तर्जें बनाई हैं, मैंने बनाई हैं ख़ुद।

अगर हमारे ख़ातिर, बतौर कोई नमूना हो तो...

हँसकर इस वक़्त मैं बता नहीं सकती।

उसमें कोई बुराई नहीं, गाना थोड़े ही हो रहा है, कोई तालियाँ नहीं बजनी। सम्मिलित हँसी

वो मुझमें है तेरा याराना।

मुझे एक शेर याद आ गया।

जी?

जो यह इरशाद है, 'निकलेगा तेरा काम मुश्किल से, तो मुश्किल भी फ़रमा दीजिए, जिस मुश्किल से निकलेगा...' पुनः हँसी; अच्छा ख़ैर छोड़िए।

जी।

तो ऐसा होते ही आया है, अच्छा यह जो चैती...

जी।

और यह कजरी क़िस्म की दो चीज़ें हैं, आपकी राय में इनकी ख़ुसूसियात क्या है?

मेरी राय में–एक तो तर्ज़, दूसरा बोल, तीसरा वक़्त!

जी।

चैती उस ज़माने में गाई जाती थी पहले...

जी।

कि जिस वक़्त धान, गेहूँ कटा करते थे।

और चैत के महीने में वे (काम) होते थे।

चैत के महीने में।

दुरुस्त है।

और उसी ज़माने में लोग सुनते थे चैती, उसके बाद नहीं सुनते थे।

वे कुफ़्र था। दोनों हँसते हैं

हाँ, कुफ़्र था।

जी।

और अब यह होता है कि क्योंकि तर्ज़ अच्छी है, बोल अच्छे है, इसलिए लोग हर ज़माने में फ़रमाइश करते हैं।

जी, और सुनते हैं–ज़ाहिर बात है।

और सुनते हैं।

और यह कजरी?

कजरी बरसात के ज़माने में...

काली घटा से शायद कुछ ताल्लुक़ है इसका!

जी हाँ, जी हाँ।

हिन्दुओं में एक त्यौहार होता है...तीज-ए कजरी?

जी।

सावन के अंधेरे पाखों में।

जी हाँ, जी हाँ।

अच्छा एक बात है, जो औरतें बहुत अच्छा गाने वाली हुई हैं, यानी कि जिनका आप ज़िक्र बहुत शुरू में ही कर चुके, मैं उनकी बात नहीं कह रहा हूँ।

जी।

यानी सिन-ए शऊर को पहुँचने के बाद आपने जिन ख़वातीन का गाना पसंद किया वो कौन-कौन हैं?

वो...मसलन एक फतेहाबाद की मुश्तरी कहलाती थीं।

जी।

वो ऐसा गाती थीं, बेचारी मर गई–अल्लाह उनको जन्नत नसीब करे–ऐसा गाती थीं कि आदमी बेकार हो जाता था, खड़ा है तो खड़ा है...काम ख़त्म, वक़्त ख़त्म, वो सुन रहा है।

क्या गाती थीं?

वो तो ग़ज़लें गाती थीं, ठुमरी गाती थीं, ऐसा गाती थीं कि मैं आपको क्या बताऊँ!

जी।

बहुत अच्छा। ...और थीं ज़ोहराबाई अंबालेवाली, उनका गाना मैंने ख़ुद तो नहीं सुना।

जी।

रिकॉर्ड उनके सुने हैं मैंने।

अच्छा ये बनारस की कुछ गाने वालियों में से–जैसे विद्याधरी हुईं –उनको सुना था आपने?

जी नहीं, उनको नहीं सुना था, रसूलनबाई को सुना है, क्या कहने!

ठीक है; अच्छा, एक बात और बताइए साहब, आजकल यह ग़ज़ल का फ़िल्मी अंदाज़ भी है?

जी हाँ!

क्या ख़्याल है आपका?

हँसकर इसके मुताल्लिक़ आप मुझसे क्यों पूछ रहे हैं?

तो फिर वही बात, गाने वाले से ही तो पूछूंगा! हमारे ही बिरादरी के एक आदमी हैं, बातचीत का मौक़ा है, आपसे बात न करूँ तो किससे करूँ? हँसते हैं

उसके मुताल्लिक़ यह अर्ज़ करूंगी, मैं सिर्फ़ इतना कहूँगी, कि वो ग़ज़लें चाहे ग़ालिब की हों, या मीर की हों, या किसी बड़े शायर की हों...

जी।

अगर फ़िल्म में आप दे दीजिए तो न उनका लफ़्ज़ समझ में आता है, न उनका तर्ज़ समझ में आता है।

जी।

न ही यह मालूम होता है कि यह ग़ालिब की ग़ज़ल है; बल्कि यह मालूम होता है कि वो किसी का गीत गाया जा रहा है।

जी।

वो ग़ज़ल का अंदाज़ तो नहीं है।

जी।

इससे मुझे शिकायत है फ़िल्म वालों से, और मैंने उनसे [कहा] भी है–वहाँ के कुछ म्यूज़िक डायरेक्टरों से।

जी।

कुछ म्यूज़िक डायरेक्टर ऐसे हैं जो ग़ज़लें अच्छी बनाते हैं।

जैसे?

जैसे मदनमोहन।

जी।

बहुत अच्छी ग़ज़ल उन्होंने बनाई, और ख़य्याम।

जी।

जवाब नहीं।

जी।

उनसे मुझे कोई शिकायत नहीं...और लोग जो ग़ज़लें बनाते हैं।

आपका मक़सद यह है कि रचना तर तवज्जू रहना चाहिए।

रहना चाहिए।

भले ही वो फ़िल्म में गाई जाए।

जी, बिल्कुल।

और उसकी ख़ूबी बनी रहे।

दुरुस्त है।

वो ज़ाहिर बात है, फ़िल्म से हमारा कोई बैर नहीं है, बशर्ते कि ग़ज़ल ज़िन्दा रहे।

बिल्कुल।

अच्छा, अगर यह मिर्ज़ा ग़ालिब बेचारे आज ज़िन्दा होकर वापिस आ जाएं और...

फ़िल्मी...

... ग़ज़लें सुनें तो क्या कैफ़ियत होगी?

हँसकर फ़िल्मी ग़ज़लें सुनें?

जी हाँ।

मेरे ख़्याल से फिर वो वापस आने की कोशिश न करें। सम्मिलित हँसी

अच्छा यार ज़िन्दा सोहबत बाक़ी।

इन्शा अल्लाह।

यह मैंने आपकी बड़ी समा-ख़राशी की, लेकिन बड़ा लुत्फ़ आया थोड़ी आपसे बातचीत करके। इससे मुझे बड़ा सबक़ मिला, और आईंदा भी जो लोग इस इंटरव्यू को सुनेंगे, तो याद करेंगे, बेगम अख़्तर ऐसे बोलती थीं, इस तरह कुछ बातें कह दिया करती थीं, जो बड़ी अच्छी और क़ीमती बातें हुआ करती थीं। अच्छा, शुक्रिया।

बहुत अच्छा। ख़ुदा हाफ़िज़, आदाब अर्ज़!

ख़ुदा हाफ़िज, आदाब अर्ज़ है।

साभार : संगीत नाटक अकादेमी अभिलेखागार में संरक्षित रेकॉर्डिंग से प्रस्तुत। तिथि : 05.01.1970, समयावधि : 02 घण्टा, 30 मिनट, टेप-संख्या : 658-662।

बेगम अख़्तर : (1914-1974) पुराने जमाने की मशहूर गायिका मुश्तरी बाई की बेटी के रूप में जन्मीं बेगम अख़्तर, शुरूआती दौर में अख़्तरीबाई फ़ैज़ाबादी कहलाती थीं। उप-शास्त्रीय गायन के सभी प्रकारों- ठुमरी, चैती, दादरा, कजरी, बारामासा के गायन में पारंगत बेगम अख़्तर को दरअसल ग़ज़ल गायिकी की शीर्षस्थ गायिका के रूप में पहचाना जाता है। आपकी संगीत की तालीम ढेरों गुरूओं और कई घरानों के माध्यम से सम्भव हुई, जिनमें प्रमुख रूप से उस्ताद अब्दुल वाहिद ख़ाँ (किराना), बरकत अली (पटियाला), गुलाम मोहम्मद ख़ाँ (गया) और अता मोहम्मद ख़ाँ (पटियाला) के नाम लिये जाते हैं। आपने हिन्दी फ़िल्मों में अभिनेत्री के रूप में भी काम किया, जिनमें आठ प्रमुख फ़िल्में शामिल हैं, जिनके नाम इस तरह हैं- एक दिन की बादशाहत, नल-दमयन्ती (1933), अमीना, मुमताज बेगम (1934), जवानी का नशा (1935), नसीब का चक्कर (1936), रोटी (1942) और जलसाघर (1958)। बेगम अख़्तर के संगीत का एक पक्ष उन राज-रियासतों के दरबारों तक भी फैला हुआ है, जहाँ उन्होंने संगीत के आरम्भिक दिनों में महफ़िलें भी की हैं। इनमें प्रमुख रूप से हैदराबाद, भोपाल, रामपुर, गया और अयोध्या के राज-दरबारों का उल्लेख शामिल है। अपनी अद्‌भुद पुकार तान और बिल्कुल नये ढंग की मींड़-मुरकियों-पलटों के साथ खनकती हुई आवाज़ के चलते बेगम अख़्तर को असाधारण सफलता प्राप्त हुई। आपके गाये हुए गीतों की संख्या बहुत अधिक है, मगर कुछ खास दादरे-ठुमरियाँ और ग़ज़लें आज भी लोगों की जुबान पर हैं। इनमें प्रमुख रूप से 'कोयलिया मत कर पुकार', 'हमरी अटरिया पे आओ सँवरिया', 'जरा धीरे से बोलो कोई सुन लेगा', 'ओ बेदर्दी सपने में आ जा', 'चला हो परदेसिया नैना लगा के', 'निहुरे-निहुरे बुहारें' जैसे प्रसिद्ध दादरे उनकी प्रसिद्धि का पता देते हैं, तो वहीं दूसरी ओर 'ऐ मोहब्बत तेरे अंजाम पे रोना आया', 'कुछ तो दुनिया की इनायात ने दिल तोड़ दिया', 'शाम-ए-फ़िराक अब न पूछ', 'इतना तो ज़िन्दगी में किसी की खलल पड़े', 'उलटी हो गयी सब तदबीरें', 'वो जो हम में, तुम में करार था' और 'दीवाना बनाना है तो दीवाना बना दे' को ग़ज़लों की नुमाइन्दगी के तौर पर याद कर सकते हैं।

आचार्य कैलाशचन्द्र देव बृहस्पति : (1918-1979) आचार्य बृहस्पति भारतीय संगीत परम्परा के उन प्रमुख संगीतविदों में शुमार हैं, जिन्होंने भारतीय शास्त्रीय संगीत के सैद्धान्तिक और प्रायोगिक पक्षों पर एक दक्ष विचारक और आचार्य की तरह लेखन किया है। 1958 में इनका प्रसिद्ध ग्रन्थ 'भरत का संगीत सिद्धान्त' प्रकाशित हुआ। इस अमर ग्रन्थ के अलावा उनकी प्रमुख ऐतिहासिक पुस्तकों में 'ध्रुव पद और उसका विकास', 'संगीत समयसार', 'मुसलमान और भारतीय संगीत', 'खुसरो, तानसेन और अन्य कलाकार' तथा 'संगीत चिन्तामणि' हैं। भारत की स्वर विधि का स्पष्टीकरण करने के लिए उन्होंने 'बृहस्पति-वीणा', 'बृहस्पति-किन्नरी' और 'श्रुति-दर्पण' जैसे वाद्यों का निर्माण किया। आपने 'अनंग रंग' के नाम से बन्दिशों की रचना भी की है। केन्द्रीय संगीत नाटक अकादेमी, नयी दिल्ली ने आपको 'रत्न सदस्यता' से सम्मानित किया है।

स्वर की शुद्धता ही हमारे घराने की ख़ासियत है...

उस्ताद ग़ुलाम तक़ी ख़ाँ से कैलाश चन्द्र पाण्डे की बातचीत

आदाब अर्ज़ है, ग़ुलाम तक़ी ख़ाँ साहब।

आदाब अर्ज़ है जनाब।

ख़ाँ साहब, आप हिन्दुस्तानी संगीत के एक बहुत बड़े और नामी घराने रामपुर-ग्वालियर-सहसवान से हैं। हम आपसे, आपके गाने के बारे में, आपके घराने के बारे में और आपकी गायकी, घराने की गायकी के बारे में कुछ एक सवालात करना चाहेंगे।

जी हाँ, पूछिए।

ग़ुलाम तक़ी ख़ाँ

तो सबसे पहले, ख़ाँ साहब, हम यह जानना चाहेंगे कि आपने तालीम किन उस्तादों से हासिल की?

सबसे पहले मुझे मेरे घर की तालीम मिली। मेरे वालिद साहब जो थे उस्ताद 'मुश्ताक़ हुसैन ख़ाँ' साहब, वह एक बहुत फेमस आर्टिस्ट (प्रसिद्ध कलाकार) थे, और सब कुछ उनके पास था। तो शुरू से तालीम मैंने अपने वालिद साहब से ली। उसके बाद मेरे सबसे बड़े भाई साहब जो थे, उस्ताद 'इश्त्याक़ हुसैन' साहब से गाने की पूरी तालीम ली। इसके अलावा मैंने और कहीं से तालीम नहीं ली, सब कुछ मुझे मेरे घर से मिला।

अच्छा ख़ाँ साहब, दूसरी चीज़ हम जानना चाहेंगे कि आपके घराने का नाम काफी लंबा है–रामपुर, ग्वालियर, सहसवान–ये तीनों गाने के हिसाब से बहुत मशहूर जगह रही हैं, तो बताएँगे आप कि आपके घराने का नाम कैसे पड़ा, और यह तीन नाम से कैसे पड़ा?

देखिए, तीन नाम से तो ऐसे है कि सहसवान का जो नाम है, वह तो इसलिए है कि मेरे वालिद, मेरे भाई और जो मेरे फादर (वालिद) के उस्ताद थे, मतलब 'नसीरुल्ला ख़ाँ' साहब जो थे, बहुत फेमस आर्टिस्ट (प्रसिद्ध कलाकार) थे। हमारे घराने का सब कुछ उन्हीं का है। तो जितने भी लोग थे हमारे घराने के, यानी मेरे दादा साहब, वालिद साहब और उनके जो उस्ताद थे, सभी लोग सहसवान के रहने वाले थे, तो इसलिए तो सहसवान नाम पड़ा। और जो ग्वालियर नाम पड़ा, वह इसलिए पड़ा कि एक तो ख़ास ग्वालियर के तानसेन से सिलसिला चलता है। हमारे यहाँ सबसे बड़े उस्ताद, उस्तादों के उस्ताद जो थे, बहादुर हुसैन ख़ाँ साहब उनमें थे और वो रामपुर में थे, उनका सिलसिला बिल्कुल तानसेन से था। उनके एक भाई थे–बासत ख़ाँ साहब, जो सुर-सिंगार बहुत बेहतरीन बजाते थे, उन्हीं से उन्होंने गाने की तालीम ली। सुर-सिंगार, ध्रुपद आदि जो भी है, सब कुछ उनसे सीखा। इनायत हुसैन ख़ां साहब जो थे, मेरे वालिद के उस्ताद, उन्होंने रामपुर जाकर गाने की तालीम हासिल की, बहादुर हुसैन ख़ाँ साहब से।

दूसरे उस्ताद थे, मेरे वालिद के हद्दू, हस्सू ख़ाँ साहब–दो भाई थे, लेकिन सगे भाई नहीं थे, बल्कि चचेज़ाद थे। जो बड़े थे, वह हस्सू ख़ाँ साहब थे, दूसरे छोटे थे–हद्दू ख़ाँ साहब। तो इनायत हुसैन ख़ाँ साहब ने पूरी तालीम बहादुर हुसैन साहब से ली, जो बहुत बेहतरीन बंदिश और ध्रुपद गाते थे और सुर-सिंगार भी बड़ा अच्छा बजाते थे। उसके बाद जब वह ग्वालियर गए तो ऐसा गाया कि उनका गाना हद्दू साहब को बहुत पसंद आया। हद्दू साहब ने हस्सू साहब से उनकी बहुत तारीफ़ की कि यह बहुत अच्छा गाते हैं। उन्होंने फिर हद्दू ख़ाँ साहब से सीखा। वो भी तानसेन की औलादों में से थे, तो ग्वालियर घराना इसलिए भी हुआ।

इनायत हुसैन ख़ाँ साहब, हद्दू ख़ाँ साहब के दामाद भी थे। हद्दू ख़ाँ साहब ने अपनी बेटी इनायत हुसैन ख़ाँ साहब को ब्याही। मेरे वालिद ने पहले हैदर ख़ाँ साहब से गाना सीखा। जब वह नेपाल रियासत में थे, तो मेरे वालिद भी वहाँ चले गये थे। जब कुछ रियासतें इधर-उधर हुईं तो हैदर साहब भी चले आए सहसवान, बदायूँ वगैरह। उस बीच इनायत हुसैन ख़ाँ साहब भी वहाँ थे। तो फिर पूरा गाना इनायत हुसैन ख़ाँ साहब से सीखा मेरे वालिद साहब ने, और उसके बाद मेरे बड़े भाई ने सीखा और मैंने भी सीखा। इस तरह से यह गाना मेरे घराने में आया।

बहादुर ख़ाँ साहब रामपुर में थे और हुसैनी ख़ानदान से थे, इसलिए रामपुर घराना मशहूर हुआ। 'हिज़ हाइनेस' थे। वैसे भी रामपुर के थे, बहुत शैकीन थे, वहाँ के गाने के माने हुए आर्टिस्ट (कलाकार) थे, जैसे

मुश्ताक़ हुसैन ख़ाँ साहब भी थे, वज़ीर ख़ाँ साहब थे, बहादुर ख़ाँ साहब थे, जिनसे रामपुर घराना मशहूर हुआ। अमजद अली ख़ाँ, जो सरोद बजाते हैं, उनके वालिद हाफ़िज़ अली ख़ाँ साहब भी वहाँ रह चुके। अलाउद्दीन ख़ाँ साहब भी रह चुके। कहने का मतलब है कि पूरी एक मंडली थी वहाँ, गाने-बजाने वालों की। इसलिए भी रामपुर घराना काफ़ी मशहूर है। इस तरह से तीन घराने हुए।

जी, तो हम यूँ कह सकते हैं कि चूँकि आपके घराने के लोग और जितने भी गायक थे, वह सहसवान के रहने वाले थे और चूँकि रामपुर के दरबार से जुड़े हुए सैनिया घराने के बहादुर ख़ाँ साहब, वज़ीर ख़ाँ साहब जैसे उस्तादों से तालीम हासिल की तो उस वजह से रामपुर का नाम आपके घराने के साथ जुड़ा और ग्वालियर का नाम चूँकि आपके दादा उस्ताद इनायत हुसैन ख़ाँ साहब, ग्वालियर के हस्सू, हद्दू ख़ाँ साहब के दामाद थे और उनके शागिर्द थे, इस वजह से ग्वालियर का नाम जुड़ा।

अच्छा ख़ाँ साहब, आप अपने घराने की गायकी, यानी जिसमें हम यह मान सकते हैं कि सैनिया घराने की, बीनकारों की जो परम्परा है, उसके भी कुछ हिस्से हैं और ग्वालियर की ख़्याल गायकी तो है ही; इन सबके मेल से आपके घराने की एक नई गायकी, जिसे रामपुर-ग्वालियर-सहसवान गायकी कहें, वह बनी। तो आप अपनी इस गायकी के बारे में हमें कुछ बताना चाहेंगे ?

देखिए, हमारे यहाँ गायकी की ख़ासियतों में सबसे पहली तालीम तो यह है कि स्वर और आवाज़ का बैलेंस (सन्तुलन)। एक-सी आवाज़ से आदमी गाना कभी अच्छा नहीं गा सकता। मेरे वालिद भी मुझे नसीहत देते थे कि यदि हम एक-सी आवाज़ से गाएँगे तो गाने से जो एक ख़ुशबू है, जो एक ब्यूटी (ख़ूबसूरती) निकलती है, वह सब ख़त्म हो जाएगी। हमें एक आवाज़ भी कई तरह से इस्तेमाल या यूज़ (प्रयोग) करनी पड़ती है और वह हमारे घराने में है।

एक आवाज़ को हर तरह से बनाया जाता है, पहली तालीम तो यह है। दूसरे, मुख्य स्वर का चलना और साँस का कंट्रोल (नियंत्रण)। अब इसके बाद गायकी की विशेषताओं में मींड़, यानी एक सुर से दूसरे सुर तक ले के जाना, उसमें कुछ कण हैं, कुछ खटके हैं, और छूट हैं, जो एक सुर से दूसरे सुर तक छूट हम देते हैं, वो ख़ास हैं। उसके साथ-साथ हमारे यहाँ की जो तैयारी, जिसको हम आकार बोलते हैं वो हमारे यहाँ की है, वो आकार में रहती है। बाकी और घराने भी अच्छे हैं, लेकिन वो ज़्यादा ध्यान नहीं देते। आवाज़ हलक से निकलने लगती है, बहुतों का जबड़ा ज़्यादा लगता है, लेकिन हमारे यहाँ का प्योर (शुद्ध) आकार रहता है गाने में।

शुद्ध वाणी?

जी, शुद्ध वाणी। और उसके साथ-साथ हम जो राग भी गाते हैं तो मेन (मुख्य) तो आरोह-अवरोह है, उसी को हम बल भी डालते हैं। तो तान का हमारा एक-एक दाना है, एक-एक स्वर, आकार में भी क्लीयर या साफ़ आएगा। यह नहीं कि आधा मिस हो (छूट) गया। ख़ास विशेषता यह है कि एक बल डालने के बाद एक बार सीधी तान, एक सपाट तान हमारे यहाँ पर आती है। तो यह हमारे यहाँ की, ख़ानदान की, हमारे घराने की विशेषताएँ हैं, जो और घरानों में नहीं हैं।

ख़ाँ साहब, आपके घराने में बंदिशों का बहुत ख़्याल रखा जाता है और स्थाई और अंतरा पूरा ही गाया जाता है और यह बहुत ज़रूरी समझा जाता है कि दोनों-स्थाई और अन्तरा पूरे-पूरे और सही गाए जाएँ?

जी हाँ।

तो इसके बारे में आप हमें कुछ बताना चाहेंगे कि आपके घराने में किस तरह से बंदिशों की तालीम दी जाती है?

देखिए, हमारे यहाँ की तालीम का तरीक़ा यह है कि शुरू में बच्चा या लड़का जो कोई भी है, उसको पहले ख़ूब साफ़ 'सा' कहलाते जाओ साँस रोक-रोक के, और उसके बाद हर राग का पल्टा, जिसको आरोह-अवरोह बोलते हैं। उसके बाद हमारे यहाँ कुछ सरगमें हैं। फिर कम्पोज़ीशन (रचनाएँ) होती हैं हर राग की, जिनमें ख़्याल बंधे होते हैं ताल में। वो बहुत अच्छी-अच्छी हैं। उसके बाद फिर वही आ जाता है, अन्तरा-स्थायी बिठा लेना और सब कुछ सलीके से कहना। उसके बाद गायकी है, यह सब कुछ बतलाते हैं। गाने से पहले स्टार्ट (प्रारम्भ) करने से पहले, हमारे यहाँ थोड़ा आलाप करते हैं। बहादुर हुसैन ख़ाँ साहब जो थे, वह ध्रुपद बेहतरीन गाते थे, तो आलाप तो ध्रुपद का एक ख़ास बंध है। तो इसलिए ख़्याल में थोड़ा-बहुत आलाप ज़रूर करते हैं, तो आदमी का एक मूड भी बन जाता है, गाने में भी और सुनने वाले का भी। पता भी चल जाए कि किस छाया का राग है ये।

अच्छा ख़ाँ साहब, मैं बंदिशों वाले राग को आपसे दुबारा पूछना चाहूँगा कि एक राग में कई बंदिशें होती हैं और आपके यहाँ बंदिशों का बड़ा ख़ज़ाना है। तालीम देते वक़्त बंदिशों को किस तरह से आपके यहाँ सिखाया जाता है? क्या शुरू में पहले एक ही बंदिश सिखा करके?

नहीं-नहीं। गायकी तो हमारे यहाँ बाद में बतलाई जाती है। पहले तो यह होता है कि सरगम कहला रहे हैं, पल्टा कहला रहे हैं। उसके साथ-साथ एक राग की कई-कई बंदिशें बता देते हैं, एक ही साथ।

जी हाँ, वही मैं आपसे पूछना चाह रहा था कि शुरू में ही बता देते हैं?

हाँ, जब गाने लगते हैं और जब बीच-बीच में याद आता जाता है, तो बताते चलते हैं। बता देते हैं कि यह भी सीख लो, वह भी सीख लो!

बहुत से राग ऐसे हैं जिनमें एक या दो बंदिशें ही हैं और कई-कई रागों में बहुत-सी बंदिशें हैं। उनमें सरगमें भी हैं, तराने भी हैं; तो जितना भी सिखा सकते हैं, सिखाते हैं।

अच्छा ख़ाँ साहब, आपकी ख़्याल गायकी, आपके घराने की ख़ास चीज़ है, जिसे बहुत शुद्धता से, ख़्याल के सही अंग से आपके घराने में गाया जाता है। तो ख़्याल के गाने में आपका सिलसिला किस तरह से रहता है?

वही समझा रहा था कि पहले थोड़ा आलाप शुरू करो। उसके बाद हमने अंतरा-स्थायी ताल में बिठाया। उसके बाद फिर हम उसी को विलम्बित करते हैं, मतलब उसी को सजाते हैं-पहले मध्य सुरों में, तो उसमें हम...

(बीच में पूछते हैं) आप आकार में बढ़त करते हैं या...?

हाँ, और घरानों में तो ऐसा है कि वह आकार से कहते हैं, लेकिन हमारे यहाँ एक ऐसा उसूल है कि हम ख़्याल के जो शब्द होते हैं, उन्हीं को ले के विलम्बित करते हैं। उसका एक ख़ास कारण यह है कि अगर हम कोई चीज़ गाएँगे, विलम्बित करेंगे तो अगर हम 'आ' से करेंगे तो उतनी ख़ूबसूरती नहीं आ सकती, क्योंकि सिर्फ़ 'आ' ही रहेगा, लेकिन हम जब अस्थायी के बोल ले के कहते हैं, तो बोल के साथ-साथ हमारी आवाज़ की क्वालिटी या विशेषता हर बार चेंज होती बदलती रहती है। कहीं 'ई' है, कहीं 'ओ' है, कहीं 'आ' है, तो जब आवाज़ का बैलेंस (सन्तुलन) बदलता है तो गायकी में एक ख़ूबसूरती पैदा होती जाती है।

यानी स्वरों के बदलने से, इनको वॉवेल्स (Vowels) कहते हैं, वॉवेल्स के बदलने से?

जी हाँ, सुर तो बदलते हैं। सुर के साथ-साथ हम बोलों को ले के भी बदलते हैं, तो उसमें एक और ख़ूबसूरती आती चली जाती है।

जी। अच्छा ख़ाँ साहब, आपके घराने की तानें कई मायनों में बहुत विलक्षण हैं, ख़ासियत रखती हैं, और आपके यहाँ बहुत क़िस्म की तानें हैं। तो आप उन तानों के बारे में हमें कुछ बताएँगे?

नहीं तो, मैं ऐसे ही बता दूँ थोड़ा गा-वा के?

आप जैसा ठीक समझें?

जी, मैं थोड़ा-सा आपको गा के बताता हूँ। किस तरह बोल से शुरू करते हैं, आलाप किस तरह से करते हैं-थोड़ा-थोड़ा-सा।

(बीच में बोलते हुए) जैसे कि आपके यहाँ फिरत है, छूट है, सपाट है, विडार है, तो किस ढंग से ये तानें अलग-अलग हैं? थोड़ा नमूने के तौर पर आप बताएँ, तो बड़ा अच्छा है।

देखिए, एक राग है बागेश्वरी। उसमें मैं थोड़ा-सा आपको आलाप करके बता रहा हूँ, बहुत शॉर्ट (संक्षेप) में। उसकी एक बंदिश और उसके साथ-साथ उसी में हमारे यहाँ विलम्बित का एक ढंग है और थोड़ा-थोड़ा तानों की वैरायटी (प्रकार)।

ख़ाँ साहब, मेरे ख़्याल से अगर सिर्फ़ मुख़्तसर तौर पर तानों के बारे में बताएँ तो कैसा रहेगा ?

पर एक राग तो सजेस्ट करना (सुझाना) पड़ेगा, बताना पड़ेगा, जिसमें मैं आपको बताऊँगा। तो इसलिए बागेश्वरी मैं कह रहा हूँ।

जी, ठीक है।

(राग बागेश्वरी गाकर सुनाते हैं) ते रे ना...यह हमने एक आलाप शुरू किया। इसके बाद हम एक ख़्याल गाएँगे-कौन गति... (ख़्याल गाकर सुनाते हैं)। अब यह कहने के बाद, हम इसी को विलम्बित में गाएँगे (गाकर सुनाते हैं)। है वही स्टाइल (शैली)? इसके बाद तानें, बिल्कुल साफ़ आकार (गाकर सुनाते हैं), यह 'सा' का आकार है। अब इसी में हम बल डालेंगे, तो बल डालने के बाद लास्ट (अंत) में हमारे कहने का एक ख़ास अन्दाज़ है, जैसे कि आ, आ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ (गाकर सुनाते हैं)। यह हमारे यहाँ का ख़ास तरीक़ा है। अच्छा, इसके बाद इसमें कुछ ख़ास वैरायटी (प्रकार) कहलाती है, उसमें बिडार अंग हम उसको बोलते

हैं, जिसमें सुर के जो खटके पड़ते हैं, वह न डाल के सिर्फ़ स्लिट (slit) करते चलते हैं, जैसे आ आ ऽ ऽ ऽ ऽ (गाकर बताते हैं), यह हो गया बिडार अंग। इसी में आता है गमक अंग (गाकर सुनाते हैं), यह गमक अंग हो गया।

मोटे दाने का?

जी हाँ, मोटे दाने का। इसी में फिर हम हल्का कर देते हैं, जैसे अ, आ, अ कौन... (गाकर सुनाते हैं)। यह हमारे यहाँ आकार साफ़ है। तो इस तरह हमारे यहाँ जो थिरक का अंदाज़ है, वह ऐसे रहता है (गाकर सुनाते हैं)।

और एक छूट की तान भी बता दें।

जी, छूट की तान भी होती है, जैसे-(गाकर बताते हैं)। अब इस सुर से हम जाएंगे तो एकदम सीधा ले जाके रुकेंगे (गाकर बताते हैं), यह छूट कहलाएगी। इसी तरह से विलम्बित में होता है, एक 'ग' से शुरू हुए, दूसरे पे जाके रुके-(गाकर सुनाते हैं)। इस तरह से एक छूट की तान का तरीक़ा रहता है।

अच्छा ख़ाँ साहब, आपका घराना जो है, बहुत ही परम्परावादी भी है, यानी ट्रैडिशनल (पारम्परिक) है। आप व्यक्तिगत तौर पर किस हद तक इस गायकी के दायरे के अंदर रह कर गाते हैं और किस हद तक आप समझते हैं कि आपको इस दायरे के बाहर होकर के भी गाना चाहिए? इस बारे में मैं आपके...

यह आप बिल्कुल सही कह रहे हैं। बात दरअसल ऐसी है कि हमारे यहाँ की गायकी का जवाब नहीं है। हमें इस तरह की तालीम मिल गयी है और इस तरह से बना दिया गया है कि किसी तरफ़ से हमारा गला बंद नहीं हो सकता। हमारे बुज़ुर्गों ने इस तरह से फाउंडेशन (नींव) डाली है और ऐसा रियाज़ करवाया है और ऐसी बातें बतलाई हैं कि हमें कुछ भी गाना मुश्किल नहीं पड़ता। जैसे कि जो भी हमारे गाने में है, वह तो हम ले के चलते हैं अपनी गायकी में, वह वक़्त एक ऐसा होता है कि आदमी में अपनी भी एक विशेषता होती है।

जी हाँ, मेरा सवाल वही था।

वह भी हम करते हैं। हम बहुत-सी बातें गाने में रखते हैं, ऐसा मालूम पड़ता है कि जैसे हमारे बाप की आवाज़ हमारे कानों में आ रही है या हमारे भाई की आवाज़ आ रही है। बिल्कुल वही स्टाइल (शैली) रखते हैं और उसी में जो हमारे आइडियाज़ (विचार) बनते हैं, उसी में एक और नयापन आता चला जाता है।

जैसे कि मैं आपको बताता हूँ। जैसे मैं बागेश्वरी गा रहा हूँ। उसी में हमारे घराने में क्या बदलाव लाते हैं, जैसे कि-तेरे रैना...आ...(गाकर सुनाते हैं), यह हमारे घराने का ख़ास अंदाज़ है। अब इसी को हम अपनी तरह से कहेंगे (सुनाकर समझाते हैं)। देखिए, चेंज हो (बदला) गया स्टाइल (शैली) उसका (अपने स्टाइल (शैली) से गाकर सुनाते हैं)। इस तरह से चेंज (बदलाव) करते चले जाते हैं।

अच्छा ख़ाँ साहब, यह सवाल मैं पूछना चाहूँगा कि अब कुछ लोग आपके घराने में, घराने का जो एक नक़्शा है, बिल्कुल उसी के अंदर गाते हैं। क्या आप समझते हैं कि हर किसी को घराने के नक्शे के बाहर हो करके भी गाना चाहिए?

मैं तो यह जानता हूँ कि कुछ लोग ऐसे हैं, जो कोशिश करते हैं और बिल्कुल घराने के बाहर निकल जाते हैं। एक अपने में कुछ ख़ास विशेषता होती है कि आदमी अपने को रोक नहीं सकता। तो हमारे घराने वाले

जितने भी हैं, उनका जो अपनी गायकी का अंदाज़ है वह सब एक ही है, लेकिन उसके साथ-साथ थोड़ा नयापन ज़रूर लाते हैं।

एक अपना अलग दिमाग़ भी होता है आदमी का। बुज़ुर्गों का अपना पुराना भी है, और साथ-साथ अपना भी कुछ बनाते हैं। हमने भी अपनी बनाई है, लेकिन है उसी के अंदर। तालीम है, पर अपना भी सब कुछ कर लेते हैं उसमें, पर वो है बिल्कुल उसी में।

अच्छा ख़ाँ साहब, बहुत-बहुत शुक्रिया!

आपका भी बहुत-बहुत शुक्रिया।

आपसे पूछना तो और भी था। जब कभी फिर मौका मिलेगा, ज़रूर पूछेंगे। अच्छा, नमस्कार!

नमस्कार!

साभार : संगीत नाटक अकादेमी अभिलेखागार में संरक्षित रेकॉर्डिंग से प्रस्तुत। तिथि : 09.09.1988, समयावधि : 21 मिनट, टेप-संख्या : 3942।

उस्ताद गुलाम तक़ी ख़ाँ : (1940-1990) रामपुर सहसवान घराने के प्रमुख ख्याल गायक के रूप में प्रतिष्ठित उस्ताद गुलाम तक़ी ख़ाँ साहब इसी घराने के मूर्धन्य गायक उस्ताद मुश्ताक हुसैन ख़ाँ साहब के बेटे हैं। यह विशेष उल्लेखनीय है कि उस्ताद मुश्ताक हुसैन ख़ाँ साहब रामपुर के नवाबों हामिद अली ख़ाँ और रजा अली ख़ाँ के प्रमुख दरबारी गायक के रूप में मौजूद रहे। अपने वालिद की मृत्यु के बाद उनकी अधिकतर तालीम बड़े भाई उस्ताद इश्तियाक़ हुसैन ख़ाँ साहब के सान्निध्य में हुई। गुलाम तक़ी ख़ाँ साहब ने ख्याल, तराना और सादरा में विशेष दक्षता हासिल की थी, हालाँकि वे ठुमरी, दादरा और भजन भी उतनी ही सुघरता से गाते थे। उन्होंने अपनी गायिकी को नवाचार से समृद्ध करते हुए एक बड़े फलक का गायन निर्मित किया था, जिसमें तीनों सप्तकों में जाकर तान लेने की पद्धति उनकी विशिष्ट पहचान मानी जाती है। कुछ दुर्लभ और लोकप्रिय रागों मसलन- राग मालती बसन्त, मधुकौंस और छायानट का उनका गायन आज भी उनके चाहने वाले याद करते हैं। एक उल्लेखनीय तथ्य यह भी है कि उस्ताद की सोज़ख़्वानी गायिकी में भी महारत हासिल थी। कई पुरस्कारों से सम्मानित उस्ताद को संस्कृति मंत्रालय भारत सरकार ने सीनियर फेलोशिप से नवाजा था, जो उनकी सोजख़्वानी पर उनकी विशिष्टता के लिए दिया गया था।

कैलाश चन्द्र पाण्डे : (1946-) कैलाश चन्द्र पाण्डे रामपुर सहसवान घराने की संगीत-परम्परा के ऐसे मुरीद रहे हैं कि उन्होंने अपने जीवन के लगभग तीस बरस इसी घराने के उस्तादों के सम्पर्क में संगीत सीखते हुए गुजारे, जिनमें उस्ताद इश्तियाक़ हुसैन ख़ाँ, उस्ताद गुलाम हुसैन ख़ाँ और उस्ताद गुलाम तक़ी ख़ाँ साहब के नाम लिये जा सकते हैं। आपने सिविल इंजीनियरिंग में डिप्लोमा हासिल किया, जबकि स्वान्तः सुख के लिए सदैव संगीत को समर्पित रहे। कुमाऊँ की बैठकी-होली के जानकार और रसिक के तौर भी आपको जाना जाता है। आजकल आप 'द ब्लाइण्ड रिलीफ एसोसिएशन', दिल्ली में कार्यकारी सचिव के रूप में कार्यरत हैं।

शीशे में देखकर अपने भाव सुधारते थे...

गुरु कार्त्तिक राम से गोविंद विद्यार्थी की बातचीत

जी मैं आपसे यह पूछ रहा था, अभी जैसे गुणी लोगों को बुलाते थे या खुद आते थे दरबार में?

जी हाँ!

तो महाराज पहले उनका पूरा नृत्य देखते थे, भाव भी?

जी, राजा जी साहब ठहराते थे, बाकायदा खाना-पीना देते थे और फिर उसके बाद में सभी उस्तादों को बुलाते थे महल में और फिर वहाँ सुनते थे। जिसको-जिसको पसंद है, उनको मौजूद होना था सुनने के लिए। फिर वहाँ महल में वो उस्ताद जाकर के बैठते थे, फिर सुनाते थे। राजा जी सुनते थे, कौन कैसा गा रहे हैं, कौन कैसा बजा रहे हैं? कौन क्या कर रहे हैं?

अच्छा वहाँ पर उस वक़्त जैसे मान लीजिए पंडित जयलाल जी आए, उनका नाच हो रहा है, उस दिन अच्छन महाराज भी वहाँ मौजूद हैं या और भी कोई लोग हों, जैसे जयलाल जी का नृत्य हो रहा है।

जी हाँ।

तब दूसरे लोग उस पर कुछ...

तब रख लेते थे राजा साहब।

राजा जी रख लेते थे, राजा साहब?

जी हाँ!
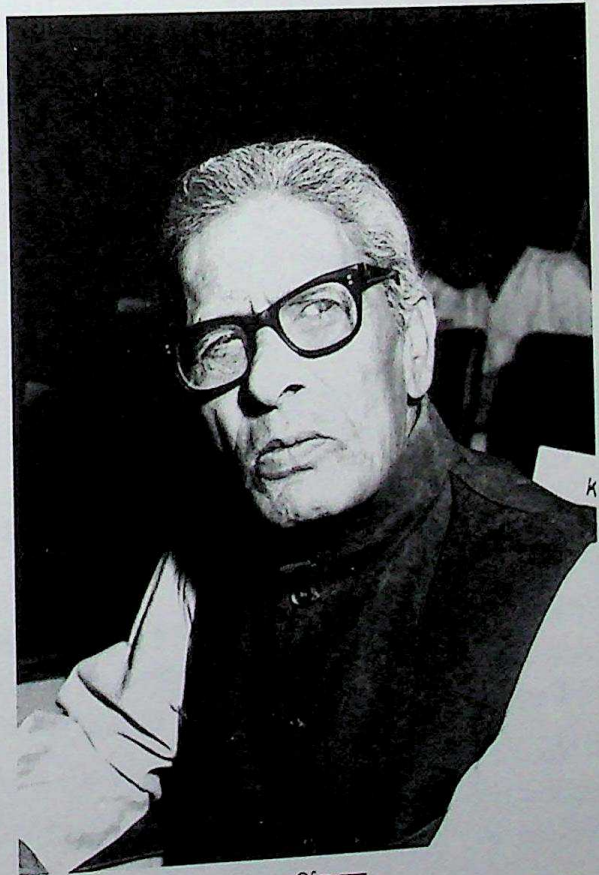
कार्त्तिक राम

जैसे दूसरे जो घराने के लोग हैं, उनका आपस में कुछ मतभेद नहीं होता था वहाँ?

जी नहीं! कुछ नहीं होता था। राजा साहब जिसको चुन लेते थे, बोलों में या गायिकी में, तो उसके लिए बातचीत करते थे कि कितने लेंगे, क्या-क्या देना होगा? तो फिर वो सुनकर के, फिर मन में विचार करके उसको फिक्स कर लेते थे, फिर रख लेते थे। आप यहाँ रहिए। हमारे बच्चे को सिखलाइए, जो-जो अच्छी-अच्छी चीज़ें होंगी, पहले यहाँ सुनाइए, फिर हम जिसको-जिसको कहेंगे, उसको-उसको आप बतलाइए, तालीम कमरे में जाइए।

और विद्यार्थी कौन-कौन होते थे?

यही बतलाया न दादा, अब मैं ही था, और कल्याण दास थे, और बाकी विद्यार्थी जो रहते थे उन लोगों को जो तालीम होती थी, या बाद में तो फ्रितू दास जी और वैसे तो सभी लोग जाते-आते थे, सीखते थे, उस समय में, वो जीवित थे तब।

बैमन जी...

बैमन लाल, वो भी थे।

वैसे आप और कल्याण दास जी को...

हाँ, ज़्यादा तालीम हुई।

सबसे ज़्यादा तालीम हुई?

जी हाँ!

सबसे?

जी हाँ!

सबसे ज़्यादा तालीम आपको हुई?

हुँ, हुँ।

माने जितने गुणी आते थे उन सबसे आपको ज़्यादा तालीम दिलायी गयी?

हाँ, अब मैं खुद कैसे कहूँ?

पंडित जी, एक सवाल था, अभी आपसे बात हो रही थी कि अच्छन महाराज थे एक घराने के, फिर जयलाल जी आए थे, तो ये जब अलग-अलग घराने के लोग सिखाने आते थे, तो सीखने वालों के मन में कोई उलझन तो नहीं होती थी, शैली के फ़र्क होने में?

जी नहीं, जी नहीं, वो तो नोटेशन करने वाले अलग रहते थे और सीखने वाले तो हम ही लोग रहते थे। नोटेशन में कोई-कोई चीज़ भूल ही जाते थे तो बच्चों से, विद्यार्थियों से फिर पूछते थे और फिर उसी हिसाब से सिखाते थे।

नहीं, उनकी शैली के अंतर का आपके सीखने पर प्रभाव पड़ता था?

जी हाँ!

क्या, कैसे प्रभाव पड़ता था?

जैसे 'मोहे छेड़ो नहीं श्याम'। एक छोटा उदाहरण है, तो ये कौन-सा रस है? ये वीर रस है, तो उसी में बतलाते थे वो गुरु लोग।

नहीं तो, मैंने कहा कि वो सीखने में कोई आपको दिक़्क़त थी या...?

कोई उल्झन नहीं पड़ती थी।

सुनिए, पंडित जी आपका सवाल यह था, जैसे अंग विन्यास है, लखनऊ का कुछ है, जयपुर का कुछ और तरह का है, ज़रा-सा फ़र्क है।

तो मैंने कहा नहीं...

तो अब एक ही विद्यार्थी आज अच्छन महाराज से सीखे, कल जयलाल जी से सीखे...

जी।

उनके जैसे टुकड़े पर परन अदा करने का जो तरीक़ा है...

जी।

जिसमें हाथ चलाने का है या...

मैंने बतलाया नहीं पहले आपको, जैसे जयपुर घराना है तो ज़रा सख़्त है, वो कड़ा है, मुलायमियत नहीं है।

नहीं, सीखने वाले विद्यार्थी पर क्या असर होता है?

उसी तरह से सीखते थे।

नहीं, दोनों का एक-दूसरे पर क्या असर आता है, जैसे आज आपने जयलाल जी से सीखा...

हाँ।

एक टुकड़ा या एक गत...

जी हाँ।

तो कल अच्छन महाराज जी से सीखा...

हाँऽऽऽ!

तो उनके चलने में, आपस में जो...

मैं बतलाऊँगा!

उसको कैसे...? बताइए!

अच्छा यही तो बता रहा हूँ, जैसे अब बहुत ही ज़्यादा सहूलियत, मुलायमियत लखनऊ घराने में थी दादा, और सख़्तपना और कड़ा जैसे कि अभी देखिए-'ता थेई, थेई तत्'-कोई झटका तो नहीं है?

नहीं कोई झटका नहीं है?

और उसमें झटका पड़ता है!

अंगों के संचालन में झटका था जयपुर घराने में, और अंगों के भी फ़र्क हैं, लेकिन विद्यार्थियों के... देखिए पूछने का मतलब यह है कि आपने गुरु जी से, जयलाल जी से सीखा, फिर अच्छन महाराज जी आए, आपको सिखाने लगे तो उन दोनों की शैली में जो अंतर है, फ़र्क है, उसमें आपको सीखने में कोई तकलीफ़ होती थी?

जी नहीं, नहीं हुई, नहीं हुई।

लेकिन जिन गुरुओं से आपने कुछ बंदिशें सीखीं, जिनमें आप कहते हैं सख़्ती थी, जिनकी शैली में...

जी!

तो आप जब उन बंदिशों को करते थे तो आपमें वो सख़्ती रहती थी, या लोच आ जाता था, आपके ज़माने में?

बतलाने में दोनों होते थे दादा, गुरु लोग बतला देते थे, तो हो जाते थे।

आप सख़्ती के ढंग से भी प्रस्तुत करते थे और मुलायमियत के ढंग से भी?

जी।

उसी एक चीज़ को?

जी हाँ।

नहीं, मतलब यह है कि मान लीजिए, आज आप यहाँ नाच रहे हैं...

जी!

तो खड़े होने का जो पहला तरीक़ा है, उसमें जयपुर का हाथ एक तरह से चलता है और लखनऊ का हाथ दूसरी तरह से चलता है...

सीखने में कोई उलझन नहीं रहती थी।

सीखने में नहीं, जब आप अदा करते थे, आप जब पोजीशन करते थे...

जी हाँ।

तो किसको आप लेते थे?

दोनों रखते थे, लेकिन ज़्यादा असर यहीं के घराने में हुआ।

लखनऊ के घराने में? लखनऊ का?

जी हाँ, हमारे राजा साहब की बात कह रहे हैं और हम अपनी भी बात कह रहे हैं।

जी।

राजा साहब का कहना यह था कि वहाँ का भी बोल रखना चाहिए, यहाँ का भी बोल रखना चाहिए, अपना-अपना जिसको जो अच्छा लगता है। तो शीशा ऐसा रख देते थे, उसमें देख-देख करके अपने भाव वगैरह सब सुधारते थे। और किसी को ख़राब नहीं बोलते थे, राजा साहब हमारे।

बोल, परन में तांडव अंग ज़्यादा है कहके वो जयपुर घराने को ज़्यादा इज़्ज़त-मान देते थे। ताल-मात्रा वगैरह में गणित का भी...

अच्छन महाराज केवल।

भाव के अंग में लखनऊ घराने के सिवा दूसरे घराने को कभी पसंद नहीं करते थे। इसलिए आप लोगों को बैठाकर के भाव, अंगों का संचालन अलग-अलग ढंग से बतलाते थे और बोलों का निकास उन घरानों से कराते थे।

अच्छा, जो ख़ास अच्छा मालूम पड़ता था, जैसे–बोल की रचना है तत थई..., लेकिन इसमें कुछ वज़नदारी आयी है, तांडव अंग आया है। इसलिए इन बोलों को ज़्यादा महत्व देते थे। इस तरीक़े से वज़नदार बोलों पर नाच का प्रभाव पड़ेगा, कहके वो तांडव अंग मानकर जयपुर घराने को इज़्ज़त देते थे, लयकारी में वो भाव, सहूलियत, चलना-फिरना, निकास ठाठ, इसमें लखनऊ घराने को इज़्ज़त देते थे। दोनों का मिश्रण करते थे। जी, यही बात थी? दोनों का मिश्रण करते थे?

दोनों का मिश्रण करते थे।

जी यही बात थी? हाँ तो फिर आप...

सीखने में कोई प्रभाव, कोई कठिनता नहीं पड़ती थी, क्योंकि वो तो राजा साहब, जैसे आप बैठे हैं, वैसे ही...

मतलब यह कि अंग विन्यास जो है, हाथों का संचालन, वो लखनऊ से ज़्यादा प्रभावित था?

जी हाँ, वो ही तो बताया मैंने।

वैसे तैयारी-से नाचते थे वो जयपुर के घराने में? भ्रमरी?

भ्रमरी वगैरह। अब ख़ास बोल परन नाचना है, जैसे-परन पखावज की हैं और अन्य चीज़ें तबले की हैं। मिले हुए नृत्य की भी कुछ बहुत-सी परन अलग-अलग हैं, तो निकास की शैली भी उनकी अलग-अलग हैं।

अलग-अलग!

तो एक प्रकार से निकास यह भी हो गया। अब हर तरह से अंगों का संचालन, हर बोल में एक बोल का 'ता थई थई तत्' तो चार अक्षर से मतलब दुगुना में होगा। किस प्रकार से होगा, ऐसा वहाँ उसका एक-एक ठोस भाव था। अब वैसे अंगों का संचालन 'दिग...थेई' ये जा रहे हैं, लेकिन हाथ चलेगा। अब 'दिग...' का कुछ रूप है। यही आजकल की शैली और उन गुरुओं की शैली में बहुत अंतर हो गया है, जैसे-बोल 'तक धीक...'। जब मुझे वहाँ आठ साल की उम्र में राजा साहब ने दीक्षा दिलाई, पिताजी मुझको सिखाते थे। महाराज के पास ले गए तो बड़ा पसंद आया उनको। बोले-अच्छा है, इसको भी तैयार करेंगे।

जयलाल महाराज जी को बुला लिया। फिर बोला निकासी के लिए उन्होंने, अपनी रचना की हुई बोलों को इनको सिखाइए आप। पहले तो आपने अपने बोल बहुत सिखा दिए, लेकिन साथ-साथ हमारे बोलों को भी सिखाइए। 'क त त ई...' आमद रात को नोट करके दी, सवेरे याद कराके गुरु के पास उन्हीं के सामने अंग भाव से निकलवा रहे हैं। राजा साहब जयलाल महाराज जी को ज़्यादा इज़्ज़त देते थे और बाकी तो उनके ज़माने में मैं नहीं था, लेकिन वहाँ यह चर्चा थी। बाकी तो उनकी मनमानी थी। भाव के काम को महाराज जी को देते थे।

वो तो आपने स्पष्ट कह दिया। ऐसा था वहाँ !

अच्छा, एक बात और, महाराज अपने सामने ही सिखवाते थे। राजा साहब भी भाव वगैरह बनाते थे, बतलाते थे। महाराज ने कोई ख़ास प्रणाली बनाई थी नृत्य प्रदर्शन की? मतलब महाराज ने इतना सारा काम किया, तो उसके प्रदर्शन के कुछ नियम भी बनाए थे?

जी हाँ, वो बना लेते थे।

नहीं, जैसे आपको महाराज कहीं ले गए...

जी!

जहाँ पर आपको नाचने के लिए कहा तो शुरू कैसे करते थे? रंग-मंच पूजा कुछ होती थी या मंच पूजन?

जी हाँ, जैसे सरस्वती की पूजा हुई...

पहले गाने पर...?

पहले ही शुरू में, मंच पर पहुँचने के समय...

जी, कौन-सा गाना होता था सरस्वती पूजा पर?

यही स्तुति चलती थी।

कौन-सी? कोई याद है आपको?

सरस्वती स्तुति प्रस्तुत कर सुनाते हैं।

या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता।
या वीणावरदण्डमण्डितकरा या श्वेतपद्मासना॥
या ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता।
सा मां पातु सरस्वति भगवती निःशेषजाड्यापहा॥

यही महाराज ने पसंद किया था?

यह शुरुआत में, फिर उसके बाद फूल छोड़ने के बाद में शुरू हो जाते थे आमद।

अच्छा, वैसे फूल आप चढ़ाते थे?

जी हाँ, जी हाँ!

सरस्वती वंदना में फूल आप चढ़ाते थे?

जी हाँ।

यही जानना था।

यही नियम रहते थे।

हाथ में फूल रहते थे, मतलब जो है एक्शन से...

जी हाँ, जी हाँ और फिर उसके बाद में, आमद शुरू करते थे। ठाठ वगैरह, सब लोच वगैरह, हर किस्म के दिखाकर के...

कसम-मसक जो होता है वो सब होता था?

जी हाँ। कसक-मसक तो उसमें भी कलाइयों से निकलता है-'कत धी...', जी हाँ अभिनय यह भी चलता था।

गरदन की डोरी...

यह भी चलता है साथ-साथ उसके।

जी।

अच्छा, कसक-मसक के बाद उसमें अंदाज़ हर किस्म के होते थे। जी, एक तो ऐसे ही बैठ के हो गया, एक खड़े हो के हो गया, माने हर किस्म की मुद्रा।

अंदाज़ का नंबर कौन-सा आता था?

उसका हाथ नहीं उड़ता था।

नहीं, सरस्वती वंदना हुई, उसके बाद...

हाँ, यह खाली दिखावट के लिए, अंदाज़, ख़ूबसूरती।

नहीं, ये नंबर से पूछ रहा हूँ? क्रम पूछ रहे हैं, क्रम कैसे आता था? पहले सरस्वती वंदना, उसके बाद आमद, उसके बाद?

जी, फिर परन वगैरह सब नाच।

नहीं, नहीं-नहीं। उसके बाद क्रम से जैसे अंदाज़ कहाँ पर आता था?

अब नाच पहले शुरुआत ही है।

अच्छा?

जी हाँ।

ठाठ ?

ठाठ तो ये हो गए।
(करके दिखाते हैं....)

ठीक है। इसके बाद क्या करते थे आप? ठाठ वगैरह बनने के बाद?

आमद।

आमद के बाद फिर?

फिर चाल।

चाल, अच्छा।

जी, उसके बाद में चक्करदार, उसके बाद में गत, टुकड़ा, उसके बाद में...

लय जब बढ़ा के...

लय बढ़ने पर, उसके बाद में गतियाँ चलते थे। शृंगार रस चलता था, वीर रस चलता था, पिचकारी की चलती थी गतियाँ।

अच्छा।

गुलाल की भी गतियाँ चलती थीं, यही सब नाचना पड़ता था, चालों, फिर हर किस्म की चाल वगैरह सभी चलने पड़ते थे।

आख़िर में?

आख़िर में फिर बढ़ जाती थी लय, फिर उसी अंदाज़ से टुकड़ा, परन वगैरह सब नाचते जाते थे।

ख़त्म कहाँ होता था?

ख़त्म आख़िरी में होता था।

वो किस पर? लय क्या रहती थी?

(बोल सुनाकर) यहाँ भी रेला जाते थे हम लोग और तबला भी जाता था रेला में ही... जिसको जैसा सिखलाया जाता था, वैसे ही रेला जाते थे। फिर बंद कर दिया वहीं।

अच्छा, वहीं बंद कर दिया?

जी हाँ।

और तत्कार?

तत्कार और प्रकार सब बीच में करते थे।

बीच में करते थे?

हाँ।

जैसे आजकल बीच में होता है?

बीच में माने प्रोग्राम के बीच में, हाँ।

नाचते-नाचते तत्कार भी हो जाता था?

जैसे-जैसे लय देते थे, दादा।

माने अभी के जैसा तत्कार आख़िरी में करके उसको ख़त्म कर देते थे।

वो तो ऐसे ही...

रेला से ख़त्म होता था?

ये उमंग जिसको कहते हैं, उमंग जैसे-जैसे गुरु लोग सिखा देते हैं, उसी उमंग में फिर नाचना पड़ता है, लय देख करके। 'धाक धिं...' (बोलकर बताते हैं)। अब उसी के बीच में गतियाँ जाते हैं, चाल-चलन ये सब, आरोह-अवरोह।

लयों को जिस तरह विलंबित, मध्य, द्रुत माना गया है, इसी प्रकार से नृत्य की शैली में भी विलंबित से शुरू होकर अंत में वो...

ये नमूना है सिर्फ़, नाच तो जिन ठाठों से होता है, देखिए वो नाम मैं भूल जा रहा हूँ, लड़की है नाची है कल...

लच्छू महाराज जी की, जिन्होंने थी...

हाँ, हाँ, हाँ।

कपिला जी।

जो कुछ भी नाची हैं, बिचारी अच्छा नाची हैं और फिर वैसे ही साजिंदे होने चाहिए, घुंघरू होना चाहिए। यह नहीं कि ऐसे ही 'आप रूप भोजन, पर रूप श्रृंगार'। हमको अच्छा लगेगा तो सभी को अच्छा लगेगा, हमको अच्छा नहीं लगेगा तो किसी को क्या अच्छा लगेगा? तो झलक, नमूना जैसे कल सुना दिया।

हुँ, जी।

ये सब सुंदर सज-धज से किया जाता है। अच्छा नाची वो लड़की, सुंदर।

पंडित जी, आप लोगों की वेश-भूषा क्या होती थी, वस्त्र क्या पहनते थे आप?

पहले शुरू में?

जब आप प्रदर्शन करते थे।

हाँ, वो गिरारेदार पाजामा।

हुँ, गिरारेदार?

जी हाँ! फिर उसके बाद में अचकन और टोपियाँ और वो दुपट्टा। पहले शुरू में अच्छन महाराज थे तब। तब से अब बहुत बदल गया। अब चूड़ीदार पाजामा पहन लेते हैं, कुर्ता पहन लेते हैं ज़री का, दुपट्टा ले लिया। अब ऐसे सब बदल गया।

शंभु महाराज तो दोनों पहनते थे?

जी हाँ, दोनों पहनते थे उस वक़्त।

लेकिन अच्छन महाराज?

आप भी पहनते थे वही अचकन, ज़री का।

नहीं, पाजामे की बात कर रहा हूँ?

हाँ, गिरारेदार ज्यादा पहनते थे वो, बड़ा-बड़ा ढीला पाजामा, फिर बाद में चूड़ीदार भी पहनने लग गए। अब और बदल गया। खाली धोती ही पहन ली। नाच लिए, बस तिलकधारी लगाकर। आजकल की बात...

उस ज़माने में ऊपर के शरीर को नग्न नहीं रखते थे?

जी नहीं, टोपियाँ रहती थीं उस ज़माने में, साफ़ा भी बाँध लेते थे। झंडा ख़ाँ, शिवलाल, मोहनलाल, ये सब वहाँ जाते-आते थे। ऐसे ही पहनावे थे पहले।

जयपुर वाले साफ़ा लगाते थे सिर पर?

जी हाँ, ऐसा था दादा। अब सब बदल गया है।

साभार : संगीत नाटक अकादेमी अभिलेखागार में संरक्षित रेकॉर्डिंग से प्रस्तुत। तिथि : 31.03.1978, समयावधि : 18 मिनट, 18 सेकेण्ड, टेप-संख्या : 2059 (ए)।

गुरु कार्तिक राम : (1910-1980) जयपुर कथक घराने के वरिष्ठ कथक नर्तक। विभिन्न कालखण्डों में आपकी नृत्य की तालीम कई स्वनामधन्य गुरूओं के माध्यम से सम्पन्न हुई, जिनमें शिवनारायण, जयलाल जी महाराज, अच्छन महाराज, शिवलाल और मोहनलाल के नाम प्रमुख हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के तीस के दशक में आपने कई महत्त्वपूर्ण अखिल भारतीय संगीत सम्मेलनों में शिरकत की। बाद के वर्षों में एक मूर्धन्य नृत्यकार के रूप में आपकी प्रस्तुतियों को काफ़ी प्रसिद्धि मिली।

गोविन्द विद्यार्थी : (1912-2006) केन्द्रीय संगीत नाटक अकादेमी, नयी दिल्ली से सम्बद्ध रहे और इसी संस्था के सहायक सचिव के रूप में सेवानिवृत्त हुए। विद्यार्थी जी एक ऐसे गुणी कलाकार थे, जिन्होंने फोटोग्राफी और अभिलेखों के संग्रहण में दक्षता हासिल की थी। एक रंगकर्मी और सक्रिय रूप से राजनीतिक विचारक के तौर पर विख्यात गोविन्द विद्यार्थी जी ने अपने आरम्भिक जीवन में प्रगतिशीलों का साथ पाया, जिसमें सज्जाद जहीर और कैफ़ी आजमी के नाम प्रमुख हैं। आपने जवाहरलाल नेहरू मणिपुर डांस एकेडमी, इम्फाल और कथक केन्द्र दिल्ली के निदेशक के तौर पर भी अपनी सेवाएँ दी हैं। उनकी स्मृति में उनके पुत्र व थियेटर और फ़िल्मों के अभिनेता आशीष विद्यार्थी ने 'विद्यार्थी सम्मान' की स्थापना 2007 में की है।

नृत्य तो अंग-प्रत्यंग का होना चाहिए...

सितारा देवी से राजेन्द्र गंगानी की बातचीत

कोई ऐसी बन्दिश बताइए जिससे बनारस परम्परा के कथक की पहचान होती है?

ऐसा है कथक कहते हैं नृत्य को। कथक एक जाति है। जैसे कि हम कलाकार लोग हैं, कथक हैं। कथक बना है कथा से, जैसे मन्दिरों में कथा बाँचते थे, लेकिन वह कथक क्यों बना? जो महाराज लोग वाजिद अली शाह के दरबार में गये। वाजिद अली शाह ने जब यह नृत्य देखा तो वह बोले यह नृत्य तो मुस्लिम में नहीं चलेगा। उन्होंने कहा कि कुछ मुस्लिम का नृत्य बताइये। वे परेशान हो गये, फिर उन्होंने आहिस्ता-आहिस्ता इसे बनाना शुरू किया। इस तरह से वह कथक नृत्य हो गया। एक तरह से कहें तो कथक जाति को उन्होंने कथक नृत्य बना दिया। वास्तविकता यह है कि कथा के बिना नृत्य होता ही नहीं। यह एक तकनीकी चीज़ है। यह बहुत ज़रूरी भी है। भगवान की कथा कोई गाता है, कृष्ण जी की कथा जैसे कोई गाता है तो राम की कथा नृत्य करके बताओ, परन भी करते हैं, लेकिन जब नाचते हैं तो नाचो।

सितारा देवी

एक और बात, जो बुज़ुर्ग रहे हैं, उन्होंने कथा को बोलों में जोड़ कर कविता कैसे बना दिया?

मेरे पिता सुखदेव महाराज जी, जो मेरे गुरु भी थे। महाराज जी ने लखनऊ का नृत्य देखा, राजस्थान का नृत्य देखा। इसके अलावा और भी कई क़िस्म के नृत्य देखे तो उन्होंने सोचा कि हम भी कुछ नयी तरह की चीज़ बनायेंगे।

अब नयी चीज़ क्या? उन्होंने इस पर लिखना शुरू किया। लिखना क्या लिखना, जैसे काली परन है, दुर्गा परन है, राम परन है तो वह एक चीज़ जो शास्त्रीय होती है, उन्होंने कहा कि हमने इसको इस तरह बनाया है, इस पर नृत्य करना है, तो यह कथा हो गया।

एक कथा हो जाए, सुना दीजिए?

कथा कई प्रकार की होती है, जैसे-ताण्डव है, नटवरी है तो बोलो कौन-सा सुनाएं?

शिव का सुना दीजिए कुछ?

हां, धिन धिन धाना...बम बम बम ....यह तो पिता जी ने लिखा। ऐसे बहुत-से हैं। काली जी का बहुत-सा है। उसी से हम सब लोगों ने नृत्य करना शुरू किया। सीखते समय बड़ी मार खायी। लोगों के ऐतराज़ भी सुने। उस समय लोग लड़कियों के नृत्य करने को अच्छी निगाह से नहीं देखते थे। जब पिताजी सिखाते थे तो लोग उस पर भी ऐतराज़ करते थे। लोगों ने नृत्य सिखाने पर अपनी नाराज़गी दिखायी, ऐतराज़ किया और पिताजी से कहा कि तुम अपनी लड़कियों को यह नृत्य क्यों सिखा रहे हो? पिता जी ने भी कहा कि ये जितनी भी चीज़ें मैंने लिखी हैं, इन पर अगर नृत्य नहीं होगा तो कथा भी शेरो-शायरी आदि जैसी हो जाएगी। हम चाहते हैं कि नयी चीज़ बनाएं। मगर वह बोले-क्या भइया, राम जी के बोल पर ऐसे नृत्य नहीं होना चाहिए? पिता जी भी बड़े वाक्पटु, वह बोले-यह भी ठीक कहा आपने, लेकिन रामलीला हम कैसे मनाते हैं, वह कैसे होती है? फिर बताया कि एक बच्चा राम बनता है, वह बताता है कि धनुष कैसे चल रहा है, कौन चला रहा है, क्या-क्या हो रहा है। यह चल रहा है, वह चल रहा है। उसके सम्वाद सब हाल बताते हैं तो क्या यह भी नहीं करना चाहिए? वह बोले-हां, बिल्कुल करना चाहिए, अच्छा ठीक है। फिर उन्होंने दुर्गा परन देखी और काली जी की परन देखी। भई, अगर कोई नहीं डांटता, बोलता तो अच्छा है। कोई नचइया है, कलाकार है तो इसलिए तो पिता जी ने यह चीज़ बनायी।

कितनी सुन्दर बनायी?

हां, लेकिन उस समय आज की तरह लड़कियां नृत्य नहीं करती थीं। इसे ग़लत समझा जाता था। घुंघरू बजा तो मुहल्ले में, बिरादरी में सभी लोग बोले कि घुंघरू कहाँ बजा? घुंघरू कैसे बज रहा है तो सुनते, पूछते लोग हमारे घर आये। किसी ने जाकर बोला था कि सुखदेव महाराज जी के यहाँ घुंघरू बजा है, तो वे लोग आये, पिताजी को कहने लगे, यह क्या कर रहा है तू? पिताजी भी बोले-देख लीजिए, क्या कर रहे हैं। अच्छी बात ही कर रहे हैं। जो लिखा है, उसी पर हम नृत्य कर रहे हैं। अब काली जी ने सबको किस तरह से मारा, युद्ध किया। यह किया, वह किया। तो वे लोग बोले कि ठीक है तुमने जो लिखा है, लेकिन यहाँ नृत्य नहीं कर सकते। कहा-अच्छा, नृत्य क्यों नहीं कर सकते? बोले-नहीं, इस मुहल्ले में तो बिल्कुल नहीं। इसके लिए कबीरचौरा है। अगर तुम्हें बच्चों को नृत्य सिखाना ही है तो यहाँ से मकान ख़ाली करो, इस मुहल्ले से निकलो, जाओ। कोई बोला, 'क्या करत है दुष्ट कहीं का, (हम सबकी तरफ़ इशारा करके) इनको नहीं नचायेगा तो क्या खाना नहीं मिलेगा?' पिताजी बोले खाने के लिए थोड़े ही यह सब कर रहे हैं। हम इस कला का प्रचार करना चाहते हैं। हम कला के लिए ही यह सब कुछ कर रहे हैं। अभी जो नृत्य है। ठीक है, वह बहुत क़िस्म

का नृत्य है, लेकिन जो नृत्य हमने बनाया है, वह कविता के ऊपर बनाया है। जैसे ग़ज़ल होती है। उसमें भाव होता है, उसी तरह से यह है। तो वह आगे बढ़े। फिर एक दरगाई महाराज थे, उन्होंने पिताजी को मारा। बुज़ुर्ग थे कोई 99 साल के। उन्होंने पिताजी की कोई बात नहीं सुनी और कहा–नहीं, इन बच्चों को तुम नृत्य सिखाना बन्द करो। मुहल्ले में सब लोग कहते हैं कि ये तवायफ़ें हैं। पिताजी बोले कि कहने दीजिए।

अब तवायफ़ें भी बेचारी हैं तो वे भी इंसान ही। अच्छा, पहले की तवायफ़ें नृत्य नहीं करती थीं। गाती थीं, कभी-कभार ठुमकती भी थीं।

अच्छा, तवायफ़ों में नृत्य नहीं होता था?

नृत्य नहीं होता था। बस यूँ ही ज़रा यूँ-यूँ करके (हाथ से नृत्य की मुद्रा दिखाकर) नृत्य और गायन एक साथ इसलिए भी नहीं किया जा सकता, क्योंकि नृत्य से आवाज़ ख़राब हो जाती है। अगर रियाज़ न करो तो यह गले की नसें नाच-नाच कर मोटी पड़ जाती हैं। ऐसे में जो एक मीठी-सी आवाज़ है, उस पर नृत्य अटैक करता है, इसलिए बनारस में कोई भी तवायफ़ नृत्य नहीं करती। हाँ, किसी ने फ़रमाइश करके कहा कि इस पर ज़रा कुछ करके दिखाइए तो बस खड़ी हो गयीं, ज़रा-सा नखरा किया, यूँ घूम गयीं बस। यही नृत्य होता था उनका।

आपने देखा था तवायफ़ों के नृत्य को?

हम लोग छोटे-छोटे थे। पिता जी जाते थे, तो हम लोग भी उनके साथ जाते थे। वह किताब लिखी है न, सुनील कोठारी क्या नाम है उसका। कथक नृत्य पर। क्या लिखा है। अच्छा एक तोड़ा लिखा है। कौन-सा थिया है ही नहीं।

थिया नहीं लगाया उसमें?

देखिये, यह किताब लिखना कोई, आज ये सब लोग (दर्शक दीर्घा में बैठे लोगों की ओर हाथ से इशारा करते हुए) किसी भी उस शख़्सियत पर किताब लिख सकते हैं, जिसको इन्होंने देखा हो कि हमने उनको देखा नाचते हुए, वह बहुत अच्छी थीं, उनका कार्यक्रम उस शहर में देखा। यह सब तो कोई भी लिख सकता है। इसमें नृत्य है क्या, बताओ? ठीक है न। जो नृत्य सीखता नहीं है, वह नृत्य लिख नहीं सकता है, यह बिल्कुल ग़लत है। आज तक कोई भी किताब कथक पर लिखी ही नहीं गयी है।

मुझे भी ऐसा लगता है आज तक ऐसा क्यों हुआ? क्यों कथक पर किताब नहीं आयी? या कई लोग मानते नहीं हैं, क्योंकि शायद उसकी पूरी स्टडी नहीं हुई है मेरे हिसाब से?

वे उनको नहीं मानते, हम उनको नहीं मानते। अरे वाह! यह कितनी अच्छी चीज़ बनायी है कथक। अगर यह अच्छा नहीं होता तो लोग खूब तालियाँ देते? आज यह ऐसा बनाने से सारी लड़कियाँ नृत्य कर रही हैं। यानी जो घर-गृहस्थी में हैं वे भी या फिर किसी अफ़सर, कमिश्नर की लड़की हो या डीआईजी की, सब नृत्य कर रही हैं। अगर नृत्य अच्छी बात नहीं होती तो सब क्यों नृत्य करतीं। अगर हम मुजरा करते तो लोग हमको क्या बोलते? इसलिए मैंने दूर जाकर सिखाना शुरू किया। हमारी पीढ़ी देखो बहुत लम्बी है जैसे कि

तुम लोगों की होगी (राजेन्द्र गंगानी से मुख़ातिब होकर)। हम तो नहीं जानते। जैसे हमारे परदादा थे प्रीतम महाराज। फिर उनके लड़के और फिर उनके पुत्र हुए सुखदेव महाराज। महाराज का यह सब लिखना और फिर नृत्य सिखाना बच्चों को। फिर इसके बाद हमारी बड़ी दीदी के बच्चे, वे भी नृत्य करते हैं। फिर उनका लड़का हुआ कृष्णा तो वह भी नृत्य करने लगा। अब यह बच्चा जो बैठा है (सामने बैठे अपने परिवार की ओर संकेत करते हुए), वह भी नृत्य करता है। इस तरह से एक पूरा ख़ानदान संगीत की इस परम्परा को निभा रहा है और कई पीढ़ियों से नृत्य किया जा रहा है।

सात पीढ़ी?

हाँ, जैसे तुम लोगों की पीढ़ियाँ हैं, महाराज जी लोगों की हैं। आजकल यह जो वर्कशॉप हो रहा है, इससे क्या दो दिन में नृत्य आ जाएगा?

नहीं, वर्कशॉप में नृत्य से सम्बन्धित जानकारी तो दे सकते हैं, पर पूरा नृत्य तो नहीं करा सकते, चन्द दिन में पूरी शिक्षा नहीं दे सकते।

हाँ, बच्चों को यह बताओ कि यह बोल कहाँ से आय़ा, वह वहाँ से आया, यह मृदंग से आया है, यह तबले का बोल है, यह नगाड़े का बोल है। तब उन्हें शिक्षा देनी चाहिए, लेक्चर देना चाहिए। पर उसमें सिखाइए।

सिखाना तो सम्भव नहीं है इतने कम समय में। कैसे हो सकता है?

हम भईया, बहुत देखते आये हैं। बस वही धा, धिना धिना धिना, धनननन फिर ख़त्म। वह भी बच्चियाँ। पीढ़ी बनती है सात पीढ़ियों के बाद। तीन पीढ़ी तो चलो ठीक है कि हां, भई वह भी करता है, वह भी कर रहा है। तीसरी के बाद चौथा आता है और कहता है कि परम्परा शुरू। जो बाप, दादा, परदादा करते थे, अभी तुम कर रहे हो। इसी तरह से हम लोग कर रहे हैं, समझे न।

यहीं खड़े होकर नृत्य करने लगे। नृत्य है, उसकी मुद्राएं हैं, उसके क़ानून हैं, तरीक़े हैं–सब कुछ हैं। नृत्य करते हुए हाथ किस तरह से उठा तो कैसे होना चाहिए, किस तरह से इधर को गया, यूँ गया, अब घूम रहे हैं यूँ...(बैठकर नृत्य की मुद्रा करके दिखाते-समझाते हुए)। तोड़ा लिया जैसे, फिर से धुम-धुम बजा। देखो, कहते हैं कि धा तनिक तिक धा हो सकता है। बॉडी ऐसी मुद्रा में होनी चाहिए। अब नृत्य में भाव करके बताओगे। अरे वही ग़ज़ल गाओ न! (गायक की तरफ़ कहते हुए)। ग़ज़ल के बोल हैं–

कितनी मुद्दत बाद मिले हो,
किन सोचों में गुम रहते हो...

अब यह ग़ज़ल में जो शब्द हैं, इनका जो मतलब है, उसे नृत्य में भाव के ज़रिये व्यक्त करना बहुत मुश्किल है। भजन में तुम जो भी प्रेम में कर लो, वह सही है। मतलब यह ज़रूरी नहीं कि उसमें नृत्य मुद्राओं का ध्यान रखा जाए, भाव का ध्यान रखा जाए। भक्त अपने में मस्त है तो वह नाचेगा। मगर ग़ज़ल पर नृत्य कर रहे हो तो पहले ग़ज़ल के शब्दों के मायने समझो।

उसका मतलब क्या है, शेर क्या है, पहले समझना होगा?

ज़रा फिर से ग़ज़ल शुरू कीजिए (गायक से कहते हुए)।

कितनी मुद्दत बाद मिले हो,
किन सोचों में गुम रहते हो...

(ग़ज़ल के कई अशआर पर चेहरे द्वारा भावपूर्ण नृत्य समझाते हुए)।

बड़ी गहरी समझ चाहिए इस अर्थ को समझने और इसके भाव को नृत्य में पेश करने के लिए?

जो बच्चा छात्र है उसको समझाइए। समझा के फिर गाना बन्द। उनको करके बताइए कि किस तरह से होता है। अब यह टोटे-टुकड़े वर्कशॉप कोई वर्कशॉप है। नृत्य की मुद्रा करके दिखाओ, गायन अब यह सब तो होता ही है। जो तकनीकी चीज़ है वह ज़रूरी है, क्योंकि मेरे लिए क्लाइमेक्स का सीन नहीं बनता तो यह एक क्लाइमेक्स है, एक फुटवर्क है, समझे? लयकारी मुश्किल है। अब बच्चों को सिर्फ़ ना धिन धिन्ना...! कमाल है, ख़ाली में सम रखा है, यह तो आ जाएगा। भई देखो, गुरुओं की अपनी एक खोज है। तो हम यह कह रहे हैं कि सिवाय ना धिन धिन्ना के और कुछ बच्चा नाचता ही नहीं। अरे, झपताल पर नाचो, धमाल पर नाचो। यह सब भी तो बताओ, बच्चों को समझाना चाहिए; पर नहीं बताते हैं। मैंने तो नहीं देखा। यह ऐसी वर्कशॉप होती है।

अब तीन-चार दिन के अन्दर तालों को समझना, इन्हें समझने के लिए पर्याप्त समय नहीं है?

हमें बुलाया कलकत्ता से वर्कशॉप के लिए। मैंने कहा–मेरा नृत्य ऐसा नहीं है कि दो-चार दिन की वर्कशॉप में तुम नृत्य करने लगोगे। हमको मत बुलाओ। इतने साल सीखा है हमने, रियाज़ किया है। तब इतना सीखने के बाद अब बच्चा लोग हमारे पैर छूते हैं। 70-80 साल से नृत्य कर रही हूं, क़रीब पाँच-छः साल की उम्र से। बचपन में हमें जब महाराज जी सिखाते थे और हम रियाज़ नहीं करते थे तो पिता जी एक सोटी रखते थे, उसे हमारे पैरों पर मारते थे। ऐसे करो, वैसा करो (सोटी मारने का इशारा करके बताते हुए)। तब कहीं नृत्य आता है। ऐसे थोड़े ही कि बैठे-बैठे ही सिखा दिये। मैं नहीं करती ऐसा। मैं किसी को इस तरह सिखाती भी नहीं। अब इतनी उम्र में, इतने समय बाद मेरे सीखने वाले मुश्किल से 6 बच्चे हैं। इनमें से किसी को चार साल हुए हैं सीखते हुए, किसी को पाँच साल। अब इतने समय बाद मैंने उनको झपटाना शुरू किया है। बच्चियाँ हैं छोटी-छोटी। कहती हैं, 'गुरुजी, यह कैसे होगा?' अरे, मैंने कहा, 'धिना धी धी...' तो बोलीं कि नहीं आता। मैंने कहा, 'तो ऐसे कर धी ना, धी धी ना, धी ना, यह नम्बर याद रख।' फिर इस तरह से आ गया उन लोगों को। बस सीखते समय ताल में ज़रा गड़बड़ करती हैं, ताल भूल जाती हैं। सभी बच्चे छोटे हैं। कोई बच्चा आठ-नौ साल का है, कोई छः साल का है, कोई लड़की ग्यारह साल की है। सीखने वाले कितने आये-गये, उनको मुश्किल लगा। मगर माँ-बाप अक्सर कहते हैं कि आपको ही सिखाना है,

भले ही कितनी मुश्किल हो। यहीं सीखेंगे। उनको मालूम है क़द्र कि उनकी बच्चियाँ सितारा देवी के यहाँ सीख रही हैं। इतने सालों से वे लोग नृत्य कर रहे हैं, सीख रहे हैं तो हमारे बच्चे कुछ तो होंगे और मैं इतना डांटती हूँ, बुरा नहीं लगता उन बच्चों को।

नहीं, आपकी डांट तो आशीर्वाद है?

वे बच्चे हैं। उनके लिए मैंने टॉफी ला कर रखी हैं, हाज़्मोला रखी हैं। बच्चे कहते हैं–गुरुजी, यह हम ले लें? हमने कहा, ले लो। बच्चे इस तरह ख़ुश रहते हैं। बच्चों को प्यार भी करती हूँ, डांटती भी हूँ कभी-कभी। तो यह जो परम्परा की बात हो रही थी, इसी तरह यह परम्परा चल रही है। यह एक तरह से गवइये का घर है। जैसे हमारे दादा, परदादा, पिताजी ये सब जो भी हैं, ये पहले गाना सीखे हैं। नेपाल स्टेट में हमारे दादा थे, पिता जी जब पैदा हुए। जब थोड़े बड़े हुए तो वह पिताजी को वहाँ लेकर आते-जाते थे। तब सुनते थे सबको। बिन्दादीन महाराज को उन्होंने बुढ़ापे में देखा। सब उस्तादों का उन्होंने गाना सुना। सबसे पहले ध्रुपद, धमार निकला बताते हैं तुम्हें। जैसे ठुमरी है, कजरी है, चैती है, फोक है। तुमने देखा, कल हम थोड़ा फोक नृत्य किये थे (राजेन्द्र गंगानी जी से कहते हुए)। मेरा मानना है कि नृत्य में थोड़ा-सा फोक भी होना चाहिए। अब जैसे तुम सब्ज़ी बनाते हो, उसमें थोड़ा नमक डालते हो, तो वह और स्वादिष्ट हो जाती है। अरे, तो फोक भी मिलाओ नृत्य में। है कि नहीं? लयकारी तो है ही। सब कुछ है, सब कुछ। जैसे खाने में स्वाद बढ़ाने के लिए चटनी, थोड़ा दही, रायता हो तो क्या बात है। इसी तरह नृत्य है। अब श्रृंगार रस किसको बोलते हो तुम। श्रृंगार रस का मतलब श्रृंगार नहीं करना है। इसका मतलब है प्रेम। जैसा प्रेम मियाँ-बीवी में होता है, या प्रेमी युगल हों। जब युगल प्रेम करते हैं तो इसका मतलब है श्रृंगार रस। अब प्रेम कहे तो कई तरह का होता है। कोई पूछे तो यह बताओ उसको कि भाई से प्रेम, माँ से प्रेम, पिताजी से प्रेम, पति से प्रेम, सबके प्रेम का अलग-अलग भाव है। चेहरे से अलग भाव आना चाहिए और लगे कि वे मेरे माता-पिता हैं, यह मेरा प्रेमी है। हाय-हाय क्या बात है (हँसी का ठहाका लगाकर)।

इसी से जुड़ा आपसे एक सवाल पूछना है। किस उम्र से आपने ख़ुद को अभिनय से जोड़ा, क्योंकि अभिनय समझ भी तो आना चाहिए। उस समय जब गुरु लोग जिस उम्र से सिखाना शुरू करते थे, उस हिसाब से आज आपको कैसा लगता है कि कितनी उम्र से सीखना चाहिए? सीखना तो ताउम्र है, मगर आपके मुताबिक इसमें कितना समय लगना चाहिए? जब हम सीखते थे तो गुरुजी कहते थे कि जाओ तत्कार करो, तोड़ा करो, यह वाली परन याद करो, लेकिन यह ठुमरी से सिखाना शुरू नहीं किये थे, बोले-पहले समझो?

नहीं, क्यों? यह तुम्हारे जयपुर का सिखाने का तरीक़ा है। सोचो वे लोग कितना त्याग किये हैं, दृढ़ हैं, बहादुर हैं तो उनका नृत्य भी इसी क़िस्म का है। ऐसा है, यह सब भाव नखरे का है, हठ का है सब। मगर कुछ लोग कहते थे कि यह रंडियों का नाच है, उनके हिसाब से। तब तो रामायण, मुंडन कुछ नहीं निकला था। वह तो कहेंगे ही। मतलब ठुमरी गाना है, मगर कैसे गाना है, खड़े होकर ठुमकना। तवायफ़ लोग ऐसे-ऐसे करके गाती थीं, फिर थोड़ा आगे को गयीं, ऐसे ठुमक दिया (नृत्य की मुद्रा में समझाते हुए)। ऐसे ही हम कलकत्ते

में नृत्य के एक कार्यक्रम के लिए गये। जैसे ही ठुमरी पर नृत्य शुरू किया, तभी किसी तरफ़ से आवाज़ आयी, 'ये का छे, ये बाईजी का डांस!' मैं बोली–अरे, बाईजी का नृत्य कहाँ है, यह तो पुराना है। वह इसे करती हैं तो क्या इसे करने वाली हर नृत्यांगना बाईजी हो जाएगी। दरअसल, पहले के लोग ऐसा ही सोचते थे। उनका मानना था कि तवायफ़ें ही इस तरह से गाना गाती हैं। गाना, बजाना, नृत्य–यह सब तवायफ़ों के लिए ही है। इसलिए पिताजी ने लिखना शुरू किया और हमसे कहा कि नाचो इस पर। अब लोग क्या बोलेंगे, बोलने दो। काली परन, दुर्गा परन सब पर नृत्य किया। तब जाकर उनकी समझ में आया कि अभिनय ख़ाली यही नहीं है, धर्म का भी है, हर प्रकार का है। अरे, बातचीत का भी है। जैसा माहौल है, जैसा गाना है, वैसा भाव है। हालाँकि यह मुश्किल है।

अच्छा एक चीज़ और बुज़ुर्ग लोग कहते थे। इसको नाम भी दिये उन्होंने, अंग भाव, कर भाव...?

(सवाल पूरा होने से पहले ही बोलते हुए)–हाँ, हाँ, ब्रुअप कहते हैं इसको। नाट्यशास्त्र में लिखा है कि जब तुम नृत्य करते हो तो तुम्हारे अंग-प्रत्यंग का नृत्य होना चाहिए। यही तकनीक है। यह तुम्हारे पास है। तुम (राजेन्द्र गंगानी) जब नृत्य करते हो, हर कोई नहीं कर सकेगा। हम देखे हैं, यह बहुत सुन्दर नृत्य करता है, इसलिए हम इसको बहुत मानते हैं। यह खुशी की बात है कि इतने समय बाद भी इसने अपने आप को मेंटेन रखा है (राजेन्द्र गंगानी की ओर संकेत करते हुए)।

यह तो आपसे ही सीखा है?

कोई नजरिया वाला गीत गा दे...(गायक से कहते हुए)।

गायक : नजरियों से मार-मार हमको बुलावे (सितारा जी नृत्य की मुद्रा में)।

परम्परा में इतना कुछ है। अच्छा, संगीत का घराना कैसे बन गया? बनारस में पहले स्कूल नहीं था। सब अपने-अपने ढंग से नृत्य करते थे, तबला वगैरह सब कुछ था। पिताजी जब लिख रहे थे तो उन्होंने महसूस किया, बोले कि इसमें नृत्य नहीं है। वह सोचते थे कि किस तरह से इस पर नृत्य बनाया जाए। रात को क़रीब दस बजे जब सोते थे तो पहले लिखते थे। दिन में शोर-गुल रहता था। इसलिए रात को बैठकर लिखते थे। पास में लालटेन रख लिया और लिख रहे हैं। एक किताब इस पर हमारे पास है, ग्रन्थ है वह। फिर इसके बाद होता यह था कि वे लोग गा-गाकर नृत्य करते हैं, पढ़ते हैं।

लै छवि दिखरावट
सोलह अंग बनावट, चमक-दमक फेरी तोड़ा पलटा
कसक-मसक थिरकन
थिरकन धुरन-मुरन
छवि अति न्यारी
भृकुटि चंचल नयनबाण।

अब उसको अपनी तरफ़ खींचना है तो इस तरह (आँखों से भावपूर्ण नृत्य संकेत करते हुए),

अलक-झलक सुन्दर नयनबाण,
चपला-सी चमकत....

हसन-दसन (ऐसी मुस्कान जिसमें दाँत दिखें)। हालाँकि मैं अब भूल गयी हूँ बीच-बीच में। दरअसल, अब नृत्य करती नहीं हूँ। यह सारा हमने जो किया है, वह राजस्थान का है। वहाँ सुबह छः बजे उठकर बैठ जाते थे और बैठकर देखते थे कि कोई ग्वालन जा रही है, कोई बहू जा रही है, उसका इतना घूंघट है; यह सब देखते थे। यह सारी चीज़ें राजस्थान से सीखीं। सीखने में बहुत कुर्बानी करनी पड़ती है। महाराज जी का भाव, शम्भू महाराज जी का भाव, हाय-हाय! 'किसी ने चिलमन से मारा नज़ारा मुझे', यह बहुत मशहूर था उनका भाव। पहले वह चिलमन बताते थे, फिर किसी ने चिलमन से मारा बताते थे (भाव नृत्य मुद्रा में)। हम यह सब चीज़ें देखकर सीखे हैं। लखनऊ से लिया है, जयपुर से लिया है और पिताजी ने जो सिखाया है वह तो है ही। तो भैया (राजेन्द्र गंगानी से कहते हुए), तुम बहुत अच्छा नृत्य करते हो, बड़ों की क़द्र करते हो, उनका मान करते हो। भगवान ऐसा किसी को नहीं देता। वह भी सुरीले लोगों को देता है, बेसुरे लोगों को नहीं।

आप लोगों से सुर मिल जाए बस, तपस्या है?

बेटा और पूछो।

कई लोग कहते हैं कि जयपुर, बनारस और लखनऊ-तीनों का भाव अलग है। आपकी दृष्टि में क्या है यह? एक परम्परा से अलग हट कर आज की बात करें तो यह तीनों भाव कैसे मेंटेन हो रहे हैं?

कोई कहता है तो पहले कहना, बता तू कर सकेगा? बस लोग फ़रमाइश कर देते हैं। यह कहने से नहीं होता है। किताब लिखने से भी नहीं होता है। ना धिन धिन्ना, ना धिन धिन्ना तो सभी करते हैं, अब इसमें वैरायटी देखो-

एक दो तीन ना धिन धिन्ना,
एक दो तीन ना धिन धिन्ना,

दादरा हो गया, और भी सब तो था ही था। तो यह सब कहाँ लिखा है?

नहीं, यह सब तो आप ही लोगों से मिलेगा?

भाव यह जो तुम कह रहे हो कि बनारस का क्या, कितना, यह हिस्सा थोड़ा सुना रे, राधा-कृष्ण का (गायक से कहते हुए और इस पर हाथों और चेहरे द्वारा भाव-नृत्य करके दिखाते हुए)। जयपुर जो कहते हो, उसका भाव वीर रस है। जयपुर वाले कहते हैं कि यह ज़नाना वाला नृत्य नहीं चाहिए हमको। यह घूंघट करो, यह नखरा करो, यह करो, वह करो। मैं भी जब वहाँ रहती थी तो पिताजी कहते थे कि यह सब तुम मत करो। अरे, हम लोग वीर हैं, हमारा नृत्य भी वीर है। यह सब नख़रेबाज़ी यह सब नहीं। भक्ति रस। हाँ, इसे मन्दिर

वाला नृत्य बोलिए आज। वह हम करते हैं, लेकिन यह नख़रे वाली औरतों पर ही अच्छा लगता है। हम लोगों को नहीं अच्छा लगता। जैसे तत्कार है। तुमने रोशन कुमारी को देखा है? क्या नृत्य करती थीं! खड़ा तबला, खड़ा पैर से तत्कार करना। मालूम होता था जैसे हज़ारों चने भाड़ में एक साथ भुन रहे हैं, फट फट फट फट...। पिताजी हमसे कहें, देखा इतना रियाज़? हम बोले, बाबा इतनी तैयारी तो हम लोग नहीं कर सकते। यह ऊपर वाले की देन है। उनके जैसा नृत्य करते हुए हमने तो किसी को आज तक नहीं देखा। आज भी नृत्य तो सभी करते हैं, तैयारी भी है, पर वह बात नहीं। उनका एड़ी से चक्कर लगाना। बाल कटे हुए, पाजामा, कुर्ता और इस पर एक ओढ़नी। इसके अलावा श्रृंगार का कुछ पहन ही नहीं सकती थीं वह। कोई आभूषण, कुछ नहीं। जब नृत्य करती थीं तो बस घूमता हुआ कपड़ा ही कपड़ा नज़र आता था। अब बताओ कितना रियाज़ कराया होगा। यहाँ मुम्बई में माधो जी का मन्दिर है, तो उसके ऊपर एक हॉल है, एक कमरा। वहाँ उनके गुरुजी रहते थे। वहीं सिखाते थे उनको। हम भी गये थे वहाँ एक दफ़ा। वहाँ निमन्त्रण देने। मैंने पूछा– दीदी, यह आप जैसा नृत्य हम नहीं कर सकते? बोलीं, बाबूजी ने रियाज़ कराया है। कहने लगीं, क्यों नहीं कर सकती हो। हमें तो बहुत रियाज़ कराते हैं यह। हम बोले, हमें रियाज़ से भी नहीं आयेगा।

नारायण प्रसाद दादा जी को मैंने देखा है। वह थोड़ा भक्ति पर ज़्यादा करते थे?

बहुत नम्र भी थे वह। पूजा-पाठ ज़्यादा करते थे, भक्ति रस में ज़्यादा थे। वह उसमें तोड़ी-टुकड़े भी करते थे, लेकिन उनमें झटक-मटक नहीं था, कोमलता थी। नृत्य करते थे, तैयार थे सब कुछ। यह सब उन्हीं में देखा और किसी में नहीं देखा।

सुन्दर प्रसाद दादा जी भी बहुत तैयारी कराते थे?

शम्भू महाराज भी बहुत तैयारी कराते थे। ज्ञान था उनकी क्लास में। कई बार हम गये, बैठे देखा, छात्रों को सिखा रहे हैं। सख़्ती भी कर रहे हैं, जैसे किसी को समझाया और उसे समझ नहीं आया तो डांटा भी करते थे। कहते, धा धा धा धा कर समझ में नहीं आता तेरे को? हमने कहा–महाराज जी, आप यह कबसे सिखाने लगे? यह तो जयपुर वाले करते हैं। बोले–अरे, सब चीज़ों की ज़रूरत है आजकल। यहाँ सीखने आने वाले बच्चे ख़ुद बोलते हैं कि हमें चक्कर सिखा दो। भई, क्या करें, नौकरी की तरह कर रहे हैं, तो सिखाते हैं।' अच्छा, मुझे अच्छी तरह याद है कि महाराज क़रीब 27 चक्कर मारते थे।

सुना नहीं कभी, आपसे ही सुन रहा हूँ?

अरे, मैं तो पाँच साल की उम्र से उनकी गोद में बैठी हूँ। क़रीब से देखा है उनको। कुछ मोटे थे, पेट भी थुलथुल, पर नृत्य करते समय ऐसा लगता था कि जैसे उनका पेट उनके नृत्य में किसी तरह की बाधा है ही नहीं। पता नहीं, पर नृत्य करते समय उनका पेट नज़र नहीं आता था।

जी, कहते हैं, इतना ही सुन्दर नृत्य करते थे वह?

यह है न कसक-मसक...

जी, थोड़ा-सा उनका अंदाज़ करके दिखा दीजिए?

ना धिन धिन्ना, ना धिन धिन्ना, ना धिन धिन्ना...(नृत्य मुद्रा में बैठकर समझाते हुए)। एक बार की बात है। मैंने कहा लच्छू महाराज जी से, वह अपने छोटे महाराज जी के नृत्य में तो कितनी चमक है। कहें, चमक है, पर लास्य कहाँ है? मैंने भी कहा कि हाँ, लास्य तो है ही नहीं। महाराज जी बोले-फिर लास्य करके दिखा, अपने गुरुओं को बता कि कैसे करना है। फिर मैंने कहा कि महाराज जी, लच्छू महाराज जी तो आपके नृत्य के बारे में कह रहे थे कि आप तो नटवरी करते हैं, लास्य तो करते ही नहीं। कहते हैं, इतनी बड़ी गाली देकर (ठहाका मार कर हँसते हुए) कि उसको बोलो, मैं तवायफ़ों वाला नृत्य नहीं करता। मैंने भी कहा, महाराज जी आप ग़लत बोल रहे हैं। दो ही नृत्य हैं-ताण्डव और लास्य। कहने लगे, अरे मगर नाचती तो वही थीं। मैंने कहा-हाँ, यह अलग बात है, मगर उनका भी तो अधिकार बनता है, लेकिन महाराज है तो यह चीज़। बोले-हाँ-हाँ, होगा। दोनों भाइयों में यूँ (दोनों में आपसी अनबन का इशारा करते हुए) रहती थी। तो बेटा, यह रियाज़ की बातें हैं। हमारे पास किताब एक से बढ़कर एक हैं। बीकानेर से जानकी प्रसाद कब आये, कब नृत्य किया? बनारस में कहाँ थे, कहाँ रहे, उनका पता क्या है? सब पता है हमको, बताओ हमको। उनका मकान गिर गया मिट्टी का, नया बना। यहाँ तक कि हमको सबके मकान नम्बर भी ज़बानी याद हैं, 24/23 कृष्ण महाराज का...कमाल की बात है। उस पूरे मुहल्ले में सब कलाकार थे। शान्ता प्रसाद, राजन-साजन, गोपीकृष्ण और हम सब। जब हम छोटे थे, सात-आठ साल के तो रोज़ सुबह उठ कर सुनते थे। सारे अपनी धुन में मगन हैं, रियाज़ कर रहे हैं, कोई पा, धा, नी, सा, सा, नी...तो कोई सारंगी पर तो कोई आ आ आ आ...(खिलखिलाकर हँसते हुए) पूरा मुहल्ला मालूम होता पागल है। कोई मुरकी, कोई गाना, कोई गमक, कोई ख़रज रियाज़। कभी ऐसा भी होता कि किसी ने रियाज़ शुरू किया कि 'आ...आ...आ...आ...' तो कुत्ता भौंका, तो पिताजी बोलते, यह साला कुत्ता भी कूढ़ है। हमने वह ज़माना भी देखा है। बेगम अख़्तर का गाना हाय-हाय...!

अच्छा, उस समय जितनी तवायफ़ें थीं, वह सब ख़्याल गाती थीं। गा रही हैं और हल्की-सी कमर मटका दी बस। यह तो बाद में ठुमरी बनी है। यह गुरु लोग भी ख़्याल से ही शुरू कराते थे। 'सा रे गा मा' से शुरू कराते थे। क्या गाती थीं, जद्दनबाई, सरस्वती बाई! इन लोगों का गाना सुना है हमने ख़्याल। उस समय के रईस लोग भी संगीत के बड़े शौकीन थे। अक्सर संगीत की महफ़िलों में फ़रमाइश किया करते थे कि आज भैरवी हो जाए कुछ, तो वह ख़्याल गाती थीं। तो कोई कह रहा है अरे भई, आज चैती हो जाए, आज कजरी हो जाए। सबकी अपनी-अपनी फ़रमाइशें हुआ करती थीं। एक दृश्य हमें आज भी याद है। वह ऐसा देखा, कितना रोमांटिक, कितना ख़ूबसूरत दृश्य था वह। उस समय के सभी रईसों के बड़े-बड़े बंगले हुआ करते थे। बड़ा-सा मैदान है, बड़े-बड़े पेड़ लगे हैं, हर तरह की सजावट है, सब कुछ है। वह रईस हर इतवार-इतवार वहाँ जाते थे गाना सुनने। हम बच्चे भी नाच-गाना सुनने के लिए अक्सर पीछे बैठकर साथ जाया करते थे। तो हमने देखा है कि सावन का महीना है। एक बड़ा-सा दालान है, उसमें एक झूला पड़ा है। दालान में ही इधर-उधर साज़िन्दे बैठे हैं, कोई सारंगी बजा रहा है, कोई तबला पर है। उस झूले में एक ख़ूबसूरत-सी

तवायफ़ को बिठा दिया गया है और बारी-बारी रईस लोग उसके झूले को धीरे-धीरे झुला रहे हैं और वह झूले में बैठी कजरी गा रही है। क्या मनोहारी दृश्य होता था वह! उसके बाद दूसरा रईस आया, वह भी झूले को झुलाने लगता है और जो घर की बीवियाँ होती थीं, वह भी यह सब देखती थीं, लेकिन उनके सामने पर्दे के लिए बीच में कुछ हल्का कपड़ा पड़ा होता था, जिसमें से वह बैठकर साफ़ यह नज़ारा देख रही हैं, ऐसे देख रही हैं, पान भेज रही हैं। जैसे वह सिनेमा है उमराव जान, उसमें दिखा दिया जिस तरह, ऐसा कोई नृत्य है? हाँ, रेखा सुन्दर लगी है, सब ठीक है, लेकिन उस समय जो पुरानी चीज़ होती थी वह कहाँ है? मुज़फ़्फ़र अली मिले हमको। वह इस फ़िल्म के निर्देशक और निर्माता हैं। मैंने कहा–भई, आपने उमराव जान पिक्चर तो बड़ी अच्छी बनायी, रेखा तो बहुत सुन्दर लगी है, लेकिन उसमें यह जो मुजरा दिखाया, यह सब नाच क्या दिखा दिया, आप समझते हैं मुजरे का मतलब? वह जो तवायफ़ें मुजरा करती थीं, वह क्या ऐसा ही हुआ करता था? हमने तो कहा, आप हमारे पास आते। हम कहाँ गये थे, आप हमारे पास क्यों नहीं आये? कहने लगे, आपसे बहुत डर लगता है। हमने कहा, क्यों डरता है (हँसते हुए)? बोले, पता नहीं। हालाँकि उमराव जान पिक्चर अच्छी थी।

दीदी ने बहुत अच्छा याद दिलाया। सावन है, दीदी सावन पर कुछ हो जाए?

(साथी गायक के बारे में बताते हुए) बीस साल से है यह हमारे साथ। एक बार भी अगर यह हमारे साथ किसी कार्यक्रम में आने से मना कर दे कि हमारे पास समय नहीं है तो हमारी किताब से सुभाष का नाम कट...(हँसते हुए)। जो हमको प्यार करता है, हम उसको प्यार करते हैं। गुणीजन से हमें बहुत प्यार रहता है। अब यह अपनापन ही तो है। जयपुर वाले इतना घर में आते हैं, हे भगवान! एक है राजू (मदन प्रहलाद का दामाद), आकर कहता है–दीदी, एक कलाकार है, आपको अपना गीत सुनाना चाहता है। उसने कहा कि वह बहुत बढ़िया गाता है। हमने कहा, कलाकार है तो उसको बुलाओ हमारे घर। उसे बुलाया गया, वह शाम को आया। हमने कहा, अच्छा गाते हो तो सुनाओ हमें भी। उसने कहा, दीदी मैं तबला बजाऊं? हमने कहा, हाँ बजाओ; तो तबला भी अच्छा बजाया उसने। हमने कहा, बहुत कमाल कलाकार हो। उसने तबला बजाया, गाना गाया, सब कुछ किया और फिर हम सबने मिल-बैठकर रात का खाना खाया। वे लोग रात को क़रीब 11 बजे गये तो भी मुझे बुरा नहीं लगा। उसका सुन्दर-सुन्दर गाना, तबला सब बहुत अच्छा लगा।

दीदी, कुछ कजरी पर...?

(गीत गाने का इशारा करते हुए और गीत शुरू होता है)

झूला धीरे से झुलाओ बनवारी अरे सावनवा में,
जोर से झुलत मोरा जियरा डरत है,
लचके कमरवा की डारी अरे सावनवा में...

(सितारा जी नृत्य की मुद्रा में)।

आपके अंग-अंग में एक चीज़ बस जाती है बस नृत्य शुरू होते ही। न आपको याद रहता है और न ही देखने वालों को ही याद रहता है कि वे क्या देख रहे हैं?

मुझे भी कुछ याद नहीं रहता। दिल नृत्य में कुछ इस तरह रम जाता है। एक कलाकार ही इसे समझ सकता है। बाकी समझना बहुत मुश्किल है। वैसे उस समय के रईस लोगों को इसकी समझ थी। एक-एक तान, इक-इक बोल पर उनकी वाह! सुनायी देती थी। सुन रहे हैं और जहाँ आख़िर होने को आया, बोल पड़े कि अरे भैया, एक दफ़ा और गा दो। वे रईस लोग सब समझते थे। उनको भी इसका ज्ञान था। राजे-महाराजे फ़रमाइशें किया करते थे। कहते थे-अरे भई, सुबह हो रही है, ज़रा-सा ललित हो जाए। नींद नहीं आ रही तो सारंगी सुन रहे हैं। कहें, बस ख़ाँ साहब, ऐसी सारंगी बजाइए कि मुझे नींद आ जाए। क्या बात थी, वाह! कोई झटका नहीं, कोई लर्ज़िश नहीं, कुछ नहीं। यूँ चलता था सारंगी का जादू। अरे, सब देख लिया है हमने। मगर आज का यह सब, बस यूँ समझो सुनना पड़ता है, देखना पड़ता है, मजबूरी है। बच्चे हैं बेचारे, पैर छूते हैं आकर। ऐसे ही एक बार मैंने एक कार्यक्रम देखा। बच्ची पास आयी। मैंने कहा-बेटा, तुम बहुत अच्छा नृत्य करती हो। सुबह जल्दी उठकर रियाज़ ज़रूर किया करो। इससे तुम्हारे नृत्य में निखार आयेगा और कितना नाम होगा, सब कुछ होगा। हम लोगों ने भी देखो कितना रियाज़ किया है। बच्ची बोली, जी ज़रूर करूँगी। हालाँकि कोई-कोई ऐसे भी हैं कि उनसे कहो कि रियाज़ करो तो कहते हैं कि आप ख़ुद को क्या समझते हो? कहीं कोई सिखा रहा था एक लड़की को। उसने सब सिखाया, भाव भी सिखाया। अब इतनी छोटी दस साल की लड़की थी, जैसा उससे हो पाता था वह करती थी। हम लोगों को भी वहाँ बुलाया गया। इंटरवल हुआ, बच्ची आयी, पैर छुए। मैंने कहा, अरे वाह-वाह! तुम तो बहुत अच्छा नृत्य करती हो। तुम्हारे गुरुजी ने तो तुम्हें बहुत अच्छा सिखाया है, लेकिन इससे भी अच्छा होना चाहिए। यह मतलब नहीं कि बस ख़त्म हो गया, रियाज़ करो। उस बच्ची की माँ भी थी वहाँ। वह गुरु को कहने लगीं-यह क्या सिखाया तुमने, यह उम्र है भाव सीखने की? अब वह यह सब कुछ गुरु को बोल रही हैं। इतना बुरा लगा हमको कि हम क्या बताएँ। ऐसा नहीं कहना चाहिए। मुझे बहुत ख़राब लगता है। हे भगवान! कोई गाये, कोई बजाये। हमारे पास जब भी कोई आया, उनको यही कहती हूँ कि ठीक है, तुम गा रहे हो, रियाज़ करो, बस रियाज़ करो।

देखो अमीर ख़ाँ साहब कैसे थे, बड़े ग़ुलाम अली कैसे थे। आज दुनिया भर उनकी ग़ज़ल गा रही है। छोटे ग़ुलाम अली, वह मुझे दीदी कहते हैं। अभी आये थे मुम्बई में। मैं गयी मिलने, तो कहें, अरे दीदी आयी हैं। गले मिलते हैं। हम कलाकारों को यही चीज़ तो याद आती है। उनकी तरह थोड़े ही कि कभी भी किसी गुरु को कुछ भी कह दिये। हम बोले थे उनसे कि वाह रे शंकर! उनकी माँ बेचारी, वह बोले, अरे छोड़िए भी। यह हैं ही ऐसे, कूढ़ हैं। जाने दीजिए। कितनी ग़लत बात है।

अब क्या बोलूँ, क्या कहूँ? अच्छा एक चीज़ है कि वेशभूषा भी नृत्य के मुताबिक होनी चाहिए, गाने वालों के लिए। पहले लोग कैसे पहनते थे, पगड़ पहनते थे, पाजामा, बंडी। फिर अपने हिसाब से तैयार होकर जाते थे। साफ़ा बांधते हैं हमारे यहाँ उत्तर प्रदेश में। उस्ताद बिस्मिल्लाह ख़ाँ साहब की तस्वीर देखो, टोपी पहन कर शहनाई बजाते थे। मेरे हिसाब से नर्तक की वेशभूषा भी मायने रखती है। वह भी उसी के मुताबिक होनी चाहिए। जैसे कि अगर आप कृष्ण बन रहे हो तो कृष्ण ही बनो। लगना चाहिए कि आप कृष्ण हो। देवी, लक्ष्मी बने हो तो वह भी सही से ही बनो। इससे नृत्य में और उभार आता है। अब कुर्ता-पाजामा में

रावण बन गये। कुर्ता-पाजामा में ही बाँसुरी लिए कृष्ण बन गये, नहीं यह सही नहीं है। वह जो मुकुट है न, इसे पहनने से ही मन में कोई भाव, कोई बात पैदा होने लगती है। वैसे भी मुकुट को तो प्रणाम करते हैं हम लोग। एक भावना आती है मन में, जैसे कि कृष्ण सामने आ जाते हैं। हमारे यहाँ घर में भी हैं कृष्णा जी। मैंने उनसे कहा-बड़ी लड़ाई करूँगी, कट्टी। हमारे बालकृष्ण बड़े प्यारे लगते हैं।

आजकल किसी के पास समय नहीं है कि आपका दो घण्टे कथक देखे। आप क्लासिकल कीजिए, लेकिन यह क्लासिकल नहीं, बल्कि फ़िल्मों में जो क्लासिकल गीत होते हैं, उन पर नृत्य करने को कहा जाने लगा है। आजकल कहते हैं कि क्लासिकल फ़िल्मी कैसेट पर करो, क्योंकि संगीत भी चाहिए। हमने भी कहा ठीक है। बस बच्चों को भेज दिया। मैंने उनसे कहा कि जाओ भई, वह गोपीकृष्ण वाला 'झनक-झनक पायल बाजे' तो लोगों ने बहुत ही पसन्द किया। आजकल भी लोग क्लासिकल पसन्द तो करते हैं, मगर ऐसा वाला क्लासिकल। हमने भी कहा-लो भैया, कैसा ज़माना आ गया!

साभार : संगीत नाटक अकादेमी अभिलेखागार में संरक्षित रेकॉर्डिंग से प्रस्तुत। तिथि : 17.07.2009, समयावधि : 03 घण्टा, 35 मिनट, 43 सेकेण्ड, टेप-संख्या : 9198-9199।

सितारा देवी : (1920-2014) कलकत्ता में जन्मीं सितारा देवी भारत की शास्त्रीय नृत्य परम्परा की कथक शैली की महान नृत्यांगना के रूप में जानी जाती हैं। आपके पूर्वज बनारस से सम्बन्धित थे और नृत्य की शिक्षा सबसे पहले पिता पं. सुखदेव मिश्र से प्राप्त हुई। इसके उपरान्त लखनऊ घराने के तीन महान कथक नर्तकों क्रमशः अच्छन महाराज, लच्छू महाराज और शम्भू महाराज ने आपको कथक की बारीकियाँ सिखायीं। युवावस्था में सितारा देवी के नृत्य से प्रसन्न होकर गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने नृत्य साम्राज्ञी कहकर सम्बोधित किया था। आपका अधिकांश जीवन मुम्बई में बीता, जिसमें कई फ़िल्मों में भी अभिनय करने का श्रेय जाता है। 1930 और 40 के दशक में सितारा देवी की भूमिकाओं से सजी उल्लेखनीय फ़िल्में हैं- 'वतन', 'रोटी', 'हलचल', 'फूल' और 'होली'। आपको कई महत्त्वपूर्ण सम्मानों से पुरस्कृत किया गया, जिनमें प्रमुख हैं- केन्द्रीय संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार-1969, पद्मश्री-1973, कालिदास सम्मान-1994 तथा केन्द्रीय संगीत नाटक अकादेमी 'रत्न सदस्यता'-2009।

राजेन्द्र गंगानी : (1963-) जयपुर कथक घराने के प्रसिद्ध नर्तक कुन्दनलाल गंगानी जी के पुत्र और इसी घराने के सुविख्यात कथक नर्तक। आपने अपने नृत्य शैली में परम्परागत जयपुर घराने की शैली को कायम रखते हुए तकनीकी पक्ष को नवाचार से और भी अधिक समृद्ध किया है। आपको केन्द्रीय संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार 2003 में प्रदान किया गया।

छऊ का मतलब है मुँह पर छा लेना...

केदारनाथ साहू से **मोहन खोकर** की बातचीत

अच्छा केदार बाबू, ये जो सराईकेला का छऊ है, इसके बारे में कुछ बातें आपसे पूछनी हैं?

जी।

तो पहले ये बताइए कि ये छऊ शब्द है, इसका क्या मतलब है, ये क्या है?

छऊ। छऊ शब्द की उत्पत्ति हुई है, 'छ' और 'व' धातु से। छऊ मतलब होता है जब हम लोग उसको छा लेते हैं मुँह पर, इसीलिए इसको हम लोग हमारे देश की भाषा में 'छऊ' कहते हैं। माने, अपने मुँह के ऊपर हम लोग जो छा लेते हैं, उसी से छऊ आया है।

अच्छा इसका जो नृत्य है, ये कितना पुराना होगा?
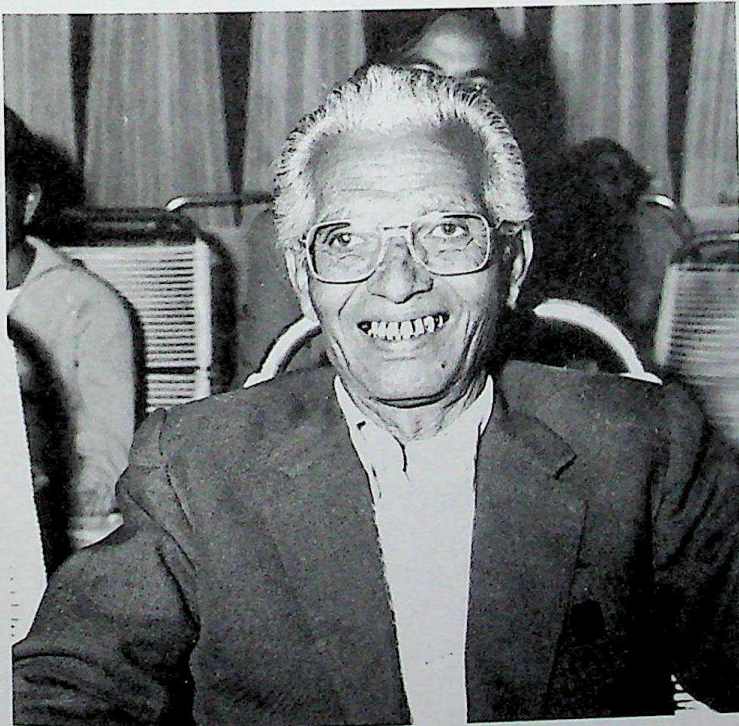
केदारनाथ साहू

ये तो हमारे गुरु जी पहले बताते थे, करीब ये चार हज़ार, साढ़े चार हज़ार साल का होगा।

कौन गुरु जी आपके?

हमारे कुमार विजय प्रताप सिंह दोऊ जी व महाराजा आदित्य प्रसाद सिंह दोऊ जी, ये हमारे गुरु जी हैं।

तो ये बताते थे कि इतना पुराना है ये?

जी हाँ। महाराज तो बहुत बुड्ढे थे, उनसे हम ये सारी बातें पूछते थे कि इसका मतलब क्या है और कितना ट्रैडिशनल (पारंपरिक) है ये? तो महाराजा साहब हमको ये सब बताते थे।

आप तो बचपन से इसी में हैं?

जी।

तो आप जब पहले सीखते थे, तो जो उस टाइम इस कला का रूप था, वही चला आ रहा है या उसके बाद कुछ और चीज़ें बढ़ी हैं या कम हुई हैं?

जी। अब उस कला से बहुत बढ़ चुकी है और उस कला से बहुत फाइन आर्ट हो चुकी है और ड्रेसेज वगैरह ये सब भी बहुत डेवलॅप (विकसित) किया है, म्यूज़िक वगैरह भी बहुत डेवलॅप (विकसित) किया है।

ये क्या, बस वो चैत्र परव (पर्व), वही टाइम होता है साल में या कोई और भी?

जी नहीं। ये जो चैत्र पर्व होता है, ये छऊ डांस जो होता है, ये खाली वो चैत महीना संक्रान्ति के समय में पाँच दिन धर के होता है। इसका शुभ घट होता है–पहले शिवजी का गवतीश्वर। महादेव की ये पूजा होती है और गौरी की पूजा होती है और उसके बाद ये पाँच दिन, जब वो कृष्ण जी गगरिया भर के ले आते हैं जमुना से, गंगा से, तब वो घट आएगा, तब हम लोगों का जो डांस है वो शुरू हो जाता है। कृष्ण जी नाचते-नाचते नदी से आएंगे और दो सखियाँ रहेंगी उनके साथ और एक पानी की गगरिया रहेगी और वो आकर के आसन जहाँ होता है हमारे यहाँ गढ़ के भीतर में, पैलेस के भीतर में, वो आसन में रखी जाएगी। वो रख गयी तो फिर डांस शुरू हो जाता है।

ये करने वाले कौन-कौन होते हैं, जो उत्सव के समय भाग लेते हैं? ये कौन लोग हैं?

ये सारे हमारे गाँव के सराईकेला की जनता होती है सब, सब जाति मिलकर इसको करती है।

नहीं, लेकिन ये जो नृत्य होता है, रात को रोज़ होता है?

जी।

पाँच दिन?

जी-जी।

उसमें वो जो करने वाले हैं, वो कहाँ सीखते हैं और कब तैयारी करते हैं? हर साल?

वो तो हर साल हमारा दशहरा से शुरू हो जाता है ये डांस। जो विजयदशमी होती है उसी दिन से ये डांस शुरू हो जाता है। जितने नये लड़के और पुराने गुरु लोग हैं वो उस टाइम शुरू कर देते हैं। अश्विन, कार्त्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ, फागुन, चैत ये सात महीने धर के हम लोग बहुत प्रैक्टिस करते है। पहले के ज़माने में भी ऐसा ही चलता था। अभी कुछ साल से हम लोग दो-तीन महीने प्रैक्टिस रखते हैं इसको।

और ये जो अखाड़ा है...

जी...

सराईकेला में...

जी...

उनके बारे में ये बताइए कि कितने हैं और उनका अलग-अलग क्या है?

जी। सराईकेला में आठ अखाड़े होते हैं। आठ अखाड़ों में एक साइड में चार रहते हैं और दूसरी साइड में भी चार रहते हैं। इनमें संघर्ष होता है, डांस का संघर्ष होता है। ये साइड से एक निकला तो वो साइड से एक निकलेगा और जिसका अच्छा डांस होगा, हमारे महाराजा और राजा सब बैठते हैं वहाँ गद्दी पर, वो लोग जजमेंट (निर्णय) देते हैं और जो अच्छा डांसर होगा, उसको सोने की जो पताका होती है वो मिलती है और जो कुछ कमती डांसर होता है, उसको चाँदी की, जो पताका होती है वो मिलती है।

ये अभी भी हो रहा है?

हाँ जी, अभी भी हो रहा है।

अच्छा जो आपकी ट्रेनिंग है, इसमें क्या-क्या सिखाया जाता है?

जी, पहले तो हम लोग बॉडी का 'फॉरमेशन' देते हैं, फिर पैर का देते हैं, फिर हाथ का देते हैं, फिर गति सिखाते हैं, फिर ढंग सिखाते हैं, फिर ठांडी सिखाते हैं, फिर इसका जो उभका है वो सिखाते हैं।

जितने कंपोज़ीशन बने हैं, इनमें कुछ अलग-अलग पीस हैं, जिनको जोड़ कर कुछ कंपोज़ किया जाता है?

हाँ जी।

वो सब क्या है, वो बताइए?

वो जो हमारे भंगी है वहाँ का, डांस का, वो भंगी से हम लोग रूप ले लेते हैं और उसका भाव, उसको लेकर हम जोड़ लेते हैं उसमें और फिर पूरे डांस को हम लोग कंपोज़ कर लेते हैं।

अच्छा, तो चेहरे के ऊपर तो ये छऊ आ जाता है?

जी...

तो फिर आपको कोई जो भाव करना हो, इस तरह का आइटम है, तो उस भाव को कैसे आप प्रदर्शित करते हैं?

जी, ये तो बहुत सोचने की और बहुत बड़ी बात है। जो पुराने आर्टिस्ट होंगे और जिनको गुरु से बहुत आशीर्वाद मिलेगा, वो उसको कर पाएगा। हम तो एक स्थाई भाव का छऊ लगा लेते हैं, जो एक करेक्टर के ऊपर स्थाई भाव हो जाता है; लेकिन हम लोग जो डांस करते हैं, वो हमारे दिल में खिलता रहता है और वो भाव हमारे छऊ के भीतर में होता रहता है। इसके भाव का हमको विकास करना पड़ता है तो हमारी जो देह का और हाथ का, पैर का-ये सब ढंग देकर हम उसका विकास करते हैं, जैसे-कहीं पर रोना हुआ तो उसी ढंग से हम भी रो पड़ते हैं भीतर-भीतर से, तो उसको उसी ढंग से हम जब दिखाते हैं तो जनता समझ जाती है कि ये रोते हैं।

हस्त मुद्रा तो नहीं है इसमें?

जी नहीं।

तो हाथों का उपयोग कैसे होता है?

जी, हाथों का उपयोग होता है, जैसे जो पोज़ आता है उसी माफ़िक तो मुद्राएँ भी हो जाती हैं। कोई ऐसी मुद्रा नहीं होती, जैसी कि आपके भरतनाट्यम वगैरह में रहती है, वो तो हमारी देह और हाथ-पैर इसी में मुद्रा समझी जाती है।

अच्छा जो आपका संगीत है छऊ के लिए...

जी...

उसमें ताल का या राग का या ध्वनि, इन चीज़ों का किस तरह से उपयोग होता है, ये कुछ बताइए?

जी, ये तो जिसका जो ढंग होगा, जिस डांस का सोचिए, मसलन हमने एक कृष्णसिंह किया वो तो सुबह की चीज़ है, रिसेसिंह का जो डांस होता है सुबह के समय होता है, उसमें भैरों (राग भैरव) का जो आलाप है उसको हम लोग जोड़ लेते हैं और उसका डांस कंपोज़ करते हैं। उसकी ताल भी इसी के माफ़िक कंपोज़ हो जाती है उसी छंद के भीतर में।

कुछ गाने भी इस्तेमाल होते हैं?

जी नहीं, खाली हम लोग सुर लेते हैं, गाने-वाने कुछ नहीं लेते हैं।

और कौन-से साज़ हैं, जो पहले काम में लाए जाते थे और अब भी चल रहे हैं?

जी है। हरे विष्णु का जो साज़ है अभी तक चलता है। विष्णु का और शिव का पीत-वसन होता है, विष्णु का और शिवजी का बाघम्बरी होता है और उनके गले में ये रहता है। ये बेल-पत्र और रुद्राक्ष और विष्णु के गले में रत्नमाला रहती है, हाथ में रत्न कंगन रहते हैं, बाँहों में बाजू रहते हैं और गले में चीक रहते हैं। ये बहुत पुराने ढंग से और बहुत कीमती होता है और जो हम लोग पीत-वसन वगैरह का इस्तेमाल करते हैं, ये सब बहुत कीमती चीज़ें होती हैं, मतलब यह कि हम लोग जयपुर और बनारस की चीज़ें ज़्यादा यूज़ (प्रयोग) करते हैं।

म्यूज़िकल इंस्ट्रूमेंट कौन-कौन से होते हैं?

पहले होते हैं मोहरी, फिर होता है शंख, उसके बाद होता है घंटा, उसके बाद होता है करताल, उसके बाद होता है ढोल, उसके बाद चरचरी, भैरी, तुरही और उसके बाद नगाड़ा, ये सब लगते हैं हमारे यहाँ इंस्ट्रूमेंट में।

अच्छा जो आपके ये सराईकेला के महाराज हुए तो उनके तो लड़के सभी...

जी...

इसमें भाग लेते आए?

जी।

जो शुभेन्द्र थे और ब्रजेन्द्र थे, जो अभी नहीं हैं, उनको तो आपने देखा ही होगा?

जी।

उनके बारे में कुछ बताएँगे?

जी, शुभेन्द्र तो बहुत बड़े कलाकार थे छऊ में और ब्रजेन्द्र जो जरासिंहा के राजा साहब हैं वो भी बहुत बड़े ढंग के कलाकार थे और हिरेन्द्र प्रताप सिंह भी बहुत बड़े कलाकार थे। वनबिहारी भी बहुत बड़े कलाकार हैं अभी और सुधीन्द्र भी जो राजा साहब के छोटे लड़के हैं ये भी बहुत बड़े कलाकार हैं। इनमें से शुभेन्द्र की जो गति थी इतनी चंचल थी, जैसा हमारे डांस में जो ध्यान है, हमारे गुरु जी जो कहते थे उसका, जो लड़का डांस करेगा उसका ढंग ऐसा होना चाहिए, ऐसे पैर होने चाहिए, ऐसे देह होनी चाहिए, ऐसे सिर होना चाहिए और ऐसे आँख होनी चाहिए वो सारा उसमें भरा था। शुभेन्द्र जो थे राजकुमार वो हमारे दोस्त थे और हम लोगों ने मिलकर बहुत कुछ गुरु जी से सीखा था। प्रिय शिष्य हम लोग ही थे हमारे गुरु जी के।

अपने गुरु जी के बारे में आप हमें बताइए?

हमारे गुरु जी राजा साहब के छोटे भाई थे और बहुत...

विजय कुमार?

'विजय प्रताप सिंह देव'। जीवन में कैसे हमारा सराइकेला डेवलॅप करेगा, हमेशा उनको चिंता रहती थी। कहाँ स्कूल हो, कहाँ लाइब्रेरी हो, कहाँ सोसाइटी हो और कहाँ गाँव वालों के लिए सड़क हो, कहाँ ब्रिज (पुल) हो, और कहीं टाटा कंपनी में हमारे प्रजा लोग को नौकरी मिले, इन सबकी उनको बहुत चिंता रहती थी। जब शाम हो जाती थी तो डांस और म्यूज़िक (संगीत) में डूब जाते थे और उस टाइम कुछ काम नहीं करते थे। हमेशा रात दो-तीन बजे तक डांस और म्यूज़िक चलता था हमारे अखाड़े में। उनके घर में और हमारी गुरुमाता जी जो हैं वो भी बहुत बड़े राजा की लड़की हैं वो जितना वहाँ का खाना-पीना वो सब हमको लाके खिलाती थीं और हम लोग वहीं अखाड़ा करते थे। किसी-किसी दिन डांस कंपोज़ करते-करते सुबह भी हो जाती थी। वो बहुत एजुकेटेड (शिक्षित) थे।

छऊ में जो आइटम है, इसमें से कौन से हैं जो आपके गुरु जी ने बनाए?

पीकॉक का जो छऊ है और शिवजी का जो छऊ है वो हमारे गुरु जी का बनाया हुआ है।

और दूसरे जो डांस हैं वो किसने कंपोज़ किए?

वो सब हमारे गुरु जी ने। अब जितने डांस आप देख रहे हैं हमारे सराईकेला में, करीब उनकी डांस कंपोज़ीशन 43 हैं, वो सब हमारे गुरु जी की बनाई हुई हैं।

सबकी सब उनकी ही हैं?

सबकी सब उनकी। आपका पीकॉक हुआ ''बरसान जमा जमन रिस सिंधु को देवजानी'', 'देवदासी', 'कालिया दमन', 'सूर्य नृत्य', 'चन्द्र भागा', 'सागर', 'किन्नर', 'सूर्यपूजा', 'आरती हर', 'पार्वती और आपका चले गए उधर एकलव्य', 'मधुकैटभ', 'दुर्गा और बाणविद्या', 'रानीझाँसी'– ये सब उन्हीं का किया हुआ है।

वो खुद भी करते थे?

जी। वो खुद भी करते थे। राजकुमारी सपना नाम से एक ग्रुप डांस था वैले, उसी में राक्षस का जो पार्ट (किरदार) था वो किया था।

अच्छा अभी तो समझिए राजा लोग नहीं हैं...

जी...

तो इसमें जो आपकी कला है, जो इतनी उठी थी, जहाँ इसको इतना सपोर्ट (सहारा) मिलता था...

जी...

उस पर क्या कुछ फ़र्क पड़ा है?

बहुत फ़र्क पड़ गया है। उस टाइम की जो सोच थी अब वो सोच नहीं है, क्योंकि ये जो कला है, ये एक हमारी कहावत है भारत की–''बिनाश्रय न बरसन्ति कविता: वनिता: लता:।'' कहीं आश्रय नहीं मिलने से ये कभी नहीं उठ सकती है। राजा लोग थे तो बहुत डोनेट (दान) करते थे। इसका जो कल्चर (संस्कृति) होता था बहुत ऊँचे ढंग से होता था। अब जो हुआ है, अब हम भी राजा हैं, आप भी राजा हैं, सभी राजा हैं, लेकिन पैसा नहीं है हमारे पास, ये कला चलाने के लिए।

तो अभी इसको कौन करते हैं?

अभी जो हम कर लेते हैं कुछ-कुछ इधर-उधर से मांग के और कोई ऐसा बहुत भक्त होता है हम जिसको रिक्वेस्ट (निवेदन) करते हैं, कुछ न कुछ वो दे देता है। हम कहते हैं, ये देश का है, घर का है, यह हमारा कल्चर (संस्कृति) है, इसको बचा लो। हमारे सराईकेला के जो ग़रीब आर्टिस्ट (कलाकार) हैं वो भी इधर-उधर से कुछ ले आते हैं और किसी तरह दुःख-सुख से ये चल जाता है।

अच्छा छऊ जो बनते हैं, इनमें सबसे पुराने और अच्छे माने हुए कलाकार कौन हैं सराईकेला में?

सराईकेला में एक कंसारी साई में थे। उसमें अभिमन्यु साहू नाम के बहुत पुराने कलाकार हैं। वो लकड़ी का भी छऊ बनाते थे, कद्दू का भी छऊ बनाते थे, बाँस का भी, मिट्टी का भी। सबसे पुराना छऊ है हमारा वहाँ का अक्रूरागमन। अक्रूरागमन मतलब होता है, जब भगवान श्रीकृष्ण को अक्रूरानंद जी लाने गए तो उसी भाव का एक छऊ उन्होंने बनाया था, फिर इसके बाद दण्डी बनाया। दण्डी मतलब भगवान को प्रणाम जो किया जाता है उसको दण्डी कहते हैं। वही सब पुराना ढंग का छऊ है, लेकिन हमारे जीवन में हमने बाँस का और काठ का छऊ देखा है वहाँ पर। कंसारी साई में बहुत बड़े-बड़े कलाकार रहते थे और अभी भी कुछ- कुछ हैं। कंसारी साई बड़ी कला की जगह थी। वहाँ कांसे का काम होता था बहुत ज़ोर-शोर से उस टाइम और इकोनॉमिक (आर्थिक) कोई तकलीफ़ नहीं थी। इसलिए वो लोग कला पर बहुत ज़्यादा ध्यान देते थे। ये जो कन्हाई डांस होता है हमारे गरिया भात में, हमारे कंसारी साई का जो बेस डांसर होता है, वो श्रीकृष्ण का पार्ट (किरदार) लेता है और इसका जो हंटर डांस था, सबर डांस और नितई महाराणा जो डांस करके गए हैं बहुत पुराने दिनों का, वो डांस अभी तक होता है और उसी ढंग से होता है।

अच्छा ये विजय कुमार जी, इनके बाद कुछ जो नए कंपोज़ हुए हों डांस?

जी।

उन्हें किन्होंने किया था, कौन से हुए थे कुछ बताइए? जैसे राजकुमार ने किए हैं, शायद दो-एक रात्रि और मेघदूत?

जी।

इस तरह और भी कोई लोग हैं, जिन्होंने नए कंपोज़ीशन बनाए हैं?

जी बनाए हैं, बहुत बनाए हैं वहाँ के आदमी ने, लेकिन वे इतने स्टैंडर्ड (स्तर) के नहीं होते हैं। हमारे गुरु जी की जो कंपोज़ीशन होती हैं बहुत ही स्टैंडर्ड की होती हैं और मेघदूत का ये राजकुमार ने नहीं किया है। ये हमारा किया हुआ है, हमारी कंपोज़ीशन है। हमने पहले राऊरकेला में एक हाईस्कूल में इसका प्रदर्शन किया था लड़की लोग को लेकर विदाऊट (बिना) छऊ में। वहाँ जब ख़ूब नाम होना शुरू हो गया और वो लड़कियाँ थीं सब बनारस की, तब हमने उसको वो छऊ के ढंग में कैसे गिरेगा ये आकर सराईकेला में राजकुमार को और केदारनाथ रथ को और राजा साहब को कहा कि ये हमें सोचा है और आप हमको इसमें एक स्क्रिप्ट बना दीजिए और इसमें बहुत हम सक्सेसफुल (सफल) नहीं हुए हैं। छऊ में इसको कैसे गिराएंगे ये हमको बता दीजिए, तो राजा साहब ने कहा, जाओ छोटेलाल से बात करो, राजकुमार से और कर लो। तो फिर हम राजकुमार के पास गए। राजकुमार ने कहते-कहते हमको लिपटा लिया अपनी छाती से। बोले, बहुत अच्छा है, चलो करेंगे मिलके। तब दोनों ने मिलकर ये मेघदूत कंपोज़ किया था।

अच्छा केदार बाबू, आपने बहुत-सी चीज़ें जो हमको सही मालूम नहीं थीं, आपने रोशनी डाली है। इसके लिए आपका बहुत धन्यवाद और ये भी मैं कहना चाहूँगा कि अब तो बहुत ही कम कलाकार हैं जो कि पुराने छऊ को समझते हैं या संभाल रहे हैं, उनमें आपका स्थान जो है वो तो बहुत ही ऊँचा है और हम उम्मीद रखते हैं कि आप इस कला के लिए जो भी आपसे हो सके हर तरह से करेंगे, क्योंकि राजदरबार वगैरह में तो अभी ख़ास कुछ नहीं हो रहा है और शायद न हो इसलिए। बहरहाल पुराने तो आप ही हैं।

जी।

इसलिए हमें यह कहना है कि आप ज़रूर दिल-जान डालकर इसमें जो भी तरक्की हो सके जिस तरह से, वो आपका फ़र्ज़ है करना।

जी।

अच्छा नमस्कार।

नमस्कार।

साभार : संगीत नाटक अकादेमी अभिलेखागार में संरक्षित रेकॉर्डिंग से प्रस्तुत। तिथि : 16.11.1972, समयावधि : 20 मिनट, टेप-संख्या : 1415।

केदारनाथ साहू : (1921-2008) केदारनाथ साहू, लोक-नाट्य रूपों में प्रसिद्ध 'छऊ-नृत्यकला' के सबसे प्रतिष्ठित नामों में से एक हैं। इनका जन्म छोटा नागपुर प्रान्त के सिंहभूम, सराईकेला में हुआ। इस कला में आपकी शिक्षा, सराईकेला के युवराज बिजोय प्रताप सिंह देव के माध्यम से हुई। यह वह दौर था, जब राजसी संरक्षण प्राप्त छऊ-नृत्यकला अपने शिखर पर थी। इसी दौरान सन् 1936 में सराईकेला के राजपरिवार से संरक्षण प्राप्त दल जब अपने प्रदर्शन के लिए इगंलैण्ड गया, तब केदार बाबू उस दल में शामिल थे। आपकी कला पारम्परिक कथाओं में मौजूद स्त्री पात्रों के प्रदर्शन में बेहतरीन मानी जाती है। शिव-पार्वती के 'अर्धनारीश्वर' भाव का प्रदर्शन आपने छऊ नृत्य में अत्यन्त समृद्ध ढंग से किया है, जिसे आपका सिग्नेचर माना जाता है। बाद में आपने कई शिष्यों को इस कला में पारंगत किया और एक तरह से खुद में संस्थान ही बन गये। आपने 1980 में अमेरिका के निमंत्रण पर वहाँ जाकर छऊ पर कार्यशालाओं का आयोजन किया, जिसे आज भी इस कला माध्यम के लिए ऐतिहासिक उपलब्धि माना जाता है। बहुत समय तक केदार नाथ साहू ने राजकीय छऊ नृत्य केन्द्र, सराईकेला में निदेशक के रूप में अपनी सेवाएँ दीं।

मोहन खोकर : (1924-1999) कला-संगीत मर्मज्ञ इतिहासकार। शास्त्रीय नृत्य की अधिकांश विधाओं के जानकार एवं अभिलेखाकार। आपने नृत्य सम्बन्धित शोध-परक जानकारियों का संरक्षण और संग्रहण करते हुए कई विधाओं में यह कला सीखी भी थी। इनमें प्रमुख रूप से कथक, लाहौर (पाकिस्तान) में रहते हुए गुरू प्यारेलाल से, भरतनाट्यम रूक्मिणी देवी अरूण्डेल के संस्थान कलाक्षेत्रम, चेन्नई से तथा कथकली, कलामण्डलम माधवन और अम्बु पणिक्कर से सीखा। इनके अलावा उन्होंने उदय शंकर के नृत्य समूह के सदस्यों कामेश्वर और जोहरा सहगल से नृत्य की बारीकियाँ सीखीं। मोहन खोकर की संगीत को एक बड़ी देन नृत्य पर आधारित उन विमर्शमूलक पुस्तकों से भी है, जिसे उन्होंने अपने जीवन में लिखा और सम्पादित किया। इनमें कुछ प्रमुख पुस्तकें हैं- 'ट्रडिशन्स ऑफ इण्डियन क्लासिकल डांस', उदय शंकर पर आधारित 'हिज़ डांस : हिज़ लाईफ', 'डांसिंग फॉर देमसेल्व्स', 'फोक ट्राईबल एण्ड रिचुअल डांसेज़ ऑफ इण्डिया'। मोहन खोकर सियाजी राव विश्वविद्यालय, बड़ौदा, गुजरात के नृत्य संकाय के 1950 से 1964 तक विभागाध्यक्ष रहे। बाद में वे सन् 1981 तक केन्द्रीय संगीत नाटक अकादेमी, नयी दिल्ली में स्पेशल ऑफिसर ऑफ़ डांस के पद पर भी कार्यरत रहे।

लखनऊ घराने में लोच है...

गुरु कार्त्तिक राम से डॉ. कपिला वात्स्यायन की बातचीत

ये संगीत नाटक एकेडमी और कथक केन्द्र का सौभाग्य है कि आप आज इतने वर्षों के बाद हम लोगों के बीच में हैं और हम ये अवसर लेना चाहते हैं कि कुछ आपके जीवन के विषय में और कुछ आपकी कला के विषय में प्रश्न करें और आप बताएँ। तो सबसे पहले मैं यह पूछूँ कि यदि आप अपने जीवन के विषय में, जो भी आपको याद हो, शुरू से और फिर तालीम के विषय में कुछ आप कहें?

पहले मैं देहात में गम्मत माने लाइट-म्यूज़िक का काम कर रहा था।

कौन-से देहात में ?

माने रायगढ़ के पास है, मोझोभवर माल में।

तो वो आपने अपने आप ही सीखा था या किसी...?

सिखाए थे, गुरु थे वहाँ भी।

कौन सिखाए थे आपको?

माखन गुरु, जिनका नाम माखन था।

और कुछ आपको अंदाज़ है कि ये कब की बात होगी ?

ये काफ़ी रोज़ हो गया।

कितने बरस ? कुछ ईस्वी से या विक्रमी संवत् से या किसी से भी कुछ याद है आपको ?

ये दस साल की उम्र थी क़रीब, 65-67 बरस की उम्र है अभी और माता-पिता को बड़ा शौक़ था बचपन में नृत्य के लिए और वो ख़ुद एक करमा नृत्य के अच्छे कलाकार थे तो हमको शौक़ हुआ और वो अपना 'गम्मत नृत्य' होता है हमारे देहात में, गाँव भंवरमाल में, तो हम अपना नृत्य करने लगे।

तो "गम्मत नृत्य" कौन से अवसर पर होता है ?

वो होता है जैसे कोई ख़ुशी का समय हो गाँव में जब।
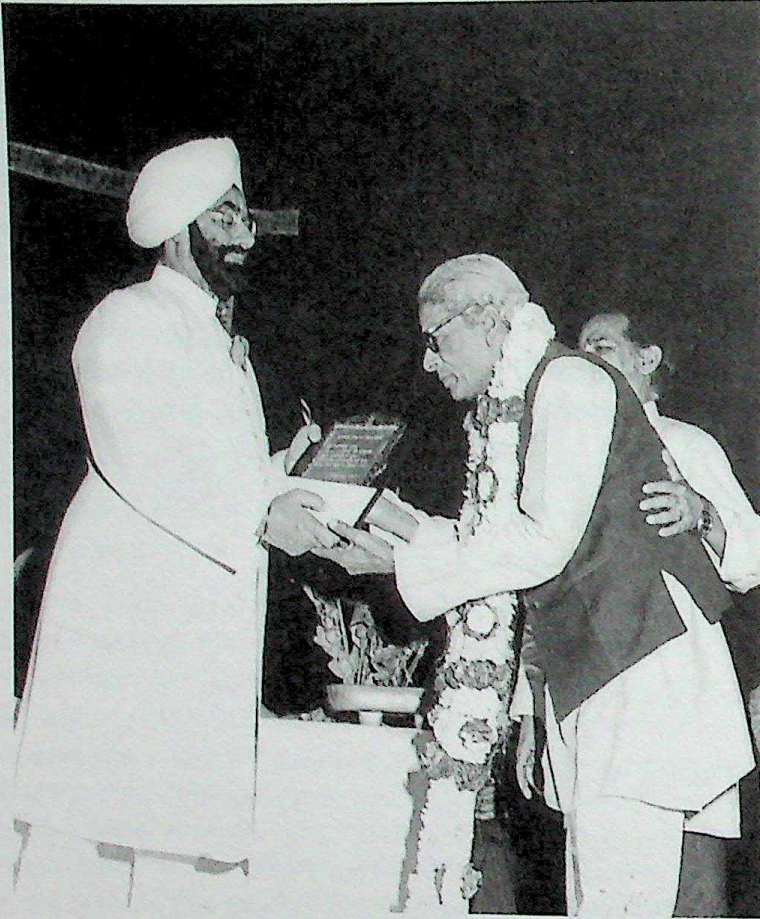
तत्कालीन राष्ट्रपति माननीय ज्ञानी जैल सिंह के हाथो संगीत नाटक अकादेमी पुरस्कार ग्रहण करते गुरु कार्तिक राम

हाँ, लेकिन वैसे, जैसे करमा है वो वर्षा का है?

वर्षा का है, जी हाँ।

वर्षा का नृत्य है न ! तो इसी तरह से गम्मत किसी समय भी किया जा सकता है, याकि...?

जी हाँ। गम्मत है, जो वहाँ का, छत्तीसगढ़ का ख़ास प्रधान नृत्य माना गया है।

जी हाँ।

और वहाँ हमेशा गम्मत होता है, हर सीजन में गम्मत होता है। उसमें बड़े लोग आनंद उठाते हैं और अच्छे ढंग से तबला, हारमोनियम बजता है, सारंगी बजती है। देहात में होता है सारंगी का दूसरा रूप–शिकारा। शिकारा, तबला बस इसी से वो नृत्य होता है।

और ये उन्होंने अपने गुरु माखन...?

जी, गुरु जी माखन जी से, वो भी बाबा जी थे।

अच्छा वो भी बाबा थे और आपके पिता भी नृत्य करते थे ?

जी हाँ। तो उन्होंने ही सिखाया था पिताजी को गम्मत गीत का नृत्य। तो ये फिर राजा साहब के यहाँ जब गणेशो का नाम सुने कि बहुत अच्छे ढंग से मनाया जाता है रायगढ़ दरबार में, तो माखन-बाबा हमको ले करके गये राजा के दरबार में। नृत्य देखकर के अपने दरबार में राजा चन्द्र सिंह जी को बहुत पसन्द आया, तो वो बोले कि हमको शास्त्रीय नृत्य का शौक़ है तो हम ऐसे लड़कों को रखकर दरबार में सिखलाएँगे।

मैं एक मिनट, प्रश्न आपसे इसके बीच में करना चाहती हूँ। बहुत बरस तो हो गए ही...

जी!

लेकिन शायद हो सकता है कि आपको उस गम्मत नृत्य का कुछ भी याद हो, क्योंकि उसमें भी टुकड़े, तोड़े या कुछ बंदिश या कुछ बोल-कुछ होता रहा होगा ?

उसमें भजन ही चलते थे।

केवल भजन ही चलते थे?

जी हाँ।

तो उसका कोई सुर-तान, कुछ याद है तर्ज?

है! बोल सुनाऊँ उसका?

जी हाँ, बोल सुनाइए या तर्ज सुनाइए, जो आपको याद हो या दोनों सुनाइए?

''सुन री सखी ओ मोहन की वो बाँसुरी प्यारी,
जमुना के तीर बन में वो गायन करे मुरारी।
जब से धुनि सुनाई तनि की खबर भुलाई,
मन में बसे कन्हाई नहीं चैन, रैन सारी।
तज काज लाज मन में गोपी गई है बन में,
हम रह गई भवन में, किस्मत बुरी हमारी।
मेरे नयनों का तारा, बंसी बजावनहारा,
ब्रह्मानंद दे दिदारा दासी हूँ मैं तुम्हारी।''

बहुत सुंदर। ब्रह्मानंद की रचना है।

ऐसे-ऐसे ही गाने, मायने देहातों में हर जगह नृत्य किया करते थे। इतने में राजा साहब को मालूम हुआ कि एक नाचने वाले देहात में अच्छे हैं, उसको लेकर के आवो। तो अर्दली कोई आए अपने यहाँ, तो रायगढ़ में पहुँचकर के राजा साहब की सेवा में गए। वहाँ गम्मती लाइन माने ऐसे-ऐसे भजन वगैरह सब गाते थे। फिर दो-तीन रोज़ वहाँ रहे, फिर वहाँ अपने गुरु से बोले कि...

उनका गुरु कौन था ?

नहीं-नहीं, माने अपने हमारे।

अच्छा, आपके।

माखन गुरु, माने वो बाबा होते हैं तो राजा जी बोले कि इस लड़के को यहाँ छोड़ दो इसको दूसरी ही लाइन में हम नाच सिखाएँगे, माने क्लासिकल डान्स सिखाएँगे। तो बाबा बोले-महाराज, ये हमारे जीवन में एक ही है, हम लोगों को तकलीफ़ होगी आप रख लेंगे तो। तो उसके बाद में फिर राजा साहब उनको खुश कर दिए, फिर वहाँ मैं रह गया। फिर उसके बाद में हमको कथक डान्स सिखाना राजा चक्रधर सिंह शुरू किए। फिर सीखते-सीखते बहुत अभ्यास करते-करते वहाँ रह गए।

कथक नाच के लिए कौन-कौन से उस्तादों को बुलाया गया ?

पहले ! शिवनारायण, फिर दूसरे में जयलाल जी, फिर तीसरे में सबसे ज़्यादा तालीम हुई है आप ही लोगों से, माने अच्छन महाराज, उसके बाद में शंभू महाराज, उसके बाद में लच्छू महाराज और ऐसे आते-जाते थे। सुन्दर प्रसाद जी भी जाते थे, तो कभी किसी से एक टुकड़ा लेते थे। राजा साहब जिसको-जिसको पसंद करते थे, उसी तरह से माने याद करते थे और पैरों से, हस्तकों से निकालना पड़ते थे। इस प्रकार से, इस हिसाब से वहाँ रायगढ़ में रहते थे। उसके बाद में फिर चौदह साल की उम्र में कांफ्रेंसों में जाया-आया करते थे।

चौदह साल में माने आप कांफ्रेंस के लायक तैयार हो गए थे?

हाँ।

अच्छा?

जी हाँ

सबसे पहली कांफ्रेंस आपकी कौन-सी थी ?

मिर्ज़ापुर।

मिर्ज़ापुर में ?

जी हाँ।

कौन-सी सन् की बात होगी यह ?

सन् होगी प्राय : 35-36।

जी हाँ, और उसके बाद आपने बहुत भ्रमण किया होगा ?

जी।

कहाँ-कहाँ गए ?

मिर्ज़ापुर गए, उसके बाद में यहाँ इलाहाबाद आए, मेरठ गए, बरेली गए और लखनऊ गए और उसके बाद में कलकत्ता गए और दिल्ली भी आया था मैं, माने...

कश्मीर भी गए ?

कश्मीर तो घूमने के बतौर गए थे, लेकिन वहाँ भी प्रोग्राम हुआ था।

प्रोग्राम हुआ था (हँसते हुए)? और वहीं मैंने पहली बार देखा था।

जी हाँ।

वैसे आपके मेडल में तो सन् 35-36 या 37-38 तक लिखा है। मेडल में डेट आपने देखी हो, म्यूज़िक कांफ्रेंसों का?

एक शील्ड है, सात कप हैं, कांफ्रेंसों की तरफ़ से मिले हैं और मेडल हैं क़रीब 35-40। ऐसे ही कुछ और मेडल भी हैं।

अच्छा कौन-सी सन् तक आप राजा साहब के साथ रहे ?

मैं रहा हूँ, सात बरस की उम्र में वहाँ पहुँच गया था।

जी, और कितने बरस तक रहे ?

वहाँ तीस-पैंतीस साल रहा।

और फिर आप दरबार से बाहर कब आए ?

वहाँ से बाहर आ गया, राजा साहब का स्वर्गवास हो गया, उसके बाद में दो साल और रहा, फिर सब बिखर गया। अपनी-अपनी जगहों से सब चले गए।

राजा साहब का स्वर्गवास हुआ सन् अड़तालीस में, हैं ? उसके बाद फिर आपने क्या किया?

उसके बाद फिर राजा साहब मौजा (ज़मीन-जायदाद) जो दिए थे मुझको। जागीर, वहाँ रहा चार साल।

जी, कितनी जागीर दी थी ?

एक दी थी।

एक ?

जी हाँ।

अच्छा वहाँ रहे, फिर ?

फिर वहाँ काश्तकारी वगैरह सब करते थे, फिर यही मेहनत-वेहनत देहात में लेकिन नृत्य नहीं जमा अच्छी तरह से, साज़िन्दे वगैरह नहीं मिले। तो फिर रायगढ़ आकर के रहना शुरू किये, लेकिन वहाँ भी ऐसे ही, अच्छा नहीं मालूम हुआ तो फिर आना-जाना ऐसे ही इधर-उधर...

तो तबसे आप, सन् अड़तालीस से, किसी को तालीम दे रहे हैं ?

जी हाँ।

किसको दी ?

माने अपने लड़के को दे रहे थे।

जी!

फिर और लड़के हैं, बच्चे हैं।

कितने शागिर्द हैं आपके ?

शागिर्द मेरे वैसे तो, ऐसे ही दस-बीस होंगे।

जी!

जी हाँ, टाटा में भी हैं। जहाँ-जहाँ जाता हूँ वहीं हो जाते हैं, ईश्वर की दुआ से।

और तबसे आप 1948 से अब तक इसी तरह से तालीम दे रहे हैं ?

जी हाँ।

किसी संस्था के साथ भी आपका संबंध है ?

जी !

कोई वहाँ पर स्कूल था या कोई संस्था...?

रायगढ़ में सन् 1948 के बाद जब राजा साहब गुज़र गए, उसके उपरांत सन् 1953 तक उनके लड़के ललित सिंह जी के पास में दरबार में ही रहे। ललित सिंह जी का कुछ दिमाग़ वगैरह ख़राब हो गया बीच में। इसके पश्चात् दरबार छोड़ना पड़ा हम लोगों को फिर गाँव वगैरह में गया मसीदा। वहाँ से फिर रायगढ़ आए। रायगढ़ में फिर सन् 57 तक रहे, फिर उसी बीच में यहाँ नृत्य भारती से गुप्ता जी, जो डायरेक्टर थे नृत्य भारती के, वहाँ मैं...

संगीत भारती के ?

हाँ-हाँ, संगीत भारती के...

मैंने ही चिट्ठी लिखवाई थी (हँसकर)।

(कार्त्तिक राम जी के पुत्र) : जी! उनका पत्र मिला, तो राजा साहब के हाथ लग गया। ललित सिंह जी बोले कि हमारे दरबार के रत्न हैं आप, हम लोगों को इस तरह से नहीं छोड़ सकते। हम लोग ख़ामोश रहे तो पिताजी को बोले कि आप हम लोगों को इस तरह से छोड़ कर जाना चाहते हैं, जो दरबार आपको इतना आगे लाया, इतने गुरुओं से सिखवाया? तो वहाँ पर चुपचाप रहे। मैंने फिर उसके बाद जब राजा साहब रायगढ़ छोड़ दिए, उनको पंचमढ़ी ले जाया गया तो ठीक उसके बीच में यहाँ फिर हम दुबारा पत्र लिखे, पिताजी को पूछ करके ख़ुद लिखा तो यहाँ से स्वीकृति गई। तब फिर हम लोग दोनों दिल्ली चले आए। यहाँ बहुत कम समय ही पिताजी को छोड़कर गया। उसके बाद क़रीब छः महीना रहे। इसके बाद इन कार्त्तिक राम जी की तबीयत ख़राब हो गई, तो फिर रायगढ़ चले गए।

आपको दिल्ली पसंद ही नहीं आया था। बहुत कोशिश की हमने। आपको नहीं याद होगा, यह तो मुझको याद है (हँसकर)?

हाँ, हाँ!

जी हाँ, इसे दुर्भाग्य कहिए हमारा कि इतना अच्छा आप लोगों से सहयोग नहीं मिल पाया, क्योंकि मैंने बहुत आग्रह से बुलवाया था आपको?

(कार्त्तिक राम जी के पुत्र) : इसके पश्चात् पाँच वर्ष इन (कार्त्तिक राम जी)का इलाज चला फिर इसके बाद सन् 1958 में इटावा म्यूज़िक कांफ्रेंस में गए तो दिल्ली के बारे में हाफ़िज अली ख़ान साहब पिताजी को बहुत नाराज़ हुए कि इस तरह से अच्छे स्थान में रह कर क्यों छोड़ दिए? बताए कि परिस्थिति थी, ऐसी-ऐसी बात थी, तो उन्हें भी दुःख हुआ पिताजी फिर वहाँ से लौटने के पश्चात् आप भी रायपुर चले आए। रायपुर में सेन साहब हैं। वहाँ पर उन्होंने आग्रह किया कि आप हमारे यहाँ रहिए, तो वहाँ करीब डेड़ बरस रहे। इस बीच में जमशेदपुर के नृत्य कला केन्द्र से मिसेज चक्रवर्ती, वहाँ से मेरे पास आईं, तो मेरे गुरु भाई हैं जयलाल महाराज जी के लड़के राम गोपाल जी, तो उनको मेरा पता लगा उनके द्वारा, तो मेरे पास आए और मुझको ले जाना चाहा। मेरा कुछ ऐसा है कि भाइयों को ज़रा शिक्षा-दीक्षा देता रहता हूँ वहाँ रायगढ़ में और पढ़ाई-

लिखाई भी चलती है साथ-साथ, तो मैंने पिताजी से आग्रह किया। बोला – आपको वहाँ रहना अच्छा होगा, रायपुर से कहीं अच्छी जगह है। फिर उनको वहाँ ले जाकर पहुँचाया। आप (कार्त्तिक राम जी) पाँच साल वहाँ रहे।

इसके बाद में अभी डेढ़ साल से फिर गाँव में आना पड़ा है आप (कार्त्तिक राम जी)को, क्योंकि वहाँ का केन्द्र ऐसा है कि एक तो संस्था फिर ब्रांच उसकी दो-मील-चार मील-छह मील दूर, तो आप (कार्त्तिक राम जी) के लिए ज़रा उम्र के लिहाज़ से दौड़-धूप करने में तकलीफ़ होती थी, तो मैं बोला, आप चले आइए। फिर तभी मैं बोला, पहाड़ में आपके लिए कुछ प्रयास कर रहा हूँ। वहाँ भी टाटा कंपनी की फैक्टरी है, जहाँ जी.एम. वगैरह हैं, मेरा कार्यक्रम रखे थे, पिताजी बनाए थे मेरा प्रोग्राम।

तो आप भी सिखाते हैं और....

(कार्त्तिक राम जी के पुत्र) : स्वयं काम भी करते हैं।

अच्छा, अब मैं आपसे कुछ शैली के विषय में पूछूँ और वो ये कि आपसे जिस बात की चर्चा दो-तीन दिन होती रही है, आप उन व्यक्तियों में से हैं और गुरुओं में से हैं जिन्होंने दोनों घरानों से शिक्षा पाई तो कुछ तो मैं ये चाहूँगी कि दोनों घरानों की कुछ पढ़ंत आप कर दें और उनमें जो कुछ अंतर है वो स्पष्ट हो जाएगा ?

जी हाँ !

और फिर मैं ये चाहूँगी कि आप हमको ये बताएँ कि आपकी दृष्टि से आप इन दोनों घरानों में क्या अंतर पाते हैं ?

उसमें अंतर यही है बहन जी कि लखनऊ घराने में लोच है, ख़ूबसूरती है चालों में। अच्छा और जयलाल जी, आप भी गुरु हैं, मैं बुराई नहीं कर रहा हूँ, लेकिन थोड़ा सख़्त हैं। सख़्त माने सहूलियत इतनी ज़्यादा नहीं है, लेकिन विद्या में बहुत ज़्यादा ताल उद्यम (तैयारी) है भ्रमरी में, चक्कर में, जी हाँ। यही बात है और...

बंदिश में कुछ आप कहेंगे कि जैसे इनके यहाँ, लखनऊ वालों के यहाँ एक तो बोलों की बात है - ''ता थेई तत् थेई था'' - इतना-सा प्रयोग है?

जी हाँ, वो तो आप लोग सुन चुकी हैं, लेकिन उतना ही फ़र्क है और तो कोई फ़र्क नहीं है।

ठीक है। आप जयपुर घराने की भी चीज़ सुनाइए दो-चार पढ़ंत और लखनऊ घराने की भी, जयलाल जी की और जिनसे-जिनसे आपको जो-जो चीज़ मिली हैं?

अच्छी बात है, आमद वगैरह भी सुनाऊँ या परन ही सुनाऊँ ?

जो आप चाहें, दोनों सुनाइए ?

अच्छी बात है, ये लखनऊ घराना पहला नंबर ...

जी।

(नृत्य के बोल पढ़ते हैं)
बहुत सुंदर !

ये लखनऊ घराने का है।

जी, और जयपुर घराना ?

जयपुर घराना – ता त थेई...(नृत्य के बोल पढ़ते हैं)।

ये जयपुर घराना है, यह भी आमद है। अच्छा इसके अलावा और...कोई परन?

चक्करदार!

चक्करदार?

जी हाँ, कोई भ्रमरी इसमें आएगा।

जी हाँ !

(नाच के बोल)ता ठुंगा...।

बहुत सुंदर, बहुत सुंदर!

ये चक्करदार है।

जी।

जयपुर घराना, जयलाल जी महाराज, फिर उसके बाद में नटवरी लास्य सुना रहा हूँ। वो भी चक्करदार है, वो भी जयपुर घराना ही है।

जी।

(नाच के बोल)जिग जिग जिग थेई...।

गुरु जी, क्योंकि जो लोग इसको बाद में सुनेंगे तो उनके ज्ञान के लिए मैं यह चाहूँगी कि आप इसकी मात्राओं के बारे में बताएँ और कितने आवृत्त में यह आया ?

जी हाँ!

और इसकी जो बंदिश बनी वो कैसे बनी ? इसके विषय में दो शब्द कहिए।

अच्छा!

बहुत सुंदर, बहुत सुंदर है ये!

वो बंदिशें ऐसी हैं कि जो उस्ताद लोग वहाँ रायगढ़ में जाते थे तो राजा चक्रधर सिंह सुनते थे पहले लाइन वार। जैसे कल सुनाया, आप लोगों को दिया था, उसी हिसाब से; तो ये चुन-चुन करके बोल अपने लेखक के पास लिखवाते थे। जो उनको अच्छे जँच जाते थे, उनको राजा साहब उसके बाद में, लिखाने के बाद में फिर अपना बनाने के लिए कोशिश करते थे।

मैं एक बात पूछना चाहती हूँ केवल, ये सब बातें प्राय: पूछी नहीं जाती हैं, लेकिन मैं पूछूँ ?

जी!

जब उनका लिखना होता था तो वो जिस ढंग से आज खाली और ताली और नोटेशन के साथ, उसी ढंग से लिखा जाता था ?

जी हाँ!

या केवल बोल लिखा जाता था और उसके साथ इतना भर कि ये बराबर की लय में होगा या...?

जी हाँ, जी हाँ!

किस ढंग से लिखा जाता था, आप कहिए?

माने नोटेशन के साथ उनके दरबार में भी भातखंडे जी, उनकी विष्णु दिगम्बर जी की जो नोटेशन पद्धति है, इससे कहीं अलग उनकी नोटेशन पद्धति मैं देखा हूँ। उनकी कुछ और ढंग से है, जिसकी कॉपी तो मैं नहीं ले पाया, लेकिन उनका जो दिया हुआ है...

नहीं, जो आपको दिया होगा या ध्यान होगा ?

बराबर उनकी मात्राओं से और एक मात्रा में कितनी लाइन, रेखा होनी चाहिए। रेखा, दो मात्राओं में कितनी रेखा, होनी चाहिए, शास्त्रीय स्वरूप, पुराने ज़माने के शास्त्रीय स्वरूप के अनुसार उनका लघु रूप...

लघु रूप से...?

लघु रूप वगैरह सबका उन्होंने उपयोग किया है और बाकायदा मतलब उसको नोटेशन के साथ लिखा गया है।

मैं एक बात और जानना चाहती हूँ, क्योंकि मैंने कुछ, एक और महाराज के विशेषकर भावनगर महाराज के वो भी उसी समय के हैं...

जी!

उनकी ताल पद्धति और किस तरह से बंदिशें बनायी जाती थीं, उनकी एक पुस्तक मुझे देखने का मौका मिला तो उसमें वो एक चक्र करके...

बस उसी हिसाब से!

हुँ, और उसी में मात्राओं को दे के और उसमें फिर बोल की बंदिश, एक-एक वृत्त के जो भाग बनते थे उसके अंदर लिखी जाती थीं और फिर जैसे चक्करदार टुकड़ा है तो वो अंदर के वृत्त में लिखा जाएगा - एक पहला आवर्त्त, उसका फिर दूसरा बाहर वाले में और तीसरे में उस काल का जो ध्यान है कि वो इस ढंग से कि एक तो तिहाई की बात हो जाती थी, क्योंकि तीन में वो लिखा गया ?

प्रमाण तो सही है वो।

तो मैं ये जानना चाह रही थी कि क्या यही पद्धति दरबार में भी थी या नहीं ?

जी ऐसे ही।

रायगढ़ दरबार में तालों की जो है निधि, जो पुस्तक तैयार की गई, उसमें खाली ताल की रचना है...

जी!

जो ताल की रचना में खाली चक्र के आधार पर की गई है...

हाँ!

और विलम्बित, द्रुत, मध्य लय, इस तरीक़े से अपने अलग-अलग ढंग से ताल चक्र के अनुसार लिखी गयी है। तो सोलह मात्राओं में कितने ताल, आठ में कितने ताल होंगे ? यह सब वहाँ खोज किया जाता था दरबार में। एक मात्रा से लेके 372 मात्रा तक की ताल की रचना की गई है...

ठीक है, वो तो होगी ही, एक से 372।

और तीन पद्धति - एक से 180,180 और 360 (हँसते हुए) और उसका जो गणित है, उसका मुझे जो मतलब प्रमाण मिला है, तो मुझे ये लगा कि ये तो मैंने नहीं देखा है। तो यही जानना चाहती थी?

इसी तरह से सिखाया जाता है।

ग्रन्थों में जो लिखा गया है, जो आप लोगों को बताया गया है, उसमें खाली बोलों को लिखा गया है और नोटेशन के आधार पर लिखा गया है। इसके अलावा जो परनें हैं, ख़ास जिस ढंग से मतलब जैसे- बिजली परन है, बादल परन है, इसका उन्होंने उसमें अपना चित्र दर्शा के लिखा है। बड़ा-बड़ा हाथी उसमें बना है, गज-परन लिखे हैं तो, पूँछ से शुरू किया, सूँड पे खत्म हुआ बोल, ऐसा चित्र बना हुआ है तालबद्ध।

दूसरे को बतलाने से तो बहनजी पता लगेगा, कितने दम हैं, कितने क्या हैं, कहाँ पर कितनी मात्रा हैं ?

जी हाँ!

जी, तब उसी से वो दूसरे विद्यार्थी सीख सकेंगे।

हाँ, क्योंकि जो बंदिश बनाना, एक तो जो टुकड़ा रटना होता है...

जी हाँ, और वैसे...

और एक बंदिश बनाना जो चीज़ होती है, वो बिल्कुल अलग चीज़ होती है.... (हँसने की आवाज़)

जी हाँ, और नहीं हो सकता है, तो विद्यार्थियों को रटवाना पड़ेगा, सिखाना पड़ेगा, यहाँ इतने दम हैं।

नहीं, लेकिन आप लोगों की जो तालीम हुई, वो तो बंदिश की तालीम हुई, रटने की तालीम नहीं हुई?

जी नहीं।
तभी तो उसका.... पल्ला के बारे में, चक्करदार का पल्ला कितने मात्रा का होता है, बेदम का कितना होता है, दमदार का ये कितने मात्रा का होता है ?

एक पल्ला 10 में गिरेगा वो भी होगा। दूसरा चक्करदार बड़ा रहेगा, 14 में गिरेगा वो भी चक्करदार बन जाएगा, अच्छा, 11 में गिरेगा, वो भी चक्करदार बन जाएगा।

उसका एक किसी का उदाहरण देते ?

हँसते हुए जी! धा धान... (पढ़कर सुनाते हैं।)

बहुत सुंदर, बहुत बढ़िया! अच्छा अब आप एक और कल आपने चक्रधर सिंह जी की कुछ चीज़ें बताई थीं ?

जी, अच्छा !

उनकी भी पढ़ंत कीजिए ?

जी ! धा कृत... (पढ़कर सुनाते हैं।)
ये पल्ला 10 में गिरा तो ये चक्करदार बन जाएगा, 16 मात्रा में...

जी हाँ !

(पढ़त आरम्भ) ये भी चक्करदार बन गया। तो इस चक्करदार का मतलब कैसा है, अभी इसको कौन-सी ताल में हम लोग ला सकते हैं, यही चीज़ है।

जी ठीक, कौन-सी ताल में ला सकते हैं ?

जी अच्छा, तो 14 में इसको पढ़ा दूँ चक्करदार ?

जी !

(पढ़ंत आरम्भ)... धीं धीं धागे तिरकिट तू ना क त्ता धागे तिरकिट धी ना धी ना, ये आड़ा चौताला हो गया।

ठीक है।

पढ़ंत के धे ते...ये धमार हो गया अच्छा तो आड़ा चौताला का ठेका यही है – धीं धीं...पढ़कर सुनाते हैं।

जी ठीक है, बहुत सही, बहुत बढ़िया !

तीन ताल में भी आयी और इसमें भी आयी बंदिश – (पढंत...)।

बहुत सुंदर! जी अब मैं ये चाहूँगी कि...

ये बंदिश जो है राजा चक्रधर सिंह...

अच्छा, कि कुछ जो आपने राजा साहब के कल बोल भी...उनका अंदाज...?
अच्छा, ये प्रमृकंद ध्वनि सुना रहा हूँ–

इस बोल में ख़ासकर कि महाराज साहब चक्रधर सिंह जी का नाम आया है। आख़िरी में चक्र पिया सुनाएगा ?

'झम-झम पानी भरत थी पनिहारिन झकझोर'।

हाँ बहुत सुन्दर ! अमृतध्वनि है ये। एक बात ये पूछनी थी, महाराज चक्रधर सिंह, जो कि अच्छन महाराज, जयलाल जी वगैरह के ऊपर जोड़े बनाते थे, आपने बताया, बनाने के बाद उन महाराजाओं को सुनाते थे ?
जी हाँ !

ख़ुद सुनाके उनसे वो मान लेते थे उसको ?

जी हाँ।

गुरु लोग मान लेते थे उनको ?

गुरु लोगों को मानना पड़ता था।

अच्छा, एक चीज़ आप इसके बाद अवश्य सुनाइएगा, वो भाव में ?

जी हाँ!

ठुमरी, भजन जो भी आपको याद हो, उस ढंग से ? उसमें भी अगर दोनों घरानों का कोई अंतर हो या जो है...?

जी !

और उसके बाद जब फ़िल्म करेंगे तो मैं चाहूँगी कि उन्हीं चीज़ों को आप करके भी दिखाएँ...?

ज़रूर !

और फ़िल्म में भी, जो अभी आपने की है आमद और परन की पढ़ंत...., उनको अगर आप अंग से भी दिखा देंगे...., कल बहुत सुन्दर था, तो बहुत अच्छा रहेगा?

ज़रूर !

साभार : संगीत नाटक अकादेमी अभिलेखागार में संरक्षित रेकॉर्डिंग से प्रस्तुत। तिथि : 29.6.1963, समयावधि : 57 मिनट 6 सेकेण्ड, टेप-संख्या : 1-194 से 196।

गुरू कार्तिक राम : (1910-1980) जयपुर कथक घराने के वरिष्ठ कथक नर्तक। विभिन्न कालखण्डों में आपकी नृत्य की तालीम कई स्वनामधन्य गुरूओं के माध्यम से सम्पन्न हुई, जिनमें शिवनारायण, जयलाल जी महाराज, अच्छन महाराज, शिवलाल और मोहनलाल के नाम प्रमुख हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के तीस के दशक में आपने कई महत्त्वपूर्ण अखिल भारतीय संगीत सम्मेलनों में शिरकत की। बाद के वर्षों में एक मूर्धन्य नृत्यकार के रूप में आपकी प्रस्तुतियों को काफ़ी प्रसिद्धि मिली।

डॉ. कपिला वात्स्यायन : (1928-) विगत साठ वर्षों से भारतीय कलाओं के क्षेत्र में कार्यरत कला-विदुषी। आपने मणिपुरी और कथक जैसी नृत्य-विधाओं की भी दीक्षा ली है, जिसमें मणिपुरी के लिए गुरू अमोबी सिंह और कथक के लिए गुरू अच्छन महाराज के नाम प्रमुख हैं। आपका शैक्षणिक विकास संस्कृति और इतिहास के गहन जानकार डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल के अधीन हुआ। वासुदेव जी की शिष्या के रूप में कपिला वात्स्यायन ने भारतीय संस्कृति के मूलभूत सिद्धान्तों और कलाओं की आन्तरिक पारस्परिकता के सन्दर्भ में एक नयी दृष्टि अर्जित की। इसके चलते डॉ. कपिला वात्स्यायन के तमाम कार्यों, जिसमें कला, संगीत, संस्कृति, प्राच्य विद्या और लोक कला जैसे कई क्षेत्र शामिल हैं- शोध और सम्पादन की दृष्टि से असाधारण काम संपादित हुए। 'गीत-गोविन्द' और भरत के 'नाट्य-शास्त्र' पर आपके शोधपरक लेखन और 'कला-तत्त्व कोष' जैसे सम्पादित ग्रन्थ ऐतिहासिक महत्त्व रखते हैं। संगीत नाटक अकादेमी के लिए भी आपने समय-समय पर कई महत्त्वपूर्ण कार्य किये, जिसमें 'क्लासिकल इण्डियन डांस इन लिटरेचर एण्ड आर्ट्स' के सम्पादन का कार्य स्थायी महत्त्व का है। आपको देश-विदेश के कई पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है, जिनमें 'राजीव गाँधी राष्ट्रीय सद्भावना पुरस्कार', 'संगीत नाटक अकादेमी फेलो' (1970) और भारत सरकार द्वारा दिया जाने वाला 'पद्म विभूषण' सम्मान प्रमुख हैं।

संगना

संगीत नाटक अकादेमी की त्रैमासिक पत्रिका
रवीन्द्र भवन, फिरोज़शाह रोड
नई दिल्ली - 110001
दूरभाष : 23387246, 23387248 (एक्सटेंशन : 136, 122)
ई-मेल : mail@sangeetnatak.gov.in
वेबसाइट : http://www.sangeetnatak.gov.in

संगना वस्तुत: संगीत, नृत्य एवं नाटक पर केन्द्रित त्रैमासिक पत्रिका है, जिसका प्रकाशन संगीत नाटक अकादेमी (संगीत, नृत्य एवं नाटक की राष्ट्रीय अकादेमी) द्वारा किया जाता है। इस पत्रिका में मुख्यत: भारत की विभिन्न प्रदर्शन-कलाओं पर आधारित लेखों का प्रकाशन होता है, यद्यपि समय-समय पर इसमें विदेशों में प्रचलित ऐसी कला-विधाओं, जिनका सम्बन्ध भारतीय कला-विधाओं से भी जुड़ता हो, पर आधारित लेख भी प्रकाशित किए जाते हैं।

पत्रिका की सदस्यता

संगना के एक वर्ष (4 अंक) के लिए ग्राहक शुल्क 400 रुपये है। तीन वर्ष (12 अंक) की सदस्यता लेने पर देय शुल्क 1000 रुपये है, जबकि पाँच वर्ष की सदस्यता हेतु निर्धारित शुल्क 1500 रुपये है। संगना का नियमित (वार्षिक/त्रैवार्षिक/पंचवर्षीय) ग्राहक बनने हेतु 400/1000/1500 रुपये का डिमांड ड्राफ्ट/बैंक ड्राफ्ट/चेक भेजें जो कि **सचिव, संगीत नाटक अकादेमी, नई दिल्ली** के नाम देय हो।

नाम : ....

पता : ....

....

....

....

दूरभाष : ....

ईमेल : ....

सदस्यता हेतु चेक/ड्राफ्ट भेजने का पता है :

सम्पादक,
संगना, संगीत नाटक अकादेमी
रवीन्द्र भवन, 35 फिरोज़शाह रोड, नई दिल्ली-110001

आप चाहें तो सदस्यता शुल्क का भुगतान ऑनलाइन बैंकिंग के माध्यम से भी कर सकते हैं। इस हेतु आवश्यक विवरण निम्न है :

संगीत नाटक अकादेमी

खाता संख्या: 18250110003763

बैंक का नाम एवं पता : यूको बैंक, 35 फिरोज़शाह रोड, नई दिल्ली-110001

IFSC कोड : UCBA0001825

कला विभूतियों की जन्म-शताब्दी पर

संगीत नाटक अकादेमी, नयी दिल्ली की प्रणति

1917 - 2017

मौलिना देवी
(अभिनय)

टी. के. महालिंगम पिल्लै
(भरतनाट्यम)

करमतुल्लाह ख़ान
(वाद्य संगीत : तबला)

शांता गांधी
(निर्देशन)